CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पं. भोजराज द्विवेदी

मंत्र शक्ति और साधना

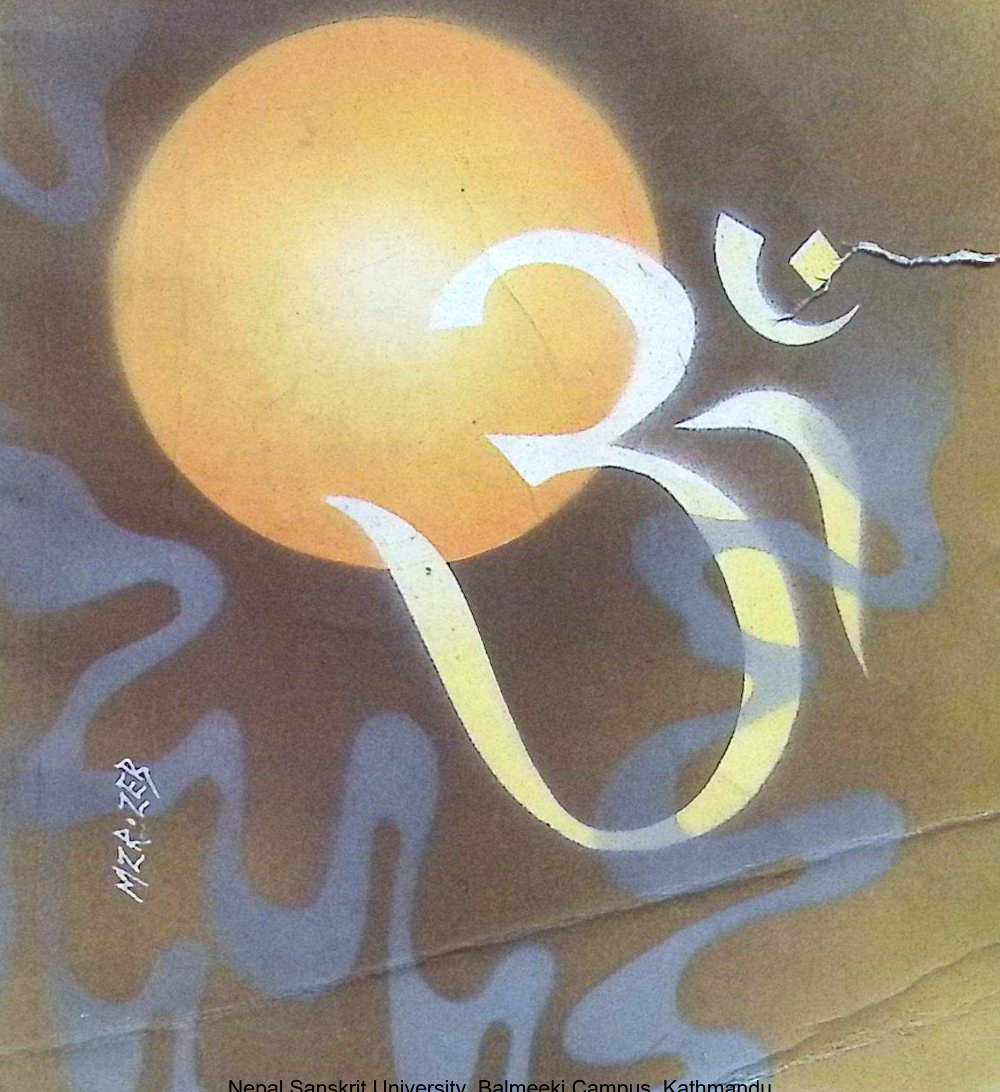

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तन्त्र १६४

ॐ

मन्त्र-शक्ति और साधना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा०) लि०

द्वारा प्रकाशित

डॉ० भोजराज द्विवेदी की अनुपम पुस्तकें

सम्पूर्ण वास्तुशास्त्र—हिंदी संस्करण	100.00
सम्पूर्ण वास्तुशास्त्र—अंग्रेज़ी संस्करण	150.00
कमर्शियल वास्तु—हिंदी संस्करण	120.00
कमर्शियल वास्तु—अंग्रेज़ी संस्करण	150.00
पर्यावरण और वास्तु—हिंदी संस्करण	120.00
पर्यावरण और वास्तु—अंग्रेज़ी संस्करण	150.00
स्टॅडी ओफ ऑमेन्स—अंग्रेज़ी संस्करण	60.00
वक्री ग्रह	25.00
अनुभूत यंत्र, मंत्र, तंत्र और टोटके	100.00
अपनी जन्म पत्रिका आप बनाएं	35.00
ज्योतिष प्रश्नोत्तरी	25.00
ज्योतिष में भवन, वाहन और कीर्ति योग	40.00
ज्योतिष और धनयोग	40.00
ज्योतिष और राजयोग	40.00
ज्योतिष और विवाहयोग	40.00
ज्योतिष और आयुष्य योग	40.00
ज्योतिष और रोग विचार	40.00
ज्योतिष और संतानयोग	40.00
मंत्र शक्ति और साधना	60.00
तंत्र शक्ति और साधना	60.00
यंत्र शक्ति और साधना	60.00
वृहद् हस्त रेखा विज्ञान	60.00
सम्पूर्ण हिप्नोटिज़्म (सम्मोहन विज्ञान)	60.00
सस्वर रुद्राभिषेक प्रयोग : एक मीमांसा	50.00

प्रकाशक

डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा०) लि०

X-30, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फ़ेस-2, नई दिल्ली—110 020

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्त्र-शक्ति और साधना

लेखक

श्रीमाली कुलकमलदिवाकर, वेदिया कुलभूषण, प्राच्यविद्या महामहोपाध्याय

भारत के राष्ट्रपति द्वारा स्वर्णपदक, अंगवस्त्रम् से सम्मानित

दैवज्ञ शिरोमणि डॉ. भोजराज द्विवेदी

एम०ए० संस्कृत (दर्शन), पी०एच०डी० (ज्योतिष), लब्ध स्वर्णपदक

प्रधान संपादक— 'अज्ञातदर्शन' व "श्रीचण्डमार्तण्ड पंचांग"

प्रथम बी रोड, सरदारपुरा, जोधपुर

फोन—0291–31883

फेक्स—0291–49093

सह-संपादक

पं० रमेश द्विवेदी एम० ए० पूर्वार्द्ध (संस्कृत)

संपादक— श्रीमाली प्रदीप पाक्षिक

डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.

X-30, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फ़ेस-2,

नई दिल्ली-110 020

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

डायमंड पाकेट बुक्स में

डॉ. भोजराज द्विवेदी की वास्तुकला पर अनुपम पुस्तकें

सम्पूर्ण वास्तुशास्त्र	**100.00**
कमर्शियल वास्तुशास्त्र	**120.00**
पर्यावरण वास्तु	**120.00**

हिंदी व अंग्रेज़ी में उपलब्ध

© प्रकाशकाधीन

प्रकाशक :
डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि.
एक्स-30, ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, फ़ेस-2
नई दिल्ली-110 020
फोन : (011) 6822803; 6822804; 6841033

वितरक :
पंजाबी पुस्तक भंडार
257, दरीबा कलां, दिल्ली-110 006

संस्करण : 1998

मूल्य : रु० 50.00

स्पेशल इफेक्ट्स :
ग्राफ़िक्स बी, मेरठ-250 005

प्रिंटर्स :
आदर्श प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-110032

Acc. 22655 / 22789

MANTRA SHAKTI AUR SADHANA – Dr. BHOJ RAJ DWIVEDI

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

964

अनुक्रमणिका

मंत्र की परिभाषा तथा महत्त्व	9
मंत्र : चैतन्य शब्दपुंज	18
मंत्र विद्या	26
पूजा क्या है	45
वैदिक मंत्रोच्चार एवं स्वर परिचय	54
रुद्राभिषेक पुष्य-नक्षत्र को ही क्यों	58
चमत्कारिक महामृत्युंजय जप	64
माला, उसका महत्त्व एवं संस्कार	69
मंत्र साधना में गुरु का स्थान	74
महाशक्ति गायत्री और उसकी साधना	110
सिद्ध सरस्वती साधना	127
महालक्ष्मी और साधना	135
इन्द्रकृत—चमत्कारी महालक्ष्म्यष्टक	141
लक्ष्मी-प्राप्ति का साधन : कनकधारा स्तोत्र	149
आत्म-रक्षा हेतु दैवी कवच	156
श्री दुर्गा चालीसा	165
संतानगोपाल साधना	169
अपराजिता स्तोत्रम्	179
आदित्य-हृदय-स्तोत्र	185
गजेन्द्र मोक्ष	192
महान् सिद्धिदायक शक्रादय: स्तुति	200

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुस्तक के बारे में

विश्व की प्रत्येक भाषा एवं साहित्य ने मंत्र, स्तोत्र एवं प्रार्थनाओं की अलौकिक शक्ति और चमत्कार को एकमत से स्वीकारा है । अक्षर, ध्वनि और शब्द संयोजन की त्रिगुणात्मक शक्ति से मंत्र का उद्‌भव होता है । प्रस्तुत पुस्तक में मंत्र की परिभाषा तथा उसके महत्व पर व्यापक प्रकाश डाला गया है । साथ ही मंत्रों में छिपे ध्वनि के वैज्ञानिक रहस्यों को प्रकट करते हुए वैदिक स्वरों का विस्तार से परिचय दिया गया है । हमारे संस्थान द्वारा संचालित 'मंत्र विद्या विशारद' एवं 'मंत्र मार्तण्ड' के पाठ्यक्रम में समझायी गयी मंत्र-तंत्र संबंधी प्रश्नोत्तरी को भी ज्यों का त्यों प्रस्तुत किया है ताकि आम पाठक भी मंत्र विद्या संबंधी गूढ़ रहस्यों को आसानी से समझ सकें ।

किसी भी प्रकार की मंत्र साधना प्रारंभ करने के लिए गुरु की आवश्यकता होती है । मनुष्य को अपने जीवन में एक ही गुरु से संपूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं होता । भगवान् दत्तात्रेय ने अपने जीवन में 24 गुरु बनाए । मंत्र साधना में गुरु का क्या स्थान एवं महत्त्व है, इस पर भी इस पुस्तक में व्यापक जानकारी दी गई है । इसके पश्चात् इसी क्रम में महाशक्ति गायत्री एवं उसकी साधना पर व्यापक प्रकाश डाला गया है । गायत्री के पश्चात् सरस्वती एवं नील सरस्वती पर प्रयोग दिये गए हैं ।

इस आर्थिक युग में सभी को लक्ष्मी की आवश्यकता रहती है । फलतः महालक्ष्मी साधना के अन्तर्गत 'श्री सूक्त' 'कनकधारा स्तोत्र' 'वेदोक्त लक्ष्मीसूक्त' एवं महालक्ष्म्याष्टक स्तोत्र भी दिए गए हैं ।

भूत-प्रेत पिशाच, राक्षस, खबीस, जिन्न, नजर, टोकार इत्यादि से बचने के लिए दैवीय कवच को संपूर्ण विधान के साथ दिया गया है । संस्कृत न जानने वाले लोगों के लिए, इसका हिन्दी अनुवाद व दुर्गा चालीसा भी साथ-साथ दे दिए गए हैं । इसी अवतरण में महान् सिद्धिदायक राक्रदय स्तुति को पूर्ण विधान के साथ दिया गया है । दुःस्वप्न, श्राप, एवं अशुभ की आशंका की निवृत्ति हेतु इस पुस्तक के माध्यम से 'अपराजिता स्तोत्र' पहली बार प्रकट हुआ है । आत्मविश्वास की वृद्धि हेतु एवं सूर्य उपासना के निमित्त अमोघ फलदायी आदित्य हृदय स्तोत्र एवं संकट के समय प्राणों की रक्षा करने वाला 'गजेन्द्र मोक्ष' जैसे स्तोत्र को देने से पुस्तक का महत्त्व कई गुना बढ़ गया है ।

इस कलिकाल में अनेक ऐसे उदाहरण भी आते हैं कि पूर्व जन्म कृत दोष व पाप के कारण इस जन्म में अनेक उपाय करने पर भी संतान नहीं हो रही है । उनके लिए भी इस पुस्तक में संतान गोपाल साधना को उद्‌घाटित किया गया है । संतान गोपाल स्त्रोत भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आजकल कहीं मिलता नहीं है। अत: इस पुस्तक में उसे प्रकाशित करके प्रकाश्य विभाग ने एक प्रकार से पुण्य का ही कार्य किया है। अंत में मैं डायमंड पाकेट बुक्स के निदेशक श्री नरेन्द्र कुमार का अत्यधिक आभारी हूं जिन्होंने इस अतिगोपनीय व दुर्लभ मंत्र विद्या को जन-जन तक पहुंचाने का दृढ़ संकल्प लिया व इतने सुंदर ढंग से पुस्तक प्रकाशित करके आम पाठकों तक पहुंचायी।

इस पुस्तक को पढ़ने के पश्चात् खास व आम पाठक के मन में अनेक प्रकार की जिज्ञासाएं एवं शंकाएं स्वाभाविक रूप से उठेंगी। मेरा प्रयत्न रहेगा कि इस पुस्तक के सभी प्रबुद्ध पाठकों की जिज्ञासाओं का समाधान कर सकूं। हज़ारों की संख्या में इस विषय में पत्र प्राप्त होते हैं। सभी पत्रों का जवाब दे पाना संभव भी नहीं है। अत: जवाबी लिफाफे सहित सही, जिज्ञासु एवं सटीक प्रश्न का समाधान मैं अवश्य करूंगा। आप अधोलिखित पतों पर मुझसे सम्पर्क कर सकते हैं।

—पं. भोजराज द्विवेदी

निवास :—
पं. भोजराज द्विवेदी
1st बी रोड, गोलबिल्डिंग के पीछे,
सरदारपुरा, जोधपुर।
फोन-(0291)31883, फैक्स-49093

साधना स्थल :—
श्री विद्या यंत्र-मंत्र-तंत्र साधना पीठ,
उदय पेट्रोल पम्प के पास,
मुख्य मार्ग, पाली मार्ग, कुंडी
भगतासनी, जोधपुर। पिन-342 007

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मंत्र की परिभाषा तथा महत्त्व

विभिन्न स्वरों, व्यंजनों, शब्दों से विभिन्न सुर निकलते हैं, इन सुरों से एक नादशक्ति बनती है। विभिन्न नाद शक्तियों का पृथक-पृथक प्रभाव होता है उससे एक वातावरण बनता है जिससे शरीर, मन, मस्तिष्क तथा वाणी आदि पर प्रभाव पड़ता है। अत: विभिन्न कामनाओं, कार्यों के निमित्त विभिन्न प्रकार के मंत्रों का सृजन किया जाता है। जैसे रेडियो टी० वी० आदि से हास्यजनक प्रसारणों को देख व सुनकर मन प्रफुल्लित एवं आनंदित होता है और वीभत्स एवं भयकारक शब्दों के निरन्तर प्रसारण व सुनने से भय का वातावरण बनता है, इसी प्रकार विभिन्न मंत्रों के निरन्तर पाठ व जप से एक शक्ति का निर्माण होतां है।

मंत्र क्या है ? विभिन्न तंत्र ग्रंथों में इसकी व्याख्या इस प्रकार है :—

मननं विश्व विज्ञानं त्राणं संसार बंधनात्।
यत: करोति संसिद्धो मंत्र इत्युच्यते तत: ॥

—*पिंगलामते।*

मननात्त्राणणाच्चैवमद्रूपस्यावबोधनात्।
मंत्र इत्युच्यते सम्यक् मदधिष्ठानत: प्रिये।

—*रुद्रयामले।*

गुप्तोपदेशतो मंत्री मननात्राणनादपि।

—*तंत्रान्तरे।*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थात् समस्त ज्ञान को देने वाला और सांसारिक बंधनों से मुक्त करने वाला, उपास्य देव के रूप में निरन्तर मनन एवं स्मरण करने योग्य शब्द ही मंत्र है । अर्थात् मकार से मनन, त्रकार से त्राण अर्थात रक्षा । तात्पर्य यह है कि जिसके मनन (जप) से कार्य सिद्धि और रक्षा होती है वही मंत्र है ।

वास्तव में 'मंत्र' की ध्वनि का कंपन रेडियो तरंगों के समान है, जिससे निरन्तर उच्चारण से एक दिव्यशक्ति का निर्माण होता है जो साधक और उपास्य में परस्पर सम्पर्क स्थापित करने में सहायक होती है। यही दिव्य शक्ति साधक के मस्तिष्क में अतीन्द्रिय शक्तियों का द्वार खोलने में सहायक है । पात्रंजल योगसूत्र के अनुसार विभिन्न मंत्रों का विधि पूर्वक जप करने से देवता (उपास्य) के साथ वार्तालापादि व्यवहार की सिद्धि व साक्षात्कार होता है—

'स्वाध्यायादिष्ट देवतासं प्रयोगः' (2 / 44)

इसी प्रकार 'बह्मसूत्र' के 'भावंतु बादरायणोऽस्ति' की व्याख्या करते हुए शंकराचार्य (शांकरभाष्य) जी ने भी ऐसी सिद्धि की तुलना व्यास आदि के उस सामर्थ्य एवं दिव्य दृष्टि से की है—वे उपास्य देवों से प्रत्यक्ष व्यवहार करते थे जिसके कारण वे भूत, भविष्य और वर्तमान (त्रिकाल) की घटनाओं से परिचित थे ।

श्री हेमचन्द्राचार्य का कथन है—

तन्मन्त्राद्यषडक्षीणं यत्तृतीयाद्यगोचरम् ।
रहस्यालोचनमंत्रोरहश्छन्नमुपह्वरम् ॥

अर्थात् जैसे राजनीति में विचारों को गुप्त रखकर शासन चलाया जाता है इसी कारण सत्ता संचालक को 'मंत्री' कहा जाता है ।

तंत्र शास्त्र में प्रत्येक स्वर और वर्ण का गूढ़ार्थ होता है, यदि तंत्रशास्त्र को देखा जाए तो इसका एक अलग ही शब्दकोश (डिक्शनरी) है, एक-एक स्वर और वर्ण में बड़े-बड़े शब्दों का अभिप्राय निहित होता है । जैसे सामान्य लेखन में बड़े-बड़े शब्द होते हैं और आशुलिपि (शार्ट हैण्ड) में एक शब्द मात्र एक रेखा के रूप में अंकित होता है । क्योंकि मंत्रों का अर्थ जन सामान्य से गूढ़ रहे और उसका आकार कम से कम हो ताकि मंत्रसाधना एवं जप—में कम समय लगे । कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :—

श्रीं = पद्मा लक्ष्मीर्हरिण्याक्षी सरोरुह निवासिनी ।
कमला रुक्मिणी चैव नारायणप्रियाऽपि च ॥
ह्रीं = पराभूतिस्तथा लज्जा मायाऽपि सकला कृशा ।
समस्तापि तथा क्षामा कृत्रिमाण्यपराणितु ॥
ॐ = प्रणवं च तथा तारं त्यक्षंतोमापि त्र्यम्वकः ।
त्रासतारव एतानि बीजानि प्रणवस्य च ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ठः = पयोजं पंकजं पद्ममंवुजं नीरजं तथा।
ठकारे पंच बीजानिह्यसत्यपराणि च॥
अ = मानसं च मनोबीजं पैतामहमितिस्मृतं।
अपरमनृतं ज्ञेयमकारस्य सुरेश्वरि॥
कं = ककारं च शिरोबीज मूर्ध्वबीजं च वारुणम्।
वेधोबीजं विधिब्रह्मास्वयंभूबीज मेवच॥
ओं = मोक्षबीज तथा मुक्तिर्ज्ञानं निर्वाण बीजकम्।
कु = कुः पृथ्वी कुः कुचः कूलं कू कृत्याभूरपिप्रहिः।
लं = तमो बीजं तथा ध्वान्तं मोह तिमिर मेवच।
शं = कल्याणं चैव शर्मापि शं शुभं च चतुष्टयं।
ञ = ञस्तु नासिकया भाषी वह्निरूपोभयानकः।
स्वरभेदक रोगश्च ञा जरा राशिरेवच॥

इस प्रकार प्रत्येक स्वर, वर्ण संयुक्ताक्षर आदि का गूढ़ अर्थ निहित है। स्वरों के चार भेद तंत्रशास्त्र में वर्णित है —

चतुर्धामातृकाप्रोक्ता केवला बिन्दुसंयुता।
सविसर्गा सोभया च रहस्यं श्रृणु कथ्यते।
विद्याकरी केवला च सोभया वृद्धिकारिणी।
सविसर्गापुत्रदा च सविन्दुर्वित्तदायिनी।
—तंत्रसार

अर्थात् केवल स्वर, बिंदुयुक्त, विसर्गयुक्त और बिंदु तथा विसर्ग दोनों से सहित। कामनाओं के अनुसार मंत्रों की रचना करते समय इनका विचार किया जाता है।

केवल स्वर विद्यादायक, बिन्दु अर्थात् अंकार युक्त धनदायक, विसर्गयुक्त पुत्रदायक और बिन्दु तथा विसर्ग दोनों से युक्त स्वर वृद्धिकारक होता है। जैसे लक्ष्मी का बीजमंत्र 'श्री' है, इसमें बिन्दु लगा देने से (श्रीं) यह वित्तदायक अधिक प्रभावकारी हो जाएगा। इसी प्रकार इसमें बिंदु व विसर्ग दोनों लगाकर (श्रीं:) धन में वृद्धिकारी रूप में भी जपा जा सकता है। यथा श्री = लक्ष्मी की प्राप्ति, श्रीं: = लक्ष्मी की प्राप्ति और उसमें वृद्धि।

सच कहें तो 'मंत्र' अनंत शक्ति के भंडार हैं। विभिन्न मंत्रों में विभिन्न देवताओं की शक्तियाँ गूढ़रूप से सन्निहित रहती हैं। जिस प्रकार किसी भी बीज में सूक्ष्म रूप से वृक्ष का सर्वांग (तना, शाखा, पत्ते, पुष्प, फल) छिपा रहता है जो प्रत्यक्ष देखने में नहीं आता लेकिन बीज बोने पर पूरा वृक्ष प्रकट हो जाता है। इसी प्रकार प्रत्येक मंत्र में उपास्य देवता बीज रूप में अदृश्य रूप से विद्यमान रहता है और उसके जप से उसके विराट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रूप का साक्षात्कार हो जाता है। इसी कारण यह 'बीजमंत्र' (ऐं, ह्रीं, क्लीं, श्रीं इत्यादि) भी कहलाते हैं।

मंत्रों का वर्गीकरण

मंत्रों का वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया जाता है। कामना विशेष के अनुसार तथा अन्य दृष्टियों से भी यह ज्ञान आवश्यक है।

मुख्य रूप से मंत्रों द्वारा नौ प्रकार के प्रयोग होते हैं—मारण, मोहन, वशीकरण, स्तंभन, उच्चाटन, आकर्षण, जृम्भण, और शान्तिक-पौष्टिक।

(अ) कामनानुसार—

(1) **परमार्थ मूलक मंत्र—** इस श्रेणी में वे मंत्र आते हैं जिनमें साधक की कोई सांसारिक कामना नहीं होती। साधक केवल अपने उपास्य का साक्षात्कार या मोक्ष की कामना रखता है और मंत्र के द्वारा केवल वन्दना मात्र करता है। जैसे षडक्षर मंत्र, द्वादाशाक्षर मंत्र आदि—

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय (भगवान वासुदेव को प्रणाम)।

ॐ नमः शिवाय (भगवान शिव को प्रणाम)।

'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे'

(महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती रूपी त्रिगुणात्मक शक्ति रूपा दुर्गा को प्रणाम)।

गायत्रीमंत्र आदि।

(2) **कामना मूलक मंत्र—** मनुष्य एक सांसारिक प्राणी है और उसकी विभिन्न कामनायें होती हैं। इन कामनाओं की पूर्ति हेतु जिन मंत्रों से उपासना की जाती है वे कामनामूलक मंत्र हैं। वेदों, पुराणों तथा तंत्रशास्त्रों, बौद्ध व जैन तंत्रों में भी इस प्रकार के मंत्रों का ही बाहुल्य है। जैसे—विघ्ननिवारण, दीर्घायुकारक, दुःस्वप्न का कुप्रभाव नाशक, व्यवसाय में उन्नति, धन की प्राप्ति, सन्तान प्राप्ति, सुखपूर्वक प्रसव, गर्भपात से रक्षा, बुद्धि में सुधार, परीक्षा में सफलता, पदलाभ, कृषिसम्पदा में वृद्धि, शत्रुपराजय, न्यायालय में विजय, अल्पमृत्यु से रक्षा, चोरों से रक्षा, दुर्घटनादि से रक्षा, पशुओं से रक्षा, रोगशांति आदि सैकड़ों कामनायें हैं। यह मंत्र शांतिक-पौष्टिक कहे जाते हैं।

(3) **अभिचार मूलक कर्म—**ऐसे मंत्र जो किसी को हानि पहुंचाने या किसी का अहित करने के उद्देश्य से किये जाते हैं। प्रायः तामसी एवं वाममार्गी साधना में ही ऐसे मंत्र अधिक हैं।यह प्रयोग 'षट्कर्म' के नाम से प्रसिद्ध है।

मारण— किसी व्यक्ति की मृत्यु की कामना से अनुष्ठान करना मारणकर्म है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मोहन— किसी की बुद्धि को मोहित (भ्रमित) कर, उसे शारीरिक कष्ट, मानसिक कष्ट, आर्थिक कष्ट देना या उसकी भ्रमित बुद्धि से अनुचित लाभ उठाना ।

वशीकरण— किसी व्यक्ति को मंत्र से वश में करके अनुचित लाभ उठाना, किसी स्त्री को वश में कर व्यभिचार करना आदि ।

स्तंभन— किसी वस्तु को रोकने के हेतु मंत्र का प्रयोग । जैसे शत्रु सेना को रोकना, बादलों को रोकना, चोर, डाकू, शत्रु आदि को रोकना इत्यादि ।

उच्चाटन— मंत्र शक्ति के द्वारा किसी की मानसिक व मस्तिष्क की शांति भंग करना । विक्षिप्त करना ।

आकर्षण— मंत्र शक्ति के द्वारा किसी वस्तु या व्यक्ति का आवाह्न । अर्थात् ऐसी क्रिया जिससे व्यक्ति स्वयं खिंचता चला आए ।

विद्वेषण— परस्पर द्वेष उत्पन्न करना । मंत्र के द्वारा कोई दो व्यक्तियों, मित्रों, स्त्री-पुरुष, पुत्र-पिता, आदि में शत्रुता का भाव उत्पन्न करा देना ।

जृंभण— भय उत्पन्न कर किसी की वस्तु छीन लेना, हरण कर लेना, भयभीत करना जृंभण है ।

वैसे तो यह षट्कर्म तामसी तथा निंद्य हैं, लेकिन कभी-कभी इनका उपयोग समाज के हित में भी होता है । जैसे—किसी कारणवश पारिवारिकजन में मतभेद एवं वैमनस्य हो तो वशीकरण द्वारा शान्ति एवं सुखमय वातावरण की स्थापना । अथवा क्रोध में या किसी कारणवश कोई व्यक्ति कहीं चला गया हो (बिना सूचना के) उसे वापस बुलाने में आकर्षण मंत्र का प्रयोग । अतिवर्षा आदि के समय बादलों का स्तंभन । सूखा पड़ने पर बादलों का आकर्षण आदि । क्योंकि पूजा और उपासना भावना प्रधान है, तदानुसार ही उसका फल भी है अत: यदि जनहित की भावना से षट् कर्मों का प्रयोग करना पड़े तो वह तामसिक उपासना होते हुए भी निंदित नहीं कही जाएगी—

'भाव मिच्छति देवता:'

'मंत्रेतीर्थे द्विजे दैवे दैवज्ञे भेषजे गुरौ ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ॥'

(आ) शास्त्रीय पद्धतियों के अनुसार :

(1) **वैदिक एवं पौराणिक**—वे प्रयोग जो वेदों एवं पुराणों में उपलब्ध हैं । भगवान् मनु ने वेदोक्त मंत्रों को श्रेष्ठ माना है ।

(2) **तांत्रिक मंत्र**—वे मंत्र जो विभिन्न आगम ग्रंथों (तंत्र शास्त्रों) में वर्णित हैं ।

(3) **लौकिक**—इसमें वे मंत्र हैं जो सामान्य लोकभाषा में प्रचलित हैं । इनमें साबर मंत्र, गुरु गोरखनाथी व अन्यान्य मंत्र समाज में प्रचलित हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(इ) लिंग भेदानुसार—

मंत्रों को भी पुरुष मंत्र, स्त्री मंत्र और नपुंसक मंत्रों के रूप में वर्णित किया गया है। इस संबंध में अनेक मतमतांतर हैं—

(1) मंत्र के अंत में 'फट्'या 'वषट्' हो तो पुरुष, या 'स्वाहा' लगा हो तो स्त्री और 'हुं' या 'नमः' हो तो नपुंसक मंत्र कहा जाएगा।

(ई) अक्षर संख्यानुसार—

(1) जिस मंत्र में एक अक्षर हो 'पिण्ड'

(2) जिस मंत्र में दो अक्षर हों 'कर्तरी'

(3) जिसमें तीन अक्षर हों 'बीज मंत्र' जैसे ऐं, ह्रीं क्लीं, श्रीं आदि तीन अक्षरों के संयोग से बनते हैं। तीन से नौ अक्षरों तक जिसमें हों वह भी 'बीज मंत्र' कहे जाते हैं।

(4) जिस मंत्र में दस से लेकर बीस तक अक्षर हों वह 'मंत्र' कहा जाता है।

(5) यदि बीस से अधिक अक्षर हों तो वह 'माला मंत्र' कहा जाता है।

(उ) मंत्र और विद्या—

जिस मंत्र का अधिष्ठाता पुरुष देवता हो अर्थात् पुलिंग वाचक देवता से संबंधित मंत्र को 'मंत्र' और देवी से संबंधित मंत्र को 'विद्या' कहा जाता है।

मंत्र सिद्धि हेतु जप

प्रत्येक मंत्र कितनी संख्या में जप करने से सिद्ध होता है, यह मंत्र के साथ ही दिया रहता है 'कलौः संख्या चतुष्टयं' के अनुसार निर्धारित जप संख्या से कलियुग में चौगुना करना चाहिए।

एक मत यह भी है कि जितने अक्षर का मंत्र हो उतने ही लाख जपने से मंत्र सिद्ध होता है, यह मत तांत्रिक (आगमोक्त) मंत्रों, बीज मंत्रों के बारे में हो सकता है। लेकिन वैदिक मंत्रों के बारे में यह मत युक्ति संगत नहीं है।

मंत्रों के साथ बीज पल्लवों का प्रयोग

केवल मंत्र विशेष प्रभावी नहीं होते और प्रत्येक मंत्र के प्रारंभ में शिर (ॐ) और मंत्र के अन्त में पल्लव (नमः, स्वाहा, वौषट्, फट्, हुम् आदि) लगाकर जप या अनुष्ठान करने से यह अधिक प्रभावी होते हैं और कामधेनु के अनुसार फलदायक होते हैं—

मंत्रणां पल्लवो वासो मंत्राणां प्रणवः शिरः।
शिरः पल्लव संयुक्तो मंत्र कामदुधोभवेत्॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लेकिन वैदिक मंत्रों में बीज पल्लव लगाना आवश्यक नहीं है। वैदिक मंत्रों में मंत्र के ऋषि, छन्द, देवता तथा विनियोग का ज्ञान आवश्यक होता है—

आर्षं छन्दश्च दैवत्यं, विनियोगस्तथैवच।
वेदितव्यः प्रयत्नेन, ब्राह्मणेन विपश्चितः॥

तंत्रशास्त्र में विभिन्न मंत्रों में तथा वैदिक तांत्रिक न्यासों, मंत्रों में भी नमः, स्वाहा, वौषट् हुम् और फट् का प्रयोग होता है। विभिन्न कामनाओं के अनुसार भी मंत्र के अंत में इन शब्दों का प्रयोग होता है। मंत्र जप से पहले न्यास किये जाते हैं। इनका भावार्थ इस प्रकार है :—

नमः = झुकना, नमस्कार करना।

स्वाहा = के अनेक अर्थ हैं। यह ह्वे तथा स्वाद धातु से बना है। बुलाना, आवाहन करना, स्वाद लेना आदि अभिप्राय है।

वषट या वौषट् = पहुंचाना।

हुम् = देना, खाना यह सामान्य अर्थ है। यह शब्द प्रश्न, संदेह, सम्मति, क्रोध, भय, निन्द्रा, अनादर आदि हेतु प्रयुक्त होता है।

फट् = इसका सामान्य अर्थ तोड़ना, खण्डित करना, भगाना, अनुकरण करना, विघ्नबाधा हटाना, पापों को भगाने आदि में प्रयुक्त होता है।

न्यासों में इनका अर्थ इस प्रकार है :—

(1) हृदयायनमः/अंगुष्ठाभ्यो नमः (हृदय को नमस्कार, हृदय में विराजमान परमात्मा को नमस्कार, अंगुष्ठरूप परमात्मा को नमस्कार, देखें गीता— 'अंगुष्ठमात्र पुरुषः', जीवात्मा का स्वरूप अंगुष्ठ के बराबर है।)

(2) शिरसे स्वाहा (उपास्य देवता का आवाह्न करना और शिर में प्रतिष्ठापित करना)।

(3) शिखायै वषट् (शिखा संदेश वाहक है, उपास्य देवता को संदेश देना।)

(4) कवचाय हुम् (प्रश्न, तर्क-वितर्क, भय, अवज्ञा, निन्दा आदि से रक्षार्थ। जिस प्रकार कवच धारण करने से शस्त्रों से रक्षा होती है, वैसे ही इस न्यास से रक्षा होती है।)

(5) नेत्र त्रयाय वौषट् (तीनों नेत्रों द्वारा उपास्य देवता तक अपना अभिप्राय संदेश पहुंचाना, उपास्य देवता का साक्षात्कार करना। ज्ञातव्य है कि दो नेत्रों के बीच में तीसरे दिव्य नेत्र की कल्पना भारतीय उपासना में है। सिद्धि मिलने पर इसी तीसरे नेत्र से साधक तीनों कालों की घटनाओं को देख सकता है। दिव्य दृष्टि

1. देखें—वाचस्पत्य वृहदभिधानम्।
2. देखें—महानिर्वाण तंत्र, मंत्र महोदधि।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्राप्त होती है ।)[1]

(6) अस्त्रायफट् (शारीरिक तथा मानसिक पापों का स्मरण करते हुए, अस्त्र मुद्रा से उनका निराकरण । पापों को विघ्नबाधाओं, भूत-प्रेतों को प्रताड़ित कराना, भगाना) ।

खट्, फट्, जहि, द्विन्धि, भिन्धि, हन्धी, कट्, यह क्रूर वचन हैं जो मारण आदि में प्रयुक्त होते हैं । दूसरे को डराने, मारने, काटने, तोड़ने के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं ।[2]

इस प्रकार सामान्य उपासना में न्यास के द्वारा इन शब्दों से उपास्य की वंदना, आवाह्न, संदेश वाहन; विघ्नबाधाओं से रक्षा और उनका प्रताड़न करना ही है ।

तांत्रिक प्रयोगों में विभिन्न कामना के अनुसार विभिन्न मंत्रों में इनका प्रयोग निम्नवत् होता है :—

वश्याकर्षण सन्तापे होमे 'स्वाहा' प्रयोजयेत् ।
क्रोधोपशमने शान्तौ पूजने च 'नमो' बदेत् ॥
'वौषट' सम्मोहनोद्दीप पुष्टि मृत्युजयेत् च ।
'हुंकार'. प्रीतिनाशे च छेदने मारणे तथा ॥
उच्चाटने च विद्वेषे तथा ऽधिविकृतौ च 'फट' ।
विघ्नग्रह विनाशे च हुँफट्कारं प्रयोजयेत् ॥
मंत्रोद्दीपन कार्ये च लाभालाभे वषट् स्मृतं ।
एवं कर्मानुरूपेण ततन्मंत्रं प्रयोजयेत् ।
नमोन्तमंत्रे देवेशि न नमो योजयेद्बुधः ॥
स्वाहान्तेऽपि तथा मंत्रे न दद्याद् वह्निबल्लभां ॥

अर्थात् वशीकरण, आकर्षण, किसी को संताप देने, के उद्देश्य से जो मंत्रानुष्ठान किया जाए उसके अंत में तथा हवन करते समय मंत्र के अंत में 'स्वाहा' शब्द प्रयोग करें (लेकिन जिस मंत्र के अंत में पहले से स्वाहा शब्द लगा हो, होम करते समय उसमें दुबारा स्वाहा न लगायें) । क्रोध आदि की शांति तथा अन्य कोई शांतिकर्म, पूजन, आदि में 'नमः' जोड़ना चाहिए (लेकिन जिस मंत्र के अंत में पहले से नमः लगा हो, पुनः नमः न जोड़ें) ।

सम्मोहन, उद्दीपन तथा पुष्टिकार्यों संबंधी मंत्रों के अंत में 'वौषट्' का प्रयोग करें ।

विद्वेषण, छेदन, मारण आदि में 'हुं' प्रयोग करें । उच्चाटन, विद्वेषण मानसिक विकृति के कर्मों में 'फट्' प्रयोग करें ।

विघ्नबाधाओं की शांति, ग्रहशांति आदि में 'हुं फट्' प्रयोग करें ।

---

1. हे देवि तेरे लिए वषटकार (कृष्णयजुर्वेद, काण्ड 4) । वज्ररूप वषटकार करने से राक्षस अनुष्ठान में विघ्न नहीं करते (माधवाचार्य; संध्यादर्पणे) ।
2. देखें—तैत्तरीय आरण्यक, 4 प्रपा० 27 अतु० और सायणाचार्य ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मंत्र की जागृति एवं उद्दीपन, लाभ आदि कर्मों में 'वषट्' प्रयोग करें ।

वैदिक मंत्रों में न्यास आवश्यक नहीं

वैदिक मंत्रों में चाहें तो षडंग आदि न्यास कर भी सकते हैं, न चाहें तो आवश्यक भी नहीं है, क्योंकि वेदोक्त मंत्रों में यह अनिवार्य नहीं है, यह बात 'गृह्य परिशिष्ट' में स्पष्ट है । अक्षरन्यास, पाद न्यास, मुद्राप्रदर्शन, शापमोचन आदि विविध नियम तंत्रशास्त्रोक्त हैं ।[1]

मंत्र के षट् रहस्य

किसी भी मंत्र का पाठ, जप या पुरश्चरण करने से पहले मंत्र के 6 रहस्यों का ज्ञान करना, जानना आवश्यक है । बिना इनके ज्ञान के जो कोई जप, यज्ञ, पाठ आदि किया जाता है वह निष्फल तथा आसुर भाव को प्राप्त होता है—

अविदित्वा ऋषिं छन्दो दैवतं विनियोगकं ।
योऽध्यापयेज्जपेद्वापि पापीयाज्जायते तु सः ।
ऋषिर्छन्दो दैवतानि ब्राह्मणार्थ स्वराद्यपि ।
अविदित्वा प्रयुंजानो मंत्रकष्टकमुच्यते ।। इत्यादि

मंत्र के छः अंग इस प्रकार हैं :—

(1) **ऋषि**— मंत्रद्रष्टा, मंत्र निर्माणकर्ता ऋषि का नाम ।
(2) **छंद**— मंत्र किस छंद में है, छंद का ज्ञान ।
(3) **देवता**— मंत्र किस देवता की उपासना से संबंधित है ।
(4) **विनियोग**— मंत्र का प्रयोग किस कार्य हेतु किया जाता है ।
(5) **शक्ति**— मंत्र की मूल शक्ति क्या है, अर्थात् बीजमंत्र क्या है ?
(6) **कीलक**— मंत्र कीलित है तो उसका उत्कीलन क्या है ?

जैसे श्री बटुक भैरव का मंत्र है—'ॐ'ह्रीं वंवटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं '।

इस मंत्र के वृहद्दारण्यक मंत्रदृषटा ऋषि हैं, मंत्र का अनुष्टुप छंद है, श्री बटुक भैरव देवता हैं, ह्रीं बीजमंत्र है, प्रणव (ॐ) कीलक है, 'वटुकाय' यह शक्ति है और आपदाओं के निवारण हेतु इस मंत्र का प्रयोग (विनियोग) होता है ।

---

1. देखें— धर्म सिन्धु सा० प० 3, पूर्वार्ध ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मंत्र : चैतन्य शब्दपुंज

'शब्दो नित्यः आकाशगुणत्वात्'

अर्थात् शब्द नित्य है, आकाश (आश्रय) गुण के कारण शब्द कभी मरता नहीं, मिटता नहीं, समाप्त नहीं होता इसमें विकृति नहीं आती, यह तो शाश्वत है, अजर है, अमर है। आज के वैज्ञानिक महर्षि जैमिनि की इस बात को मानने के लिए बाध्य हैं। रेडियो किरणों व बेतार के आविष्कारक मार्कोनी ने शायद महर्षि की इस बात को जड़ से पकड़ा होगा और उसी के माध्यम से हम हजारों मील दूर उच्चारित शब्द को ज्यों का त्यों (As it is) सुनते हैं, तत्काल सुन सकते हैं, तथा वर्षों बाद भी सुन सकते हैं, इससे प्रमाणित है कि शब्द कभी विकृत नहीं होते, कभी मरते नहीं। आकाश में प्रसारित ईथर-किरणों के माध्यम से शब्द प्रतिपल विचरित होते रहते हैं।

न्याय दर्शन के विद्वान् शब्द को प्रमाण मानते हैं। परंतु कौन से शब्द ? साधारण बोलचाल के शब्द नहीं, कौतुकवश, आनंदवश किया गया वाक्य विन्यास नहीं, दैनिक बोलचाल की भाषा नहीं ! न्यायदर्शनकार कहते हैं—आप्तवाक्यं शब्दः अर्थात् आप्तजनों के मुख से निश्रित वचन ही प्रमाण है। अब प्रश्न उठता है आप्त कौन ? आप्त वाक्य की व्याख्या बड़ी लंबी-चौड़ी है। संक्षिप्त में यह कहा जा सकता है। आकांक्षा, योग्यता और सन्निधि से युक्त पदों का समूह वाक्य कहलाता है और ये वाक्य लौकिक व वैदिक भेद से दो प्रकार के माने गए हैं। वैदिक वाक्य को ईश्वरीय वाणी के रूप में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मानकर उसे 'शब्द प्रमाण' के अंतर्गत स्वीकार किया है । यथा -'वैदिकमीश्वरोक्तत्वात् सर्वमेव प्रमाणम्' और ये ही वैदिक वाक्य वेदों में मंत्र रूप मुखरित हुए हैं । फलत: मंत्र स्वयं अपने आप में प्रमाण है । मंत्र शाश्वत है, अज़र है, अमर है, इस बात को किसी और ढंग से प्रमाणित करने की अलग से आवश्यकता नहीं रह जाती ।

मंत्र और उनका स्वरूप

मंत्र + अच् निर्मित 'मंत्र:' शब्द का अर्थ होता है 'किसी देवता को संबोधित किया गया वैदिक सूक्त या प्रार्थनापरक वेद मंत्र' । यही कारण है कि वेद से इतर प्रयुक्त आप्तवाक्यों जैसे (श्रीमद्भगवद्गीता इत्यादि) को मंत्र नहीं कहा जाता । प्रार्थना परक यजुस् जो कि किसी देवता को उद्दिष्ट करके बोला गया हो यथा (ॐ नम: शिवाय) इत्यादि भी मंत्रों की संख्या में आते हैं । कालांतर में अनेक प्रकार के तांत्रिक श्लोक जो कि विशिष्ट देवता को उद्देश्य करके बोले गए तथा विशेष चमत्कारिक शक्ति से संपन्न होने से, वे श्लोक भी 'मंत्र' कहलाने लगे ।

शाक्त और तांत्रिक संप्रदायों में प्रयुक्त अनेक सूक्ष्म रहस्यमय शब्द-खण्डों और अक्षरों को यथा 'ऐं ह्रीं क्लीं' को भी 'मंत्र' कहते हैं तथा विश्वास किया जाता है कि इन बीज मंत्रों से महान् शक्तियां और सिद्धियां प्राप्त होती हैं ।

वेदों में मंत्र को सर्वोच्च सत्ता एवं उन्हें ब्रह्म के समान माना है । आचार्य आपस्तम्ब कहते हैं 'मंत्रब्राह्मणयोवेदनामधेयम्' ।

शबर स्वामी अपने भाष्य में लिखते हैं—मंत्र वैशिष्टय क्या है ? जो शब्द राशि अलौकिक अर्थ प्रतीत कराती हो, जो नियत स्वर तथा वर्ण क्रम वैशिष्टय से युक्त हो और जिसे 'गुरुमुख से सुनने के पश्चात् शिष्य उच्चारण करता हो वे शब्द समूह ही मंत्र की श्रेणी में आते हैं ।

मंत्र की शक्ति व स्वरूप की व्याख्या करने पर कहा जा सकता है कि मंत्र नाश रहित हैं, मंत्र नित्य हैं, विभु हैं, सर्व व्यापक हैं, सूक्ष्म से सूक्ष्म हैं और सब भूतों की योनि हैं । जहां वाणी नहीं जा सकती, वहां मंत्र जाते हैं ।

मंत्र के भीतर ऐसी गूढ़ शक्ति छिपी है जो वाणी से प्रकाशित नहीं की जा सकती अपितु उस शक्ति से वाणी स्वयं प्रकाशित होती है । मंत्रशक्ति अनुभवगम्य है, जिसे कोई चर्मचक्षुओं द्वारा नहीं देख सकता वरन् इसकी सहायता से चर्मचक्षु दीप्तिमान होकर त्रिकालदर्शी हो जाते हैं । मंत्र आप्त वाक्यजन्य होते हुए भी इसकी शक्ति निर्वचनीय व शब्दातीत है ।

कालांतर में चुरादि धातुओं की तरह 'मंत्रयते', कभी-कभी 'मंत्रयति' तथा 'मंत्रित'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शब्द दैनिक प्रयोग में आने लगे । जो कि सलाह लेना, विचार करना, परामर्श लेना, सोच विचारकर संकल्प करना, गुप्त मंत्रणा करना इत्यादि अर्थों में प्रयुक्त होने लगे ।

मंत्र व ध्वनि रहस्य

भारतीय ऋषियों ने मंत्र के आरोह-अवरोह को ध्यान में रखते हुए उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि अनेक 'स्वरों' के प्रयोग की व्यवस्थाएं दी हैं । मंत्रों के मूल में एक लय है, विविध ध्वनियों के विविध-विविध उच्चारण क्रम की विशिष्ट शैली है ।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि मंत्रों का प्रभाव नहीं होता, ये वे ही लोग हैं जो कि पुस्तकों में लिखे मंत्रों को पढ़कर प्रयोग में लाने की कोशिश करते हैं । मंत्र की मूल चेतनशक्ति तो 'ध्वनि' में निहित है और यह ध्वनि पुस्तक के निर्जीव पृष्ठ नहीं बता सकते ।

इसके लिए विद्वान् गुरु की आवश्यकता होती है । कुछ लोगों की मानसिक वृत्तियां इतनी निम्नगामी हो चुकी हैं कि 'डिस्को' डांस एवं ऊलजलूल संगीत को सीखने के लिए नियमित रूप से क्लबों में जाते तथा महीनों तक बंद कमरों में लगातार अभ्यास करने में भी नहीं हिचकिचाते परंतु वैदिक मंत्रों को सीखने के लिए गुरु के पास जाने में उन्हें बड़ी भारी शर्म आती है ।

मंत्रों की दिव्य आध्यात्मिक शक्ति को वे बैडरूम में सोते-सोते बिना प्रयास व परिश्रम के पुस्तकों के निर्जीव पृष्ठों में ढूंढते रहते हैं ।

अंग्रेज़ों की गुलामी, आधुनिक शिक्षा की चमक-दमक में पले शिखा व यज्ञोपवीत से घृणा करने वाले तथा ब्राह्मणों के प्रति उदासीन वृत्ति वाले, दिग्भ्रांत भारतीय युवक ही अनधिकृत रूप से मंत्र विज्ञान के बारे में ज्यादा टीका-टिप्पणी करते हुए देखे जाते हैं । हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि यह विद्या ब्राह्मणों के पास पीढ़ी-दर-पीढ़ी से चली आ रही है । अतः इस शक्ति का मूल स्रोत पकड़ने के लिए आपको मंत्रज्ञ व कर्मकाण्डी ब्राह्मणों की शरण में जाना ही पड़ेगा ।

आपने प्रायः कवि सम्मेलनों को देखा या सुना होगा । एक हास्यरस या करुणारस का कवि जिस कविता को बोलकर श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर हंसने व आंसू बहाने के लिए मजबूर कर देता है, उसी कविता को आप पढ़ें तो शायद आप श्रोताओं को उतना प्रभावित नहीं कर पायेंगे । इसका मूल कारण उस कविता को एक विशिष्ट लय व शैली के साथ, अभ्यासपूर्वक बोलना ही तो है । जब तक आप अभ्यासपूर्वक कविता की शैली व लय को नहीं पकड़ पायेंगे तब तक आप द्वारा उच्चारित कविता श्रोताओं को प्रभावित नहीं कर पाएगी । यह एक लौकिक उदाहरण है परंतु वैदिक मंत्रों की स्वर साधना के लिए हमें काफी अध्ययन करना पड़ेगा ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वैदिक ऋषि कहते हैं— जो वेदपाठी विद्वान् वेदों को पढ़कर उसके लय व अर्थ को नहीं जानता वह उस स्थाणु (गधे) के समान है जो चंदन के भार को ढोता हुआ भी उसके उपयोग से वंचित है । अर्थ को न जानकर पुस्तक पढ़ने वाला व्यक्ति केवल व्यर्थ ही श्रम करता है क्योंकि वह वेदवाणी को देखता हुआ भी नहीं देख पाता और इस पवित्र वाणी को सुनता हुआ भी (अर्थ-ग्रहण के अभाव में) नहीं सुनता । निरुक्तकार यास्क कहते हैं—'वैदिक मंत्रों की उच्चारण शुद्धता उनके अर्थज्ञान पर निर्भर है तथा वेद में अर्थज्ञान का आधारस्तम्भ है, स्वरज्ञान ।

व्याकरणाचार्य पाणिनि कहते हैं—' जिसे वैदिक स्वरों का ज्ञान नहीं उसे संहिता (मंत्र) पाठ करने का अधिकार नहीं ।'

महर्षि पाणिनि एक उदाहरण देते हुए बतलाते हैं—

मंत्रो हीनः स्वरतो वर्णतो या, मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह ।
स वाग्वण्त्रों यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रुः स्वरतो पराधात् ॥

—पा० शि० श्लोक 52

इंद्र के पराभव के लिए वृत्र द्वारा किए गए यज्ञ में 'इंद्रशत्रुवर्धस्वः' मंत्र से आहुति दी जा रही थी । तत्पुरुष समास में उत्तरपद में उदात्त स्वर होना चाहिए था, जिसका अर्थ होता है इंद्र का शत्रु अर्थात् वृत्र बढ़े । इसके स्थान पर उच्चारण भेद से (पूर्व पद में उदात्त के कारण) यह शब्द बहुब्रीहि बन गया और इसका अर्थ हुआ 'इंद्र बढ़े' । स्वर की अशुद्धता के कारण अर्थ बिल्कुल उल्टा हो गया और वृत्र का नाश हो गया ।

ध्वनि के उच्चारण भेद मात्र से इतना अनर्थ हो जाना अपने आप में बहुत ही विचित्र बात है, बात कुछ समझ में नहीं आती । ध्वनि विज्ञान के महत्व व प्रभाव की बात शायद यहीं तक समाप्त हो जाती परंतु हम पाश्चात्य वैज्ञानिकों के आभारी हैं, जिन्होंने ध्वनि व उसके प्रभाव (Sound and its effects) पर निरंतर अध्ययन, अनुसंधान किए और आज दूसरी कक्षा से लेकर एम०ए० तक की विज्ञान की पुस्तकों में ध्वनि-ऊर्जा (Sound energy) के बारे में अध्याय मिलेंगे ।

ध्वनि तरंगों पर उन्होंने शोध किया और पाया कि ध्वनि का प्रभाव उसकी प्रबलता, कंपन और आयाम पर निर्भर है । मनुष्य उन्हीं ध्वनि तरंगों को सुन सकता है जिनकी आवृत्ति 20 तथा 20,000 (K/C) कंपन्न प्रति सेकण्ड के बीच में है । 20 से कम तथा 20,000 से अधिक आवृति तरंगों को हम नहीं सुन पाते । परंतु अलग-अलग जाति के जानवरों की न्यूनतम तथा अधिकतम आवृत्तियों, जिनको वे सुन सकते हैं, भिन्न-भिन्न होती है ।

गाय, बैल, भेड़ें व घोड़ों के बारे में उन्होंने अध्ययन किया और निष्कर्ष निकाला कि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन पशुओं में भूकम्प तरंगों को सुनने की विशेष क्षमता होती है ।

20,000 कंपन्न प्रति सेकण्ड से अधिक आवृत्ति की ध्वनि 'पराश्रव्य ध्वनि' कहलाती है । यह ध्वनि मनुष्य को नहीं सुनाई पड़ती । कुछ पशुओं जैसे, कुत्तों में पराश्रव्य कंपन्नों को सुनने की क्षमता होती है । शायद इसलिए भारतीय शकुन-शास्त्रियों ने यह माना है कि कुत्ता एक विशिष्ट चौकन्ना रहने वाला प्राणी है, जिसे अदृश्य शक्तियों (भूत-प्रेत इत्यादि) एवं पराश्रव्य आवाजों का आभास तत्काल होता है, और यह भौंकने लगता है । मंत्र व तंत्र शास्त्र में'मूठ फेंकने' की प्रक्रिया का विस्तृत उल्लेख मिलता है । ऐसी मान्यता रही है कि मंत्रों की शक्ति से उर्द के दाने मंत्र के माध्यम से जाग्रत होकर एक विशेष प्रकार की ध्वनि करते हुए अभिलक्षित लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं, परंतु यदि लक्षित व्यक्ति ने कवचादि से अपनी सुरक्षा का उपाय कर रखा है तो 'मूठ' चलाने वाले व्यक्ति को ही लौटकर प्रताड़ित करती है । हो सकता है आज से कुछ वर्ष पहले ये बातें लोगों को कपोल कल्पना ही लगती हों परंतु भौतिकी विज्ञान के 'ध्वनि परावर्तन सिद्धान्तों' ने यह प्रमाणित कर दिया कि कम्पन्न के माध्यम से ध्वनि इच्छित लक्ष्य तक पहुंचती है तथा वहां पर प्राप्त अवरोध के कारण टकराकर वापस उद्गम स्थल पर पहुंच जाती है । वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह पता चला है कि चमगादड़ों में पराश्रव्य ध्वनि करने तथा उन्हें सुनने की अद्भुत क्षमता होती है ।

चमगादड़ प्राय: अन्धा होता है परंतु जब वह उड़ान भरता है तो पंख फड़फड़ाकर (पराश्रव्य ध्वनि) उत्पन्न करके उड़ान भरता है । उसके मार्ग में किसी अवरोधक प्राणी या वस्तु के आ जाने पर ध्वनि तरंगें उस प्राणी से टकराकर परावर्तित होकर उस चमगादड़ के पास पुन: पहुंच जाती हैं और इन्हीं ध्वनि तरंगों के द्वारा चमगादड़ अपना गन्तव्य तय करता है । अब यह प्रमाणित हो चुका है कि परावर्तन ध्वनि तरंगों व लहरों का एक सामान्य गुण है ।

व्यावहारिक जीवन में 'पराश्रव्य ध्वनि' के बहुत उपयोग हैं । ढाली हुई धातु की चादरों के अन्दर दरारों का पता लगाने, कपड़ों, प्लेटों आदि को धोने, कठोर पदार्थों को काटने और एल्यूमिनियम आदि को जोड़ने के लिए 'पराश्रव्य ध्वनि' का उपयोग किया जाता है ।

इतना ही नहीं पराश्रव्य ध्वनि जीवविज्ञान संबंधी प्रभाव भी पैदा करती है । उदाहरण के लिए ऐसी ध्वनि से प्रभावित अनाज में अकुंरण अधिक होता है । फलस्वरूप फसल अधिक होती है । वैज्ञानिक परीक्षणों से यह भी सिद्ध हुआ है कि पराश्रव्य ध्वनि से प्रभावित दूध काफी समय तक खराब नहीं होता है । रूस जैसे वैज्ञानिक देश ने भी इस बारे में खोज की है तथा वहां के वैज्ञानिक गानिन ने एक विचित्र प्रयोग किया है ।

इटली भी इस दौड़ में पीछे नहीं रहा तथा उन्होंने पराश्रव्य ध्वनि पर आधारित एक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऐसे यन्त्र का आविष्कार किया है जिसकी आवाज से चूहे घर छोड़कर बाहर भागने पर मजबूर हो जाते हैं।

जो शरीर के विज्ञान को जानते हैं कि मनुष्य के मस्तिष्क का बहुत छोटा सा हिस्सा सक्रिय है शेष हिस्सा बिल्कुल निष्क्रिय पड़ा हुआ है। शल्य चिकित्सक अपने आपको असमर्थ पा रहे हैं; इस निष्क्रिय हिस्से को सक्रिय करने के लिए। परंतु योग का कहना है कि मस्तिष्क का यह सारा हिस्सा सक्रिय हो सकता है। उसकी यह मान्यता है कि कांस्य धातु से ताड़ित घंटा-नाद एवं शंख के तुमुल-घोष द्वारा उत्पन्न ध्वनि तरंगों के कंपन व स्पंदन से कभी-कभी ये मस्तिष्क नाड़ियाँ अचानक जाग्रत हो जाती हैं। योगियों का यह तर्क आधुनिक वैज्ञानिकों के खोज के लिए एक महत्त्वपूर्ण चुनौती है।

ध्वनिशास्त्रियों के प्रयास:—

आधुनिक ध्वनि यंत्रों की सहायता से शब्द ज्ञान प्राप्त करने के लिए अनेक प्रयास ध्वनि-शास्त्रियों ने किए हैं। संस्कृत वैय्याकरणाचार्यों ने 'स्फोट' के सिद्धांत पर विशेष बल दिया है। उनके अनुसार 'स्फोट' द्वारा वाक् के जो चार प्रकार प्रकट होते हैं उनके नामनिर्देश करते हुये, ऋग्वेद में बताया गया है कि अंतिम प्रकार ही मनुष्य को प्राप्त है और पहले के तीन प्रकार के उच्चारश्रवण के परे है। उनका निष्कर्ष है कि ये तीनों प्रकार की 'पराश्रव्य ध्वनियां' वायु मण्डल को भयंकर रूप से प्रभावित करती हैं।

मंत्र साधना के समय यह प्राचीन परंपरा रही है कि शुद्ध घृत का दीपक साधक के नेत्रों के सामने होना चाहिए। इसमें भी एक रहस्य है, शब्द मूलत: वायु तत्व प्रधान होते हैं इनको तेजोमय बनाने के लिए अग्नित्व प्रधान दीपक की लौ के सामने शब्द उच्चारित किये जाते हैं उसके ऊपर गुजरते हुये शब्द तेजोमय स्वरूप को धारण कर समस्त वायुमण्डल में फैल जाते हैं। 'पदार्थ विज्ञान' के अनुसार मिट्टी में विधिवत मिलाया गया अन्न शतगुणित हो जाता है, ठीक इसी प्रकार जल में मिलाया गया पदार्थ सहस्रगुणित और अग्नि में मिलाया गया पदार्थ लक्षगुणित हो जाता है। रत्ती भर हींग की छोंक से मौहल्ले भर में सुगंधि फैल जाना, अग्नि संसर्ग से पदार्थ की व्यापकता का स्पष्ट उदाहरण है। हवन में विधिपूर्वक आहुत द्रव्य पदार्थ सूक्ष्म रूप में परिणित होकर वायुमण्डल के अणु-अणु में व्याप्त होकर, समस्त ब्रह्माण्ड को प्रभावित करते हैं। शायद यही कारण है कि हमारे ऋषियों ने यज्ञ की अग्नि के सामने उच्चारित मंत्रों को ज्यादा शक्तिशाली माना है। इस प्रक्रिया के द्वारा ध्वनि तरंगों को अधिक प्रभावशाली बनाकर इसमें प्रकाश ऊर्जा का सम्मिश्रण करके मंत्रों को अधिक शक्तिशाली, शीघ्रगामी व शीघ्र प्रभावी बनाया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाता है, जिससे मंत्रों का प्रभाव अनंतगुणित बढ़ जाता है । ध्वनि व प्रकाश का समन्वय कोई कपोल कल्पना नहीं अपितु आधुनिक सभ्यता में बहुप्रचलित टेलीविजन (Television) इत्यादि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं ।

शब्द-ब्रह्म

बाइबिल में कहा गया है, 'आरंभ में केवल शब्द था, शब्द ही ईश्वर के पास था, शब्द ही ईश्वर था । संस्कृत वर्णमाला पर शब्द को लेकर विशिष्ट खोजें हुईं और पाया कि वर्षों के सम्यक् प्रयोग से कई प्रकार के रोगों की निवृत्ति हो जाती है विदेशी वैज्ञानिकों की यह धारणा है कि वेदों के सारभूत शब्द ओंकार के सम्यक् उच्चारण से मानव के मस्तिष्क रोग स्वत: ही निवृत्त हो जाते हैं । 'प्रणव' के पुन: पुन: उच्चारण से मस्तिष्क का विकृत रुधिर शुद्ध होकर मस्तिष्क को स्वस्थ बना देता है । इसी प्रकार बीज मंत्रों में जो 'ह्रां ह्रीं' आदि उच्चारित होते हैं, वे सब देखने में निरर्थक से आभासित होते हैं, किंतु इनका सम्यक् उच्चारित विविध रोगों का प्रशमक सिद्ध हुआ है । इन संयुक्त बीज मंत्रों का उच्चारण जितनी बार किया जायेगा उतनी ही बार हृदय का संचालन तीव्रता के साथ होगा । रोगी का रुधिर शुद्ध होकर उसे शीघ्र आराम मिलता है ।

अनुनासिक वर्णों के संबंध में जो दीर्घोच्चारण तथा रेफ का उच्चारण किया गया है उनमें 'ह्राम्' इसका दीर्घोच्चारण मुख को खोलकर सब विकारों को दूर कर सकता है । स्वरों के अंतर्गत पाणिनि ने 'रंगों' के उच्चारण की परम विशेषता बतलायी है । रंग वे होते हैं जिसमें अन्त्य वर्ण से पूर्व का अक्षर अनुनासिक रूप से रंजित होता है यथा 'लोकां ॐ अकल्पयन्' इस प्रकार के उच्चारण हृदय प्रदेश से लेकर एक हाथ (24 अंगुल) ऊपर तक के समस्त रोगों को दूर करते हैं । भगवान पाणिनि ने अपनी कृति 'अष्टाध्यायी' में कतिपय तात्कालिक रोगों के सूत्रों का निर्देश किया है, जिनका असर 'शब्द ब्रह्म' के उपासकों पर नहीं होता । यथा अतिसार 5/2/9' कुष्ठ 8 / 3 / 97' संज्वर- (संभवत: एक प्रकार का क्षय रोग) 3 / 2 / 142, 'स्पर्श (छूत की बीमारी) 3 / 3 / 16, हृदय रोग 6 /3 / 51 इत्यादि । रोगों की निवृत्ति के लिये भारत के प्रमुख विद्या केंद्र तक्षशिला विश्वविद्यालय में इस प्रकार के अनुसंधानात्मक अध्ययन को विशेष प्रोत्साहन दिया जाता रहा है । लंदन में यूटा कॉलेज ऑफ मेडिसन तथा न्यूयार्क में 'येशीवा विद्यालय' के 'अल्बर्ट आइन्सटाइन कॉलेज आफ मैडीसन' में ध्वनि उच्चारण द्वारा रोगोपचार निमित्त रचनात्मक सफलतायें प्राप्त की हैं; तथा विदेशों में इस बारे में लगातार प्रयोग हो रहे हैं ।

मंत्र-चमत्कार

वर्णों व शब्दों के उच्चारण से चमत्कार की बात तो वैज्ञानिक स्वीकार कर चुके हैं । इसके साथ वे ये भी स्वीकारते हैं कि मंत्र शक्तिशाली क्रियात्मक ध्वनि तरंगों का पुंज

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है । मंत्र की तरंगें मस्तिष्क तथा ब्रह्मांडीय वातावरण को प्रभावित करती हैं । जिस प्रकार निरंतर वायुमण्डल में प्रवाहित होते हुये भी विद्युत-चुंबकीय लहरें तथा रेडियो तरंगें हमें दिखलाई नहीं पड़तीं, ठीक उसी प्रकार से मंत्रों के द्वारा उच्चारित ध्वनि-शक्तियां भी चर्म चक्षुओं से अग्राह्य हैं । मंत्रों के चमत्कार के बारे में हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई व जैन सभी धर्मग्रंथों में अनेक चमत्कारिक किस्से छपे पड़े हैं, जिनको दोहराना कोई बुद्धिमानी नहीं होगी । प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं इसी उद्देश्य को लेकर प्रस्तुत पुस्तक की रचना की गई है । पुस्तक आपके हाथ में है,प्राचीन है, अपूर्व है तथा पाण्डुलिपि के चित्र भी प्रयोग के साथ-साथ में दिए गए हैं । इनमें से किसी भी एक प्रयोग को समझ लें, सीख लें, हृदयंगम कर लें, फिर पूर्ण आत्मविश्वास व धैर्य के साथ अनुष्ठान प्रारंभ करें । आप देखेंगे कि सफलता आपके द्वार खटखटा रही है, देरी सिर्फ आगे बढ़कर उसको अपनाने मात्र की है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मंत्र विद्या

1. प्रश्न :— *मंत्र किसे कहते हैं ? मंत्र का अर्थ क्या है ?*

उत्तर :— मंत्र +अच् निर्मित 'मंत्र' शब्द का अर्थ होता है किसी भी देवता को संबोधित किया गया वैदिक सूक्त या प्रार्थना पूरक वेद मंत्र । यही कारण है कि वेद से इतर प्रयुक्त आप्त वाक्यों जैसे श्रीमद्‌भगवद गीता व अन्य पुराणों में प्रयुक्त संस्कृत श्लोकों को मंत्र नहीं कहा जाता । प्रार्थना पूरक यजुस जो कि किसी देवता को उद्‌दिष्ट करके बोला गया है यथा 'ॐ नमः शिवाय' इत्यादि भी मंत्रों की संख्या में आते हैं । कालांतर में अनेक प्रकार के तांत्रिक श्लोक (दुर्गा सप्तशती) वगैरह जो कि विशिष्ट देवता को उद्देश्य करके बोले गये तथा विशेष चमत्कारिक शक्ति के संपन्न होने से, वे श्लोक भी 'मंत्र' कहलाने लगे ।

शक्ति और तांत्रिक संप्रदायों में प्रयुक्त अनेक सूक्ष्म रहस्यमय शब्द खण्डों और अक्षरों तथा 'ऐं ह्रीं क्लीं' को भी 'मंत्र' कहते हैं तथा विश्वास किया जाता है कि इन बीज मंत्रों से महान् शक्तियां और सिद्धियां प्राप्त होती हैं । मंत्र शब्द का लौकिक अर्थ है गुप्त परामर्श । योग्य गुरुदेव की कृपा से ही मंत्र प्राप्त होता है । मंत्र प्राप्त होने के बाद यदि उसकी साधना न की जाए, अर्थात् सविधि पुरश्चरण करके उसे सिद्ध न कर लिया जाए तो उससे कोई विशेष लाभ नहीं होता । श्रद्धा, भक्ति भाव और विधि के संयोग से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जब मंत्रों के अक्षर अंतर्देश में प्रवेश करके दिव्य स्पंदन उत्पन्न करने लगते हैं, तब उसमें जन्म-जन्मांतर के पाप-ताप धुल जाते हैं, जीव की प्रसुप्त चेतना जीवांत, ज्वलंत और जाग्रत होकर प्रकाशित हो उठती है। मंत्र के भीतर ऐसी गूढ़ शक्ति छिपी है जो वाणी से प्रकाशित नहीं की जा सकती । अपितु उस शक्ति से वाणी स्वयं प्रकाशित होती है। मंत्र शक्ति अनुभव-गम्य है, जिसे कोई चर्मचक्षुओं द्वारा नहीं देख सकता। वरन् इसकी सहायता से चर्मचक्षु दीप्तिमान होकर त्रिकालदर्शी हो जाते हैं।

2. प्रश्न :— *वैदिक मंत्र एवं प्रचलित अन्य मंत्रों में क्या अंतर है ?*

उत्तर :— मंत्रों में वैदिक मंत्र सबसे प्राचीन व प्रमाणिक माने जाते हैं। वैदिक व अन्य तांत्रिक किंवा लौकिक मंत्रों में मुख्य भेद स्वर का रहता है। वैदिक मंत्रों में आरोह, अवरोह को ध्यान में रखते हुए उदात्त, अनुदात्त, स्वरित अंक विभिन्न विसर्गों की व्यवस्थाएं दी हैं। स्वर वैशिष्ट्य व श्रुति परंपरा के कारण हजारों वर्षों के पश्चात् भी वैदिक अपनी मूल अवस्था में आज भी सुरक्षित हैं। उच्चारण शुद्धता के अतिरिक्त प्रत्येक वैदिक मंत्र में आठ बातें पाई जाती हैं, जो कि अन्य मंत्रों में नहीं होतीं:

1. ऋषि 2. छन्द 3. देवता 4. बीज 5. शक्ति 6. कीलक 7. विनियोग 8. न्यास।

1. ऋषि उसे कहते हैं जिसने उस मंत्र का सर्वप्रथम आत्म साक्षात्कार कर उसकी दिव्य शक्ति का दर्शन (अनुभव) किया हो एवं उस मंत्र का दूसरों को उपदेश दिया हो। जैसे विश्वामित्र जो गायत्री मंत्र के ऋषि हैं। एक बात और ध्यान में रखनी चाहिए कि मंत्र दृष्टा ऋषि मंत्रों के निर्माण करने वाले रचने वाले नहीं माने जाते क्योंकि वैदिक मंत्रों के रचयिता साक्षात् ईश्वर हैं, अन्य कोई नहीं।
2. प्रत्येक मंत्र का एक छंद होता है।
3. प्रत्येक मंत्र का आराध्य देवता भी होता है।
4. प्रत्येक मंत्र का 'बीज' होता है जो मंत्र में शक्ति प्रदान करता है तथा मंत्र का मूल तत्व होता है।
5. प्रत्येक मंत्र की अलग-अलग शक्ति होती है।

3. प्रश्न :— *कीलक क्या होता है ? मंत्रों में इसकी क्या उपयोगिता है ?*

उत्तर :— कीलक एक प्रकार से मंत्र की खूंटी होती है। जो मंत्र की चैतन्य शक्ति को धारण किये रहती है। दीपकाल तक मंत्र मनन करने से यह खूंटी दूर हो जाती है और मंत्र का चैतन्य रूप प्रकट होकर साधक को अपने इष्ट के दर्शन होते हैं। कई मंत्रों के कीलक अलग से दिए होते हैं जिनके पढ़ने से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मंत्रों का कीलक नष्ट हो जाता है ।

4. प्रश्न :— *विनियोग किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— विनियोग में मंत्र का प्रयोजन एवं उसका पूरा स्वरूप मुखरित होता है । एक प्रकार से यह संकल्प का सूक्ष्म रूप है । बिना विनियोग के मंत्र जाप का फल नहीं मिलता ऐसा शास्त्र-वचन है । उदाहरण के लिए जप हेतु गायत्री मंत्र का विनियोग देखिए । ॐ प्रणवस्य पर ब्रह्म ऋषि: परमात्मा देवता, गायत्री छंद: व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषि: अग्निवायु सूर्यदेवता गायत्री छंद: सर्वपापक्षयार्थे गायत्री मंत्र जपे विनियोग: ॥

5. प्रश्न :— *न्यास किसे कहते हैं ? यह कितने प्रकार के होते हैं ?*

उत्तर :— न्यास के द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले 'मंत्र' का पदच्छेद किया जाता है तथा शरीर के प्रमुख अंगों में मंत्र को प्रतिष्ठित किया जाता है । इस प्रक्रिया से साधक का बाह्य व आंतरिक शरीर मंत्रमय हो जाता है ।

न्यास दो प्रकार के होते हैं ।

1. कर न्यास, 2. अंग न्यास, कर न्यास द्वारा हथेली व अंगुलियों का शुद्धिकरण होता है तथा अंग न्यास द्वारा शरीर के अन्य अंगों का शुद्धिकरण होता है ।

6. प्रश्न :— *मंत्र में कितने प्रकार के दोष हैं ?*

उत्तर :— हरितत्त्व दीधति में मंत्र के आठ दोष बतलाये गये हैं :

1. अभक्ति 2. अक्षर भ्रांति 3. लुप्त 4. छिन्न 5. ह्रस्व 6. दीर्घ 7. कथन 8. स्वप्न कथन ।

शारदापटल में इन दोषों के अलावा रुद्ध, शक्तिहीन एवं पराङ्मुख आदि 50 और दोष भी बतलाये गये हैं । सात करोड़ मंत्रों में से प्राय: सभी इन दोषों में से किसी न किसी दोष से दूष्ट पाये जाते हैं । इन दोषों को जान उनकी निवृत्ति न करते हुये जो व्यक्ति मंत्र साधना करता है उसे कभी भी सिद्धि नहीं मिलती है ।(दोषानिमानविज्ञाय यामन्त्रान् भजते जड़: । सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पन्कोटिशतैरपि ॥)

7. प्रश्न :— *अभक्ति दोष किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— मंत्र को अक्षर वर्णों की समष्टि मात्र समझना 'अभक्ति नामक दोष' कहलाता है । साधक की मंत्र में भक्ति न होने पर उसे सिद्धि नहीं मिलती ।

8. प्रश्न :— *अक्षर भ्रांति दोष किसे कहते हैं ?*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्तर :— गुरु या शिष्य के प्रमादवश मंत्र के अक्षरों में उलट-फेर हो जाना 'अक्षरभ्रांति' का दोष कहा जाता है।

9. प्रश्न :— *छिन्न दोष किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— मंत्र में किसी वर्ण की न्यूनता को लुप्त दोष कहते हैं। मंत्र से संयुक्त वर्णों में से किसी अंश का छूट जाना 'छिन्न' दोष कहलाता है।

10. प्रश्न :— *ह्रस्व दोष एवं दीर्घ दोष क्या होता है ?*

उत्तर :— दीर्घ वर्ण के स्थान पर 'ह्रस्व' का उच्चारण 'ह्रस्व दोष' तथा ह्रस्व वर्ण के स्थान पर दीर्घवर्ण का उच्चारण 'दीर्घ' दोष कहलाता है।

11. प्रश्न :— *कथन दोष किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— जाग्रत अवस्था में अपना मंत्र किसी को बतला देना 'कथन' नामक दोष कहा जाता है, तथा स्वप्न में अपना मंत्र किसी को बता देना 'स्वप्न कथन' नाम का दोष कहलाता है।

12. प्रश्न :— *मंत्र दोष निवृत्ति के क्या उपाय हैं ?*

उत्तर :— मंत्र सर्वशक्तिमान देवता का स्वरूप है। ऐसा अनुभव कर एक-एक मंत्र के उच्चारण में परमानंद का अनुभव करते हुए मंत्र का जप करने से मंत्राधिष्ठात् देव प्रसन्न हो जाता है, तब उसमें भक्ति का उदय होता है भक्ति उदित होने पर शीघ्र सिद्धि मिल जाती है। अभक्ति दोष को दूर करने का यह उपाय है।

अक्षरभ्रांति, लुप्त, छिन्न, ह्रस्व, दीर्घ आदि दोषों की निवृत्ति के लिए मंत्र के 10 संस्कार चाहिएं। इन संस्कारों के नाम इस प्रकार हैं—

1. जनन, 2. दीपन, 3. बोधन, 4. ताड़न, 5. अभिषेक, 6. विमलीकरण, 7. जीवन, 8. तर्पण, 9. गोपन, 10. आप्यायन।

13. प्रश्न :— *जनन संस्कार किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **जनन**—भोजपत्र पर लाल चंदन एवं गोरोचन से 'जनन-यंत्र' लिखकर उसमें विधिवत् मातृका देवी का आवाहन एवं पूजन करके एक अन्य भोजपत्र पर अपने मंत्र के एक-एक वर्ण का उद्धार करना चाहिए। इस प्रक्रिया को जनन संस्कार कहते हैं।

14. प्रश्न :— *दीपन संस्कार किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **दीपन**— हंस मंत्र से संपुटित कर मूल मंत्र का एक हजार जप करना दीपन संस्कार कहलाता है। उदाहरणार्थ 'रामाय नमः' का दीपन संस्कार करने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के लिए 'हंस रामाय नमः सो हं' का एक हजार जप करना चाहिए ।

15. प्रश्न :— *बोधन संस्कार किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— बोधन—"हूं" बीज से संपुटित मंत्र का पांच हजार जप करना ताड़न कहलाता है । यथा— 'हूं रामाय नमः हूं' ।

16. प्रश्न :— *ताड़न संस्कार किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **ताड़न**—'फट्' से संपुटित मंत्र का एक हजार बार जप करना ताड़न कहलाता है । यथा— 'फट् रामाय नमः फट्' ।

17. प्रश्न :— *अभिषेक संस्कार से क्या तात्पर्य है ?*

उत्तर :— **अभिषेक**—भोजपत्र पर अपना मंत्र लिखकर 'ऐं हंस ओं' मंत्र से एक हज़ार बार अभिमन्त्रित जल से इसी मंत्र के द्वारा अपने मंत्र का अभिषेक संस्कार कहलाता है ।

18. प्रश्न :— *विमलीकरण किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **विमलीकरण**—'ओं त्रों वषट्' मंत्र का एक हज़ार जप करना विमलीकरण कहलाता है । यथा—'ओं-त्रों' वषद् रामाय नमः वषट् त्रो ओं ।

19. प्रश्न :— *जीवन संस्कार क्या है ?*

उत्तर :— **जीवन**— 'स्वधा वषट्' से संपुटित अपने मंत्र का एक हज़ार जप करना जीवन कहलाता है । यथा— 'स्वधा वषट् रामाय नमः स्वधा वषट्' ।

20. प्रश्न :— *तर्पण संस्कार किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **तर्पण**— दूध, घी, शहद या जल से मूलमंत्र से 100 बार तर्पण करना ही तर्पण संस्कार कहलाता है । यथा 'रामाय नमः' मंत्र का तर्पण करने के लिए इस मंत्र को गोरोचन आदि से ताड़पत्र पर लिखकर दूध, घी एवं जल से इसी मंत्र से इसका सौ बार तर्पण करना चाहिए ।

21. प्रश्न :— *गोपन क्या होता है ?*

उत्तर :— **गोपन**—माया बीज से (ह्रीं) संपुटिक अपने मूल मंत्र का एक हज़ार जप करना गोपन कहलाता है । यथा 'ह्रीं रामाय नमः ह्रीं' ।

22. प्रश्न :— *आप्यायन से क्या तात्पर्य है ?*

उत्तर :— **आप्यायन**—'हसः' बीज से संपुटित मंत्र का एक हज़ार जप करना आप्यायन कहलाता है । यथा— हसौः रामाय नमः हसौः ।

इस प्रकार से संस्कारित मंत्र शीघ्र सिद्धि देने वाला हो जाता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

23. प्रश्न :— *बीज मंत्र किसे कहते हैं ? इनका क्या महत्त्व है ? विस्तार से बतावें ?*

उत्तर :— विशिष्ट प्रकार के अक्षरों के संयोग का नाम ही मंत्र है और इससे जो-जो प्रतिक्रिया होती है उससे स्वर्ग निवासी देवी-देवता अपने अवधि ज्ञान (विशिष्टा) के द्वारा यह जान लेते हैं कि अमुक व्यक्ति अमुक स्थान पर बैठकर, अमुक मंत्र का पाठ करता है या साधना कर रहा है। यह ध्रुव सत्य है कि प्राचीन काल में जब महान् पुरुष और भाग्यशाली व्यक्ति आराधना करते हैं तब उनकी सेवा में देवता हाजिर रहते थे, जिसका वर्णन अपने धर्म ग्रन्थों से जाना जा सकता है। कलियुग में मंत्र, तंत्र, और यंत्रों की शक्तियां भी कम होती जा रही हैं लेकिन उसका मतलब यह नहीं सोचना चाहिए कि यह सब चीजें निरर्थक, मिथ्या या केवल आडंबर हैं शास्त्रकार बतलाते हैं कि—

निर्बीजमक्षरं नास्ति,
नास्ति मूलमनौषधं।
निर्धना पृथ्वी नास्ति,
आम्नायाः खलु दुर्लभा॥

अर्थात् संसार में जितने अक्षर हैं वे सर्वशक्तिशाली हैं और उसके सुनने या मनन करने से एक तरह का असर पैदा होता है जैसे कोई हमें शिष्टता एवं नम्रतापूर्वक पुकारता है तो हम खुश हो जाते हैं और अगर कोई बुरे शब्दों से बुलाता है, दुर्व्यवहार करता है तो हम नाराज हो जाते हैं। यह मानना पड़ेगा कि यह सभी शब्दों की ही महत्ता है। इससे सिद्ध हो जाता है कि शब्दों में अपूर्व शक्ति है। संसार में जितनी वनस्पतियां हैं उनमें शक्ति है। पृथ्वी भी निर्धन नहीं है क्योंकि जगत में अनेक प्रकार की वैभव युक्त सामग्री रत्न, स्वर्ण की खानें प्रत्यक्ष प्रमाण हैं इसीलिए शास्त्रकारों ने पृथ्वी को रत्नगर्भा कहा है।

मंत्र शास्त्र में भी वैज्ञानिक रहस्य विद्यमान हैं। मंत्रों के एक-एक अक्षर में अत्यंत शक्ति छुपी हुई है। वर्णमाला के मूल अक्षर केवल औपचारिक ही नहीं होते उनका मंत्र शक्ति के साथ अत्यंत गहरा संबंध होता है। वर्णमाला से प्रत्येक अक्षर मनुष्य के शरीर पर (वर्णोच्चार प्रमाण विशिष्ट) प्रभाव डालता है। वर्णमाला का प्रत्येक विभाग पृथ्वी, जल, तेज अग्नि, वायु और आकाश का अनुसरण करता है।

मंत्रोचारण में अल्पविराम और पूर्णविराम का भी विशेष ध्यान रखना आवश्यक है। इसका ध्यान नहीं रखा जाए तो अनर्थ हो जाता है। जो शब्द जहां प्राचीन परम्परा से आ रहा हो, उसमें अपनी ओर से अनुवाद

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करके प्रयोग में लाने पर उसका अर्थ शिथिल हो जाता है यथा—बोली की साधारण भाषा में 'पगरखी' 'अंगरखी' आदि साधारण शब्दों का प्रयोग करते हैं जिनमें अर्थ निहित है। पैरों की रक्षा करने वाली 'पगरखी' तथा अंग की रक्षा करने वाली 'अंगरखी' बोलते ही अर्थ समझ में आ जाता है किंतु अनुवाद में भाषा तथा मूल शब्द का गौरव नहीं रहता जैसे प्रजापति प्रजा की रक्षा करने वाले, सेनापति सेना की रक्षा करने वाले अर्थ में होता है। अगर मूल शब्द की जगह अर्थ लिखें तो शब्द का जो गौरव है वह समाप्त हो जाता है। मंत्रों के साथ-साथ उनके बीजाक्षरों में शक्ति अंतर्निहित है। बीज अक्षरों में शुद्धि-अशुद्धि देखने के लिए बीज अक्षरों का सामान्य परिचय जो संग्रह से प्राप्त हुआ है सेवा में प्रस्तुत है।

1. ॐ — प्रणव बीज, ध्रुव बीज, विनय और तेज का बीज है।
2. ऐं— वाग् और तत्व बीज है।
3. क्लीं — काम् बीज है।
4. हंसौं हंसौ हंसौ — यह शक्ति बीज है।
5. हों — शिव और शासन बीज है।
6. क्षि — पृथ्वी बीज है।
7. प — अप्प बीज है।
8. स्वा — वायु बीज है।
9. हा: — आकाश बीज है।
10. ह्रीं — माया और त्रैलोक्य।
11. क्रीं — अंकुश और निरोध बीज है।
12. आ — पाश बीज है।
13. फट् — विर्सजन और चलन।
14. वष्ट — दहन बीज है।
15. वौषट् — आकर्षण व पूजा ग्रहण बीज है।
16. संवौषट् — आकर्षण बीज है।
17. ब्लूं — द्रावण बीज है।
18. ब्लैं — आकर्षण बीज है।
19. ग्लौं — स्तंभन बीज है।
20. वौषट् — आवाह्न बीज है।
21. क्षवीं — विषापाहार बीज है।
22. च: — चंद्र बीज है।
23. घ: — मारण और ग्रहण बीज है।
24. ए — छल बीज है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

25. द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स: — यह पांच बाण बीज है ।
26. हं — द्वेष और विद्वेषण है ।
27. स्वाहा — होम अथवा शांति बीज है ।
28. स्वधा — पौष्टिक बीज है ।
29. नम: — शोधन बीज है ।
30. ह — गगन बीज है ।
31. श्रीं— लक्ष्मी बीज है ।
32. अहं— ज्ञान बीज है ।
33. ई — विष्णु बीज है ।
34. इ — हर बीज है ।
35. ल: — तंत्र बीज है ।
36. क्ष: — फट् शस्त्र बीज है
37. य: — उच्चाटन और विसर्जन बीज है ।
38. य — वायुयान बीज है ।
39. जूं — विद्वेषण बीज है ।
40. श्लीं — अमृत बीज है ।
41. क्षीं — सोम बीज है ।
42. ख — खादन बीज है ।
43. हंस — विष को दूर करने वाला बीज है ।
44. क्ष्म्ल्व्र्यूं— पिंड बीज है ।

बीज अक्षरों के लिए कुछ सांकेतिक शब्द

1. ॐ – तार:, ध्रुव, वैदादि, नैगमादि श्रुत्यादि ।
2. ह्रीं—माया, लज्जा, शक्ति, शिव पार्वती, भुवनेश, गिरजा नाम और बीज है ।
3. श्रीं—लक्ष्मी नाम और लक्ष्मी बीज है ।
4. हुं—वर्म, कवच त्रितत्वं, क्रोध छंद ।
5. लं—पृथ्वी नाम और बीज है ।
6. वं—जल नाम और बीज है ।
7. रं—अग्नि नाम और बीज है ।
8. यं—वायु नाम और बीज है ।
9. ह—आकाश नाम और बीज है ।
10. ग्लौं—नर बीज है ।
11. हूं—कूर्च, दीघ्र, वर्म, दीर्घ तनुच्छंद है ।
12. क्लीं:—कदर्प काम बाण नाम ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

13. नमः—चित्त, नाम और नमस्कार मंत्र है ।
14. स्वाहा—विराम, अग्निवाच, वनिता, अग्नि-प्रिया, दहन क्रिया, पावक, द्विठः टद्वय है ।
15. आं ह्रीं क्रों—यह तीन पाशादी बीज है ।
16. ऐं ह्रीं श्रीं—त्रिबीज है ।
17. त्रीं—तारण बीज है ।
18. च्रा—चंडी बीज है ।
19. स्त्रीं—स्त्री बीज है ।

इन्हीं बीज अक्षरों द्वारा पूर्वाचार्यों ने मंत्रों का निर्माण किया है । बीजाक्षर यहां सामान्य बीज अक्षरों का वर्णन किया गया है । जो रात दिन उपयोग में आते हैं । आचार्यों द्वारा मंत्रों की पुस्तक लिखते समय अत्यधिक चीजों को गुरूगम्य (गुप्त) रखा है । जिसका आसानी से ज्ञान हो सकना कठिन है ।

24. प्रश्न :— *ब्राह्मण व क्षत्रीय को कौन-कौन से बीज वाले मंत्र-ग्रहण करने चाहिएं और क्यों ?*

उत्तर :— विविध वर्णों को देय बीज मंत्र :— ब्राह्मणों को माया (ह्रीं) काम (क्लीं) श्री (श्रीं) तथा वाग् (ऐं) बीज देने चाहिएं । माया बीज को छोड़कर शेष (क्लीं, श्रीं एवं ऐं) ये तीनों बीज क्षत्रियों को, श्री (श्रीं) एवं वाक् ।

25. प्रश्न :— *मंत्र विद्या के तीन भेद कौन से हैं ?*

उत्तर :— आगामवेत्ता विद्वानों ने बीज मंत्र, मंत्र तथा मालामंत्र ये मंत्रों के तीन भेद बतलाये हैं । दस अक्षरों तक के मंत्र 'बीज मंत्र' ग्यारह से बीस अक्षरों तक के मंत्र 'मंत्र' तथा बीस अक्षरों वाले 'माला मंत्र' कहलाते हैं ।

26. प्रश्न :— *विविध अवस्थाओं में सिद्धिदायक मंत्र कौन-कौन से हैं ?*

उत्तर :— उपासक की बाल्यावस्था में बीज मंत्र सिद्ध होते हैं । युवावस्था में 'मंत्र' सिद्ध होते हैं तथा वृद्धावस्था में माला मंत्र सिद्ध होते हैं । उक्त अवस्थाओं से भिन्न अवस्था में उपने अभीष्ट की सिद्धि के लिए साधक को बीज मंत्र आदि मंत्रों का दिगुणित जप करना चाहिए ।

27. प्रश्न :— *पुरुष-स्त्री व नपुंसक मंत्रों की क्या पहचान है ?*

उत्तर :— विद्वानों ने पुरुष, स्त्री व नपुंसक इस तरह तीन प्रकार के मंत्र बतलाये हैं । जिन मंत्रों के अंत में 'वषट्' या 'फट्' होता है वे पुरुष कहलाते हैं । 'वौषट्' एवं 'स्वाहा' अंत वाले मंत्र स्त्री तथा 'हूं' एवं 'नमः' अंत वाले मंत्र नपुंसक कहलाते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वश्य उच्चाटन एवं स्तम्भन में पुरुष मंत्र सिद्धिदायक होते हैं। श्रुद्रकर्म एवं रोगों के नाश में स्त्रीमंत्र शीघ्र सिद्धि देते हैं। अभिचार में नपुंसक मंत्र (सिद्धिदायक) कहे गये हैं। इस प्रकार सभी मंत्र तीन प्रकार के होते हैं।

28. प्रश्न :— *मंत्र दोष मुक्ति का विशेष उपाय क्या है?*

उत्तर :— यदि अनेक बार शोधन करने पर भी शुद्ध मंत्र न मिलता हो तो (मंत्र के) पहले माया (ह्रीं) काम (क्लीं) तथा श्री (श्रीं) बीज लगाना चाहिए। अथवा दोष युक्त मंत्र को प्रणव से संपुटित कर, जपने से यह सिद्ध हो जाता है। अथवा क्रम एवं व्युत्क्रम वर्णमाला से जप करने पर मंत्र सिद्ध हो जाता है। जिस व्यक्ति की, जिस मंत्र में विशेष भक्ति व श्रद्धा हो वह मंत्र (उसके लिए) श्रेष्ठतम होता है। ऐसा मंत्र अरिवर्ग का होने पर भी उसे सिद्धिदायक होता है।

29. प्रश्न :— *मंत्र सिद्धि के लक्षण क्या हैं?*

उत्तर :— मन का प्रसन्न व संतुष्ट होना, दुंदुभि, गीत व ताल का शब्द सुनना, गंधर्वों को देखना, अपने तेज को सूर्य के समान देखना, निद्रा, क्षुधा एवं जप में आनंद की अनुभूति होना, स्वस्थ एवं गम्भीर होना, क्रोध एवं लोभ का अभाव होना, मंत्रवेत्ता साधक को जब ये चिह्न दिखाई दें, तब मंत्र की सिद्धि तथा देवता की प्रसन्नता की जानी चाहिए।

सिद्धि प्राप्त करने के बाद मंत्र का अधिक जप तथा ज्ञान प्राप्ति के लिए अधिक प्रयत्न करते हुए स्वार्थ को त्याग कर परोपकार की भावना रखनी चाहिए। मुक्त हस्त से दान देना चाहिए। गौ-ब्राह्मणों का सत्कार व अतिथि का पूजन करना चाहिए।

30. प्रश्न :— *षड्कर्म किसे कहते हैं?*

उत्तर :— अब सिद्धिदायक षड्कर्मों के बारे में बतलाते हैं। मंत्र मार्तण्ड के विद्यार्थियों को इसकी विस्तृत जानकारी होनी चाहिए। शांति, वश्य, स्तम्भन, विद्वेषण उच्चाटन एवं मारण-ये षड्कर्म कहलाते हैं। रोग आदि के नाश को शांति, कथनानुसार करने को वश्य, वृत्तियों के निरोध को स्तम्भन, मित्रों में शत्रुता को विद्वेषण, स्थान से हटाने के उच्चाटन तथा प्राणों को हरण को मारण कहते हैं। षड्कर्मों का ही प्रारूप है।

31. प्रश्न :— *षड्कर्मों के देवता एवं उनके वर्ण क्या हैं?*

उत्तर :— रति, वाणी, रमा, ज्येष्ठा, दुर्गा एवं काली (यथा क्रमेण शांति आदि षड्कर्म के) देवता होते हैं तथा श्वेत, अरुण, हल्दी (पीला), मिश्रित, श्यामल (काला)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एवं धूसर-ये उक्त देवताओं के वर्ण होते हैं। प्रत्येक कर्म के प्रारंभ में उसके रंग के अनुरूप पुरुषों से पूजन करना चाहिए।

32. प्रश्न :— *षड्कर्म की दिशाएं कौन-कौन सी हैं?*

उत्तर :— ईशान, उत्तर, पूर्व, नैऋत्य, वायव्य, एवं आग्नेय-ये क्रमश: शांति आदि कर्मों की दिशाएं मानी गई हैं। शांति आदि कर्मों में उनकी दिशा की ओर मुख करके जप करना चाहिए।

33. प्रश्न :— *षड्कर्म हेतु कौन-कौन से दिन प्रशस्त हैं?*

उत्तर :— शुक्ल पक्ष की द्वितीया, तृतीया, पंचमी एवं सप्तमी को बुध एवं बृहस्पतिवार होने पर शांति कर्म करने चाहिएं। वशीकरण कर्म में (शुक्ल पक्ष की) चतुर्थी, षष्ठी, नवमी एवं त्रयोदशी को सोमवार एवं बृहस्पतिवार होना प्रशस्त माना गया है। विद्वेषण में अष्टमी, नवमी, दशमी एवं एकादशी को शुक्र या शनिवार हो तो शुभ कहा गया है। यदि कृष्ण पक्ष में की अष्टमी एवं चतुर्दशी को शनिवार हो तो फलसिद्धि के लिए उच्चाटन करना चाहिए। कृष्ण पक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी एवं अमावस्या तथा शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को रवि, मंगल या शनिवार हो तो यह स्तम्भन एवं मारण में शुभ होता है।

34. प्रश्न :— *षड्कर्म की होममुद्राएं कौन-कौन सी हैं?*

उत्तर :— मृगी, हंसी एवं सूकरी-ये तीनों होम की मुद्राएं कहलाती हैं। मध्यमा, अनामिका एवं अंगूठे के योग से 'मृगीमुद्रा' बनती है। कनिष्ठा को छोड़कर शेष सब उंगुलियों को मिलाने से 'हंसीमुद्रा' बनती है। हाथ के संकोच से 'सूकरी मुद्रा' बनती है। इस प्रकार इन तीनों मुद्राओं के लक्षण बतलाये गये हैं। शांति में मृगी, वश्य में हंसी तथा स्तम्भनादि अन्य कर्मों में सूकरी मुद्रा का उपयोग किया जाता है।

35. प्रश्न :— *षड्कर्मा की समिधाएं कौन-कौन सी हैं?*

उत्तर :— शांति कर्म में गाय का घी मिलाकर दुर्वा की मिधा से, वश्य में बकरी का घी मिलाकर अनार की समिधा से, स्तंभन में भेड़ का घी मिलाकर अमलतास की समिधा से, विद्वेषण में अलसी का तेल मिलाकर धतूरे की समिधा से, उच्चाटन में सरसों का तेल मिलाकर धतूरे की समिधा से, तथा सरसों का तेल मिलाकर आम की समिधा से एवं मारण में कटुतैल मिलाकर खैर की समिधा से होम करना प्रशस्त माना गया है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

36. प्रश्न :— *षड्कर्मों की माला एवं जप रीति व संख्या क्या है ?*

उत्तर :— शांति आदि षड्कर्मों में क्रमश: शंख की, कमलगट्टा की, नींबू की, नीम की, घोड़े के दांत की तथा गदहे के दांत की जपमाला बनानी चाहिए । शांति, वश्य, पुष्टि, भोग एवं मोक्ष के लिए जप करते समय मध्यमा में स्थित माला को अंगूठे से घुमाना चाहिए । स्तंभनादि में साधक को अनामिका एवं अंगूठे से जप करना चाहिए । विद्वेषण एवं उच्चाटन में तर्जनी एवं अंगूठे से जप करना चाहिए तथा मारण में साधक को कनिष्ठिका एवं अंगूठे से जप करना चाहिए । शुभ कार्यों में माला की मणियों की संख्या 108, 54, तथा 27 होती है तथा अभिचार 15 मणियों की माला होती है ।

37. प्रश्न :— *अग्नि प्रज्वलित करने की लकड़ियां कौन-कौन सी हैं ?*

उत्तर :— शुभ कर्मों में बेल, आक्, एवं दूध वाले वृक्षों की लकड़ियों से तथा अशुभ कर्म में कुचिला, बहेडा, नींबू, धतूरा एवं लिसोड़े की लकड़ियों से मांत्रिक को अग्नि प्रज्वलित करनी चाहिए ।

38. प्रश्न :— *षड्कर्मों के लेखन द्रव्य व लेखनी कैसी होनी चाहिए ?*

उत्तर :— शांति आदि षड्कर्मों में चंदन, गोरोचन हल्दी, गृहधूम, चिता का अंगार तथा विषाष्टक यंत्र लिखने के द्रव्य होते हैं (यंत्र तरंग में) पूर्वोक्त लेखन द्रव्यों को भी तत्तद कामना से लेना चाहिए । पीपल, मिर्च, सोंठ, बाज की बीट, अण्डी, गृहधूम, धतूरे का रस तथा लवण इन 8 वस्तुओं को विषाष्टक कहते हैं । शांति एवं वश्य में भोजपत्र पर, स्तंभन में बाघंबर पर, विद्वेषण में गदहे की खाल पर, उच्चाटन में ध्वजा के वस्त्र पर, तथा मारण में मनुष्य की हड्डी पर मांत्रिक को यंत्र लिखना चाहिए ।

39. प्रश्न :— *विभिन्न प्रकार के कर्मों हेतु कैसी लेखनी लेनी चाहिए ?*

उत्तर :— शांति में सोने की, चांदी की या चमेली की, वश्य में दूध की, स्तंभन में अगस्त्य वृक्ष की या अमलतास की, विद्वेषण में करज की, उच्चाटन में बहेडे की तथा मारण में मनुष्य की हड्डी को लेखनी बनाना चाहिए ।

शुभ कर्मों में साधक को शुभ मुहुर्त में लेखनी बनानी चाहिए तथा अशुभ कार्य में रिक्ता, चतुर्थी, नवमीं एवं चतुर्दशी (तिथि मंगलवार एवं विशिष्टिकरण) में उसे बनाना चाहिए ।

40. प्रश्न :— विभिन्न षड्कर्मों में कौन सी सुची लेनी चाहिए ?

उत्तर :— शांति आदि षड्कर्मों में क्रमश: वृत्ताकार, पद्माकार, चतुरस, त्रिकोण षडकोण एवं अर्धचंद्राकार कुण्ड पश्चिम, उत्तर पूर्व, नैऋत्य, वायव्य एवं दक्षिण दिशा में बनाने चाहिएं । शांति में सुवर्ण के तथा वश्य में यज्ञवृक्ष

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के सुवा एवं सुची बनाने चाहिए। स्तंभन आदि कर्मों में लोहे के बनाने चाहिएं।

42. प्रश्न :— *षड्कर्म हेतु भक्ष्य वस्तुएं कौन सी हैं ?*

उत्तर :— शांति एवं वश्य कर्म करते समय हविष्यान्न, स्तंभन करते समय खीर, विद्वेषण करते समय उड़द एवं मूंग, उच्चाटन करते समय गेहूं, तथा मारण करते समय मांत्रिक को मसूर एवं काली बकरी के दूध की खीर बनानी चाहिए।

42. प्रश्न :— *षड्कर्मों में प्रयुक्त तर्पण की वस्तुएं, पात्र व आसन कैसे होने चाहिएं ?*

उत्तर :— शांति वश्य में हल्दी मिलाकर, स्तंभन एवं मारण में मिर्च मिला गुनगुना जल, तथा विद्वेषण एवं उच्चाटन में भेड़ का खून मिला हुआ जल तर्पण द्रव्य कहा जाता है। शांति एवं वश्य में सोने के पात्र में, स्तंभन में मिट्टी के पात्र में तथा मारण में मुर्गी के अंडे में तर्पण करना चाहिए। मृदु आसन पर बैठकर शांति एवं वश्य में तपर्ण करना चाहिए, स्तंभन में घुटनों से उठकर तथा विद्वेषण आदि में एक पैर से खड़ा होकर तर्पण करना चाहिए।

43. प्रश्न :— *मंत्र सिद्धि के लक्षण क्या हैं ?*

उत्तर :— मन का प्रसन्न एवं संतुष्ट होना, दुंदुभि, गीत एवं ताल का शब्द सुनना, गंधर्वों को देखना, अपने तेज को सूर्य के समान देखना, निद्रा, क्षुधा एवं जप में आनंद की अनुभूति होना, स्वस्थ एवं गम्भीर होना, मंत्रवेत्ता साधक को जब ये चिन्ह दिखलाई दें, तब मंत्र की सिद्धि तथा देवता की प्रसन्नता जाननी चाहिए। सिद्धि प्राप्त करने के बाद मंत्र का अधिक जप तथा ज्ञान प्राप्ति के लिये अधिक प्रयत्न करना चाहिए।

44. प्रश्न :— *मंत्र सिद्धि होने पर क्या करना चाहिए ?*

उत्तर :— विषयों के आसक्त चित्त वाले मनुष्यों के संतोष के लिए प्राचीन आचार्यों ने काम्य प्रयोग बतलाये हैं। किंतु ये हितकर नहीं होते। काम्य कर्मों को करने वालों को केवल उतना ही फल होता है। किंतु निष्काम भाव से उपासना करने वालों को समस्त सिद्धियां मिलती हैं।

सुख प्राप्ति के लिए प्रत्येक मंत्र के जो काम्य प्रयोग बतलाए गए हैं, उनकी आसक्ति को छोड़कर निष्काम भाव से देवता की उपासना करनी चाहिए।

45. प्रश्न:— *मंत्र के पचास दोष कौन-कौन से हैं ?*

उत्तर— शास्त्रकारों ने मंत्र के 50 दोष माने हैं जो इस प्रकार हैं :—

1. छिन्न—कटा हुआ, विभक्त किया हुआ, पद विच्छेद कर के बोला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हुआ मंत्र। कोई पद कहीं और कोई पद (शब्द) कहीं लगा हुआ ।

2. रुद्र—भयानक व डरावनी वाणी में बोला जाता हुआ मंत्र।
3. शक्तिहीन—कमजोर।
4. विमुख—उदासीन, प्रतिकूल, असर बताने वाला मंत्र।
5. बधिर—बहरा।
6. नेत्रहीन—अंधा।
7. कीलित—बंद किया हुआ, कीलन किया हुआ मंत्र।
8. स्तंभित— रुका हुआ।
9. दग्ध—जला हुआ या श्रापित मंत्र।
10. संत्रस्त—घबराया हुआ।
11. भीत—डरा हुआ।
12. मलिन—मैला
13. तिरस्कृत—ठुकराया हुआ।
14. भेदित—तोड़ा हुआ।
15. सुषुप्त—अर्धसुप्ता अवस्था में बोले जाने वाला मंत्र।
16. मदोन्मत्त—नशे में मदहोश होकर बोला गया मंत्र।
17. मूर्छित—बेहोश।
18. हतवीर्य—जिसमें से वीर्य (तेज) चुरा लिया गया है।
19. हीन—निम्नकोटि का।
20. प्रध्वस्त—नष्ट किया हुआ।
21. बाल— बालक अवस्था का नासमझ।
22. कुमार— किशोरावस्था की ओर जाता हुआ।
23. युवा—जवान।
24. प्रौढ़—अधवृहद्।
25. वृद्ध—बूढ़ा, अवन्नत।
26. निस्त्रिश—ई कार आदि शक्तियों से हीन।
27. निर्बीज—बीजरहित (बिना बीज वाला)।
28. सिद्धिहीन—सिद्धि से रहित।
29. मन्द—धीरे-धीरे काम करने वाला।
30. कुट—गुप्तपापी, टेढ़ा चलने वाला या रहस्य से युक्त।
31. निशंक—निर्भय।
32. सत्वहीन—ताकत से रहित।
33. केकर—भेंगी आंख वाला।
34. बीजहीन—बीजरहित।
35. धूमिल—कुछ-कुछ अस्पष्ट शब्दावली वाला।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

36. आलिंगित—किसी से लिपटा हुआ ।
37. मोहित—वशीकरण से युक्त ।
38. क्षुधार्त—भूखा (भूखा पेट से बोला जाता हुआ मंत्र) ।
39. अतिदृश—बहुत लोगों द्वारा देखा गया ।
40. अंगहीन—अंगरहित (अंगन्यास से हीन) ।
41. अतिक्रुद्ध—बहुत ही क्रोधावस्था में पढ़ा जाने वाला मत्र ।
42. अतिक्रूर—अत्यन्त भंयकर ।
43. सव्रीड़—लाजवाला ।
44. शांत मानस—शांत मनवाला ।
45. स्थानभ्रष्ट—स्थान से भटका हुआ ।
46. विकल—दु:खी ।
47. नि:स्नेह—प्रेमरहित ।
48. अतिवृद्ध—बूढ़ा ।
49. पीड़ित—त्रास को प्राप्त हुआ ।
50. दण्डित—दण्ड प्राप्त किया हुआ (शापयुक्त) ।

जो इन 50 दोषों को न जानते हुए जप करता है, वह सिद्धि को प्राप्त नहीं होता है । शास्त्रकारों ने इस बारे में कहा है — अर्थात् साधक को सर्वप्रथम अपने द्वारा प्रयोग में लानें वाले मंत्र के संबंध में भली-भांति इस बात की तसल्ली कर लेनी चाहिए कि मेरे द्वारा काम में लाए जाने वाला मंत्र कहीं इन दोषों से तो उत्पीड़ित नहीं है । यदि हो तो उस दोष को दूर करके, तत्पश्चात ही मंत्र का प्रयोग करना चाहिए ।

46. प्रश्न :— *देवपूजन के भेद क्या हैं ?*

उत्तर :— पूजनम् (पूज् + ल्युट्) का सीधा सादा अर्थ सम्मान करना, सादर स्वागत करना, पूजा करना, आदरपूर्वक भेंट चढ़ाना है । सगुणोपासना में देवपूजन का बड़ा भारी महत्व है । प्राचीन वैदिक काल से ही अग्नि, सूर्य, वरुण, रुद्र, इंद्र इत्यादि देवताओं की दिव्य शक्तियों का पूजन होता रहा है तथा इनसे प्राप्त चमत्कारिक उपलब्धियों से इतिहास भरा पड़ा है । पुरातन परंपरा से ही हमें देवार्चन की दो विधियां प्राप्त होती हैं (1) याग और (2) पूजा ।

47. प्रश्न :— *याग किसे कहते है ?*

उत्तर :— अग्निहोत्र द्वारा अर्चन करना याग अथवा यज्ञ है । यह अनेक लोगों के सहयोग से होता है । इसमें मंत्रों व परंपराओं का विशिष्ट क्रम रहता है । ये याग सकाम व निष्काम भेद से कई प्रकार के होते हैं तथा इनकी अनुष्ठेय क्रिया भी अलग-अलग प्रकार की होती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

48. प्रश्न :— *पूजा किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— किन्हीं निश्चित द्रव्यों के साथ देवताओं के अर्चन को 'पूजा' कहते हैं। पत्र, पुष्प, जल द्वारा अर्चन करना ही पूजा है। इस पूजा के द्वारा मनुष्य अपने आराध्य देव को प्रसन्न कर अभिलषित वर मांगता है। पंचोपचार से लेकर सर्वांग उपचार तक इन पूजाओं के कई विधान हैं।

49. प्रश्न:— *श्रौत व स्मार्त कर्म किसे कहते हैं ?*

उत्तर:— वैदिक परिपाटी, पौराणिक परिपाटी के, अन्तर्गत इन पूजाओं के मंत्रों में भेद रहता है। वैदिक को 'श्रौत' एवं पौराणिक परिपाटी को 'स्मार्त' कर्म कहते हैं।

50. प्रश्न:— *वैदिक मंत्र किसे पढ़ना चाहिए ?*

उत्तर:— जो यज्ञोपवीत द्विज हों, वे वैदिक मंत्रों तथा पौराणिक मंत्रों से अपने आराध्य (इष्ट) की पूजा कर सकते हैं। जिनके यज्ञोपवीत न हो, वे वैदिक मंत्रोच्चारण करके केवल पौराणिक मंत्रों द्वारा पूजन संपन्न कर सकते हैं।

51. प्रश्न:— *पूजा-विधान के विभिन्न भेद क्या हैं ?*

उत्तर:— (अ) पंचोपचार पूजा :- गंध अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य इन पांच प्रकार की सामग्री व विधि के द्वारा की गई, पूजा पंचोपचार पूजा कहलाती है।

(ब) दसोंपचार पूजा :- 1. पाद्य, 2. अर्घ्य, 3. आचमन, 4. स्नान, 5. वस्त्र, 6. गंध-अक्षत, 7. पुष्प, 8. धूप, 9. दीप, 10. नैवेद्य। इन उपचारों से की गई पूजा दसोंपचार पूजा कहलाती है।

(स) देव पूजन :— षोडशोपचार पूजा - 1. ध्यान-आवाहन, 2. आसन, 3. पाद्य, 4. अर्घ्य, 5. आचमन, 6. स्नान, दूध, दही आदि के स्नान (अभिषेक), 7. वस्त्र, 8. यज्ञोपवीत, आभूषण इत्यादि, 9. गंध (चंदन, अबीर, गुलाल, अक्षत वगैरह, 10. पुष्प (अंग पूजा अर्चना इत्यादि), 11. धूप (दशांग इत्यादि), 12. दीप, 13. नैवेद्य (फल, प्रसाद व सूखा मेवा इत्यादि), 14. ताम्बूल दक्षिणा, निराजन जल-आरती वगैरह, 15. प्रदक्षिणा, 16. पुष्पांजलि (नमस्कार, स्तुति इत्यादि)।

(द) राजोपचार पूजा :— षोडशोपचार के अतिरिक्त छत्र, चामर, पादुकादि एवं रत्नों, स्वर्ण, रजत आदि विविध राजसी सामग्री व सज्जा एवं वैभव के साथ की गई पूजा राजोपचार पूजन कहलाता है। यह पूजन राजा या उच्च पदस्थ राजकीय अधिकारियों के लिए विशिष्ट फलदाई माना गया है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

52. प्रश्न :— *'मदारी या दूसरे तांत्रिक की क्रिया' बांधने का विधान क्या है ?*

उत्तर :— मंत्र विद्या के क्षेत्र में जब व्यक्ति कुछ प्रसिद्ध होने लगता है तो प्रारंभ में कई तांत्रिक, कई मांत्रिक उसके ईर्ष्यालु हो जाते हैं। उसके कार्य में बाधा, उसकी साधना, में रुकावट पहुंचाते हैं। ऐसे में कभी किसी तांत्रिक या मदारी से सामना हो जाए तो प्रस्तुत 'मंत्र' मार्तण्ड के विद्यार्थियों के लिए बहुत उपयोगी साबित होगा। यह मंत्र बोलचाल की भाषा में लिखा गया दुर्लभ 'शाबरमंत्र' है। प्रयोग करने के पहले इस मंत्र को शुभ दिन, होली, दीपावली, सूर्य या चंद्र ग्रहण के दिन सिद्ध करके, कंठस्थ कर लेना चाहिए।

(1) घट-घट का तुम्बी, मरघट का मसान, बांध खेलाड़ी कच्चा मसान। विधि-यह तीन ब्रार पढ़कर अपने शरीर पर फेंके। साथ ही दो आत्मरक्षा मंत्र भी पढ़ लें।

(2) तांबा के तांबा बांधों, चांदी के चांदी बांधों, लोहा के लोहा बांधों, दोहाई उस्ताद हनुमान की, दोहाई हिंगलाज माता की दोहाई।

(3) मसान के मसान बांधों, चुड़ैल के चुड़ैल बांधों, भूत के भूत बांधों, दोहाई हिंगलाज की, दोहाई गौरखनाथ की, दोहाई हनुमान की, दोहाई सैयद पारी की।

(4) सैयद बरहना बारे भोरे उल्टी टेवर उल्टी पीर, बरहना, बारे भोरे, उल्टी चले उरहना पीर, सवा सेर का तोसा, अस्सी कोश का धावा मारे, ला एलाहा हल्लाहो, दोहाई मौलवी साहेब की हमारा ना करे तो तेरी महतारी के दूध हराम करे।

(5) सारी बांधों, दुसारी बांधों, सभी बांधों, सबूरा बांधों, काला बांधों, दीन बांधों, ताईबांधों, कामक्ष्या बांधों, महान् बांधों, देव बांधों, ताल बांधों, पानी बांधों, आग बांधों, तरैया बांधों, जल बांधों, फिरा उन बांधों, पुंगी बांधों, मसूरा बांधों, कन बांधों, कवी बांधों, अटका बांधों, बेला बांधों, गुलाब के फूल बांधों, दोहाई काला पहाड़ की, कांधी माई, दोहाई चूरा पीर की। बचाना चूरा पीर।

(6) कोड़ा बांधों, होरियल बांधों, अरबी बांधों, सारी बांधों, कई बांधों, तुम्बी बांधों, दोहिया तेलिया मसान की, दोहाई धोबनियां मसान की, दोहाई चुड़ैल की।

विधि—एक-एक मंत्र पढ़कर सरसों या काली उरद पढ़कर मदारी को मारे। उसे तरह-तरह का विपद होने लगेगा जैसे बरैया फोड़ा, अंधा होना। यानि नं० 1 से 6 लगातार पढ़ता जाए तो उसकी तुमड़ी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(पूंगी) बंद हो जाएगी । फिर धीरे-धीरे उसके मुंह की ओर घुसने लगेगी । आत्मरक्षा मंत्र पढ़कर पहले अपनी रक्षा कर लें फिर इन्हीं मंत्रों से तेल पढ़कर फूंककर यदि उस तेल से पकवान बनाया जाए तो बहुत कम तेल व घी सूखेगा । परंतु मंत्र पढ़ने वाले तैल पढ़कर अपनी हाथ से एक पकवान छानकर चूल्हे पर रख दें जो पीछे फकीर या कुत्ते को खिला दें ।

52. प्रश्न— (1) मदारी के खेल बांधने वाले किसी एक कण्ठस्थ शाबर मंत्र को बिना पुस्तक की सहायता के लिखें ?

(2) आत्मरक्षा मंत्र की क्या उपयोगिता है, संक्षिप्त में प्रकाश डालें ?

उत्तर :— पिछले पृष्ठों पर वर्णित है, देखें ।

53. प्रश्नः— *नजर उतारने का सटीक प्रयोग क्या है ?*

उत्तर :— मंत्रमर्मज्ञ को नजर उतारने का झाड़ा आना चाहिए क्योंकि किसी भी बच्चे व स्त्री पर नजर टोकार, टोने-टोटके का असर होने पर लोग शीघ्र ही किसी गुरु, तांत्रिक ओझा एवं कर्मकांडी ब्राह्मण के पास जाएंगे । परोपकार की दृष्टि से नज़र उतारने का यह प्रयोग यहां दिया गया है तथा ऐसा प्रयोग करने से आपको भी पता चल जाएगा कि आपके स्वयं की मंत्र शक्ति कितनी सार्थक है ।

नजर झाड़ने का मंत्र :—

सूर्य-चंद्र ग्रहण के समय जप करके इस मंत्र को सिद्ध कर लेना चाहिए । बालकों को नजर लग जाने पर मोर के पंख 11 बार झाड दें । उपस्थित व्यक्ति को राहत, सुख व शांति होगी ।

ॐ नमो सम्यनाम आदेश गुरु को, ॐ नमो नजर जहां पर पीर न न जानी, बोले छल सो अमृत वाणी । कहां नज़र, कहां से आई, यहां की ठोर तोहि कौन बताई । कौन जात तेरी, कांठाम, किसकी बेटी, क्या तेरो नाम । कहां से उड़ी, कहां को जाया, अब ही बस, कर ले तेरी माया । मेरी जात सुनो चित्त लगाय, जैसी होय सुनाऊं आय । तेलन, तमोलन, चुहड़ी, चमारी, कायथनी, खतरानी, कुम्हारी । महतरानी, राजा की रानी, जाको दोष ताहि सिर पड़े । हनुमंत वीर नजर से तेरी रक्षा करे । मेरी भक्ति गुरु की शक्ति, फुरो मंत्र ईश्वरी वाचा ।

रात दिन अनेक जिज्ञासु लोगों के पत्र आते हैं कि भूत-प्रेत बाधा निवारण करने हेतु कोई अमोघ मंत्र बतावें । व्यक्ति जब झाड़ा-झपटा, मंत्र-डोरा करने लग जाता है तब उसका ऐसे व्यक्तियों से भी पाला पड़ सकता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जो भूत-प्रेत, डाकिनी एवं अन्य ऊपरी बाधाओं से ग्रसित हों । ऐसी अवस्था में कुशल व दक्ष मंत्र शास्त्री को पहले से ही ये मंत्र किसी हनुमान मंदिर, सिद्ध पीठ में जाकर सिद्ध कर लेने चाहिए ताकि वक्त, बेवक्त किसी भी समय इन मंत्रों का उचित प्रयोग किया जा सके ।

54. प्रश्न :— *प्रेत बाधा निवारक अमोघ मंत्र कौन सा है ?*

उत्तर :— हनुमान जी के मंदिर में तेल का दीपक जलाकर 25000 जप करने से यह मंत्र सिद्ध होता है । फिर किसी तरह की प्रेत बाधा होने पर मोर पंख से 108 बार झाड़ दें । बाधा दूर होगी ।

'ॐ नमो दीप मोहे, दीप, जागे पवन चले, पानी चले, शाकिनी चले, डाकिनी चले, भूत-भूत चले, नौ सौ निन्यानवे नदी चले, हनुमान वीर की शक्ति मेरी, शक्ति फुरो मंत्र ईश्वरी वाचा ।'

बालकों के लिए :—

पहले ग्रहण के समय मंत्र का जप करके सिद्ध कर लें और किसी बालक को बाधा होने पर मंत्र को 21 बार बोलकर तीर से झाड़ दें तथा पानी को 21 बार मंत्र से अभिमंत्रित करके पिला दें—

ॐ काला भैरवा कपिली जटा, रात दिन खेले चौपटा ।
काला भस्म मुसाणा, जेहि मांगू तेहि पकड़ी आग ॥
डांकिनी शंखिनी पट्ट सिहारी, जरख चढ़ती, गोरख मारी ।
छोड़ि-छोड़ि रे पापिनी बालक पराया, गोरखनाथ का परवाना आया ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूजा क्या है

प्रश्न :— *पूजा किसे कहते हैं ? यह कितने प्रकार की होती है ?*

उत्तर :— पूजनम् (पूज् + ल्युट्) का सीधा-सादा अर्थ सम्मान करना, सादर स्वागत करना, आराधना करना, अर्चना करना, पूजा करना, आदरपूर्वक भेंट चढ़ाना है। सगुणोपासना में देव पूजन का बड़ा भारी महत्त्व है। प्राचीन वैदिक काल से ही अग्नि, सूर्य, वरुण, रुद्र, इंद्र इत्यादि देवताओं एवं दिव्य शाक्तियों का पूजन होता रहा है तथा इनसे प्राप्त चमत्कारिक उपलब्धियों से इतिहास भरा पड़ा है। पुरातन परम्परा से ही हमें देवार्चन की दो विधियां प्राप्त होती हैं। (1) याग और (2) पूजा।

किन्हीं निश्चित द्रव्यों के साथ देवताओं के अर्चन को पूजा कहते हैं। पत्र, पुष्प, जल द्वारा अर्चन करना ही पूजा है। उस पूजा के द्वारा मनुष्य अपने आराध्य देव को प्रसन्न कर अभिलषित वर मांगता है। पंचोपचार से लेकर सर्वाङ्ग उपचार तक इन पूजाओं के कई विधान हैं।

प्रश्न :— *पंचोपचार पूजन किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **पंचोपचार पूजा—** गंधाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य इन पांच प्रकार की सामग्री व विधि के द्वारा की जाने वाली पूजा पंचोपचार पूजा कहलाती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रश्न :— *दसोपचार पूजन किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— दसोपचार पूजा—(1)पाद्य, (2) अर्घ्य, (3)आचमन, (4)स्नान, (5)वस्त्र, (6)गंध, अक्षत, (7)पुष्प, (8)धूप, (9)दीप, (10)नैवेद्य । इन उपचारों से की गई पूजा दसोपचार पूजा कहलाती है ।

प्रश्न :— *षोडशोपचार पूजन किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— षोडशोपचार पूजा—(1)ध्यान, आवाहन, (2)आसन, (3)पाद्य, (4)अर्घ्य, (5)आचमन, (6)स्नान दूध, दही आदि से (अभिषेक स्नान), (7)वस्त्र, (8)यज्ञोपवीत आभूषण इत्यादि, (9)गंध (चंदन, अबीर, गुलाल, अक्षत वगैरह) (10) पुष्प-पत्र (अंग पूजा अर्चना इत्यादि), (11)धूप (दशांग इत्यादि), (12) दीप, (13)नैवेद्य (फल, प्रसाद व सूखा-मेवा इत्यादि), (14) ताम्बूल, दक्षिणा, नीराजन, जल आरती वगैरह, (15) पुष्पांजलि, (16) प्रदक्षिण नमस्कार स्तुति आदि ।

प्रश्न :— *राजोपचार पूजन किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— राजोपचार पूजा—षोडशोपचार के अतिरिक्त छत्र, चामर, पादुकादि एवं रत्नों से विविध सामग्री व सज्जा से की गई पूजा राजोपचार पूजन कहलाता है ।

प्रश्न :— *अर्घ्य किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— देवता या अति सम्मानित व्यक्ति के प्रति आदरपूर्वक दी गई आहुति को अर्घ्य कहते हैं । अर्घ्य प्रदान करना देवपूजन का प्रारंभिक विधान है । जिसके आठ अंग कहे गए हैं । यथा—

आपः क्षीरं कुशाग्राणि दध्यक्षततिलास्तथा
मेवा सर्षपाश्चैव अष्टाङ्गो अर्घ्य उच्यते ॥

—*अनुष्ठान प्रकाश /पृ०10*

1. जल, 2. दूध, 3. कुश, 4. दही, 5 . चावल, 6. तिल, 7. यव, 8. सरसों ये आठ प्रकार की सामग्री अर्घ्य के अविभाज्य अंग कहे गये हैं ।

प्रश्न :— *अर्घ्य कहां जरूरी है ?*

उत्तर :— सूर्य को अर्घ्य दिये बिना शंकर या विष्णु का पूजन न करें । क्योंकि सूर्य, चंद्र, यम, काल और पञ्च महाभूत ये नौ शुभाऽशुभ कर्म के साक्षी माने गये हैं । सारे देव मेरे शरीर में रहकर मेरे मंत्र के साक्षी हैं । अतः हे देवो ! मेरे पूर्वजन्म में अर्जित जो भी विद्या है वह मुझे प्रदान करो । ***(—गंधर्व तंत्र)***

यज्ञ प्रारंभ करने के पूर्व आचार्य व ब्रह्मा को अर्घ्य दिया जाता है तथा विवाह वेदी पर वर को कन्या का पिता अर्घ्य प्रदान करता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रश्न :— *अर्घ्य का निषेध कहां है ?*

उत्तर :— शंख के जल से सूर्य को अर्घ्य न देवें । लोहपात्र (स्टील) से अर्घ्य नहीं दिया जाता । सूर्य भगवान को अर्घ्य ताम्र में, रक्तपुष्प या चंदन-कुमकुम मिश्रित जल से दिया जाता है ।

प्रश्न :— *पूजन में वर्ज्य पदार्थ कौन-कौन मे हैं ?*

उत्तर— बासी जल, पत्ते, पुष्प,फल ये सभी पूजा में वर्जित हैं । केवल गंगाजल, तुलसीपत्र, बिल्वपत्र और कमल वर्जित नहीं है ।

बासी (पर्युसित) पुष्प चाहे सोने के भी हों उससे देवी की पूजा न करें । बिल्वपत्र व महंगे पुष्प, आंवले के पत्ते, तमाल के पत्ते, कल्हार के पत्ते, तुलसी के पत्ते, कमल, मणियों के पुष्प या जिन पुष्पों की कलियां हैं वे पुष्प कभी बासी नहीं होते । कमल और आंवले के पुष्प 3 दिन तक शुद्ध रहते हैं । करवीर के पुष्प 1 दिन, सफेद व रक्त कमल के पुष्प 5 दिन तक बासी नहीं होते ।

पंकजं पंचरात्रं स्याद्दशरात्रं च बिल्वकम् ।
एकादशाहं तुलसी नैव पर्युसिता भवेत् ॥

कमल 5 रात, बिल्व दस रात, तुलसी 11 रात तक बासी नहीं होती ।
सड़े, गले, कटे हुए असुगंधित पुष्प पूजा में वर्ज्य हैं ।

नाक्षतैरचयेत् द्विष्णुं न तुलस्या गणाधिपम् ।
न दूर्वया यजेद्देवी, बिल्वपत्रैशच भास्करम् ॥

विष्णु का पूजन चावलों से, गणपति का तुलसी से, देवी का दुर्वा से और सूर्य का बिल्वपत्र से पूजन कभी न करें ।

प्रश्न :— *यज्ञ किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— 'यज्ञ' धातु नङ् प्रत्यय से कोई भी पवित्र या भक्ति संबंधी क्रिया यज्ञ कहलाती है । परंतु व्यावहारिक रूप से अग्निहोत्र द्वारा अर्चन करना याग अथवा यज्ञ है । यह अनेक लोगों के सहयोग से होता है । इसमें मंत्रों व परंपराओं का विशिष्ट क्रम रहता है । ये याग सकाम व निष्काम भेद से कई प्रकार के होते हैं तथा इनकी अनुष्ठेय क्रिया भी अलग-अलग प्रकार की होती है । शास्त्रों में यज्ञ से बढ़कर कोई भी पवित्र कर्म नहीं कहा गया है । अर्थात् यज्ञ सबसे पवित्रतम कर्म है ।

प्रश्न :— *पूजन की वैदिक परिपाटी एवं पैराणिक परिपाटी में क्या भेद है ?*

उत्तर :— (1) वैदिक परिपाटी, (2) पौराणिक परिपाटी के अन्तर्गत इन पूजाओं के मंत्रों में भेद रहता है ।

जो यज्ञोपवीतधारी द्विज हो, वे वैदिक मंत्रों तथा पौराणिक मंत्रों से अपने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आराध्य (इष्ट) की पूजा कर सकते हैं। जिनके यज्ञोपवीत न हो, वे वैदिक मंत्रों का उच्चारण न करके केवल पौराणिक मंत्रों द्वारा पूजन सम्पन्न कर सकते हैं। साधकों की-सुविधा के लिए हम यहां पर सर्वमान्य सर्वोपचार पूजन पद्धति दे रहे हैं जिसके द्वारा साधक किसी भी देवता की पौराणिक व वैदिक पद्धति से पूजन कर सकता है।

प्रश्न :— *घर में मूर्तिपूजा एवं लिङ्ग स्थापना के क्या विधान हैं?*

उत्तर :— रत्न, सुवर्ण-चांदी, पीतल व तांबे तथा लोहे लकड़ी व मिट्टी की प्रतिमाएं घरों में पूजी जा सकती हैं। इनमें महर्घ श्रेष्ठ कहलाती है व अन्य घटिया (भा० पु० 11/27/12) शिव पूजा में नर्मदा का बाण-लिङ्ग विशेष महत्त्व का है। मत्स्य पुराणानुसार घर में पूजनार्थ प्रयुक्त मूर्तियां अंगूठे के आकार से 12 अंगुल तक हो सकती हैं और 16 अंगुल से अधिक नहीं होनी चाहिए। स्मृत्यन्तरों में वर्णित है—

'एका मूर्ति र्न पूज्यैव गृहिणा स्वेष्टमिच्छता अनेक मूर्तिसम्पन्नः सर्वान्कामावाप्नुयात्॥ गृहेलिङ्गद्वयंनार्च्यं गणेश भित्रयतथा, शंखद्वयं तथा सूर्योनार्च्यौं शक्तित्रयंतथा। द्वे चक्रे द्वारकायाश्च शालिग्राम शिलाद्वयम् तेषातु पूजनेनैव उद्वेगं प्राप्नुयाद्गृही॥ रविर्विनायक श्चण्डी ईशो विष्णुस्तथैवच अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमेतुमहद्भयम्॥

अकेली मूर्ति की पूजा नहीं करनी चाहिए साथ में अनेक मूर्तियां होना आवश्यक है।

घर में दो लिङ्ग नहीं होने चाहिएं तीन व अधिक हो सकते हैं। इसी तरह गणेश की मूर्तियां ३ नहीं होनी चाहिएं। दो शंख दो सूर्य, तीन देवी की मूर्तियां, 2 चक्र, दो शालीग्राम की शिलाएं घर में नहीं पूजनी चाहिए। इनसे कम या अधिक संख्या श्रेष्ठ हैं। ऐसा न होने पर पूजन से उद्वेग प्राप्त होता है। सर्व पूजनों में सर्व प्रथम सूर्य को अर्घ्यादि से पूजितकर गणपति का पूजन करें; फिर अम्बिका का, उसके बाद महादेव का तब विष्णु का, पूजन करें यही क्रम प्रशस्त है। इसमें व्युत्क्रम होने पर भय उपस्थित होता है।

प्रश्न :— *शिव पंचायत किसे कहते हैं?*

उत्तर :—

आदित्यं गणनाथं च देवी रुद्रं च केशवम्।
पञ्चदैवत्य मित्युक्त सर्व कर्मसु पूजयेत्॥ (वाचस्पति)
यदातु शंकरं मध्ये ऐशान्यां श्रीपतिंयजेत्
आग्नेयां च तथा हंसं नैर्ऋत्यां पार्वतीसुतम्
वायव्यां च तथा पूज्या भवानी भक्तवत्सल।

(श०ना०र०ग०दे०)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रुद्र जप करते वक्त शिव पंचायतन की पूजा करना श्रौतकर्म समान है । शिव पंचायतन मध्य में शंकर, ईशान में विष्णु, अग्निकोण में सूर्य, नैर्ऋत्य में गणपति और वायव्यकोण में पार्वती का पूजन कहा गया है । वोपदेव व अन्य ऋषियों का मत है कि स्थान व्यतिक्रम से देवपूजा की जाएगी तो वह पूजन हानिप्रद होगा । **'स्वस्थान वर्जिताःदेवाः शोक दुःख भयप्रदाः ।'** यह पंचायत पूजन आद्यशंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित है ।

प्रश्न :— *किस देवता को कौन से पुष्प प्रिय हैं ?*

उत्तर :— अतिप्रिय पुष्प—

शङ्कर को बिल्वपत्र, विष्णु को तुलसी, गणेश को दुर्वा, सूर्य को कणेर (करवीर) और देवी को नाना प्रकार के सुगंधित पुष्प अतिप्रिय होते हैं ।

प्रश्न :— *शिवजी के पार्षद कौन-कौन से कहे गये हैं ?*

उत्तरः— सदा शिव पार्श्वकाः

बाण रावण चण्डीशनन्दी भृंगीरिषादयः ।
सदा शिवप्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तुशांभवाः ॥
अन्यच्च-बाण रावण चण्डश्च नन्दी भृंगी रिषादयः ॥

बाण, रावण, चंड, नंदी, भृंगी आदि शिवपार्षदों की पूजा या स्मरण भी रुद्र जप का एक अंग है ।

प्रश्न :— *शिवलिङ्ग या बाण पर आवाहन क्यो नहीं होता ?*

उत्तर :— शिव के लिङ्ग या बाण पर आवाहन निषेध—

बाणलिंगानि राजेन्द्र ख्यातानि भुवनत्रये
न प्रतिष्ठा न संस्कारस्तेषा चावाहनंतथा । (भविष्य पु०)
कम्बुश्चक्रं शैलभवा नार्मदेयाऽञ्जनीयनी,
बाणो विष्णु शिला चैषां प्रतिष्ठां नैवकारयेत् ।

(भरत माला मार्कण्डय उक्तिः)

शैली दारुमयीं हैनीं धात्त्वाद्याकारसम्भवाम्
प्रतिष्ठां वै प्रकुर्वीत प्रासादे वा गृहेनृप ॥

(बृहदपाराशरः नाममालाया)

भविष्य पुराण, भरतमाला व नाममाला के मतानुसार शिव के बाणलिंग, घरों में पूजनार्थ प्रयुक्त लिंगों की प्रतिष्ठा व उनके आवाह्नों की आवश्यकता नहीं है । केवल मंदिरों में स्थिर-लिंगों की ही प्रतिष्ठा की जाती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रश्न :— *दशाङ्ग धूप किसे कहते हैं?*

उत्तर :— मदनरत्न के अनुसार छः भाग कुष्ठ, दो भाग गुड़, तीन भाग लाक्षा पांचवां भाग नखला, हरीतकी, राल समान अंश में, दपै एक भाग, शिलाजय तीन लव जितना,नागरमोथा चार भाग, गुग्गल एक भाग लेने से अतिउत्तम दशांङ्ग धूप तैयार हो जाता है ।[1]

अन्य मत के अनुसार चंदन, कुष्ठ, नखला, राल तथा गुड़, शर्करा, नखगंध, जटामांसी, लघु, क्षौद्र सबको समभाग में मिश्रित कर जलाने से उत्तम धूप बनती है । इसको दशाङ्ग धूप[2] कहते हैं ।

रुहिकाख्य, कण, दारुसिह्लक,अगर, सित, शंख, जातीफल, श्रीश ये धूप भी श्रेष्ठ माने जाते हैं ।

प्रश्न :— *षोडशाङ्ग धूप किसलिए काम आता है तथा इसमें कौन-कौन से पदार्थ होते हैं?*

उत्तर :— अगर, तगर, कुष्ठ, शैलज, शर्करा, नागरमोथा, चंदन; इलायची, तज, नखनखी, मुशीरं, जटामांसी, कर्पूर, तालीसदल, कर्पूर, गुग्गलः ये सोलह प्रकार के धूप माने गये हैं जो कि देवता एवं पितृ-कार्यों में प्रशस्त है इसे षोडशाङ्ग धूप[3] कहते हैं ।

प्रश्न :— *अष्टगंध किसे कहते हैं? यह कित ने प्रकार का होता है?*

उत्तर :— कर्मकांड एवं यंत्र लेखन में अष्टगंध के प्रयोग का सर्वत्र उल्लेख मिलता है, परंतु अष्टगंध किसे कहते हैं ? यह कितने प्रकार की होती है ? तथा कौन-सी अष्टगंध कहां काम लेनी है इसका विस्तृत विवेचन प्राय: कहीं नहीं देखा गया । शारदा तिलक के अनुसार (1) चंदन (2) अगुरु (3) कर्पूर (4) तमाल (5) जल (6) कुंकुम (7) कुशीत (8) कुष्ठ । इन आठ पदार्थों को अष्टगंध में लिया गया

---

1. षड्भागकुष्ठं द्विगुणो गुडश्च लाक्षात्रयं पञ्चनखस्य भागाः॥
हरीतकीसर्जरसं समांशं दर्पैक भागं त्रिलवं शिलाजम्।
घनस्य चत्वारि पुरस्य चैको धूपो दशाङ्ग कथितो मुनीन्द्रैः॥
—मदन रत्न

2. चंदनोभयकुष्ठं च नरवसजकचारकः।
एतत् गुडसमानेन धूप भवति चोत्तमम्।
शर्करा नखगंध च जटामांसी लघुः समम्।
क्षौद्रेण सहसंमिश्रं धूपं भवति चोत्तमम्॥

3. अगुरुतगुरुकुष्ठं शैलजं शर्करा स्यादुभयघन पुरस्ताच्चन्दनैला श्चसाक्षात्।
त्वच नरवर मुशीरं मांसि कर्पूरतालीसदल जलकचोरं जाति युग्धूपराजः॥
—तंत्रसार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है परंतु यह अष्टगंध शैव सम्प्रदायों को ही प्रिय है ।[1]

एक अन्य मत के अनुसार (1) कुंकुम (2) अगुरु (3) कस्तूरी (4) चंद्रभाग (5) त्रिपुरा (6) गोरोचन (7) तमाल (8) जल इत्यादि को बराबर मात्रा में यदि लिया जाए तो यही अष्टगंध शैव एवं शाक्त दोनों संप्रदायों को अभीष्ट है ।[2]

चंदन, अगुरु, ह्रीवेर, कुष्ठ, कंकुम, सेव्यका, जटामांसी, मुर ये आठ प्रकार की गंध वैष्णवों[3] को प्रिय हैं ।

उपासना भेद के कारण उपरोक्त तीनों प्रकार के अष्ट गंधों का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है ।

प्रश्न :— *पंचगंध किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— कालिकापुराण के अनुसार भली-भांति चूर्ण की हुई अथवा खूब अच्छी तरह से घोटी हुई, अग्नि द्वारा भस्म बनाई हुई, तरल अवस्था में घुली हुई (जल मिश्रित) किंवा अच्छी तरह से (कपड़छाण) संमर्दन की हुई इन पांच प्रकारों से गंधों को प्रयोग में लिया जाता है जो कि देवताओं को सुखदायक मानी गई हैं ।

प्रश्न :— *पंचामृत किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **पंचामृत—**

हेमाद्रि शिवधर्मों में बताया गया है कि दही, दूध, शर्करा, शहद और घृत ये पांचों मिलकर पंचामृत कहलाते हैं ।

पञ्चामृतं दधि क्षीरं सिता मधु घृतं स्मृतम् ।।

—हेमाद्रौ शिवधर्मे

प्रश्न :— *पंचरत्न किसे कहते हैं ?*

उत्तर :— **पंचरत्न**—सोना, हीरा, नीलम, पुखराज और मोती । शास्त्रकारों ने इन पांचों को 'पंचरत्न' कहा है । पंचरत्न विशिष्ट पूजन व तांत्रिक प्रयोगों में काम आते हैं । रत्न के अभाव में सोने की व्यवस्था शास्त्रकारों ने दी है । विष्णु धर्मोत्तर के अनुसार—मुक्ता, सोना, वैदूर्य्य, पद्मराग, पुष्पराग, गोमेद, नील, गारुत्मत और

---

1. चंदनागुरु कर्पूर त माला जलकंकुमम् ।
   कुशीतं कुष्ठसंयुक्तं शैवं गंधाष्टकं विदुः ।।
2. कंकुमागुरुकस्तूरी चंद्रभागैः समीकृतैः ।
   त्रिपुराप्रीतिदो गंधस्तथा चण्डाश्च शम्भुना ।।
3. चंदना गुरु ह्रीबेरकुष्ठ कुकुम सेव्यकाः ।
   जटामांसी मुरमिति विष्णोर्गन्धाष्टकं विदुः ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रवाल (मूंगा) ये महारत्न माने गये हैं।

कनकं कुलिशं नीलं पद्मराग च मौक्तिकम्।
एतानि पंचरत्नानि रत्नशास्त्रविदो विदुः ॥

—समयप्रदीप,कालिका पुराण —स्मृत्यंतरे

प्रश्न :— *पंचपल्लव किसे कहते हैं?*

उत्तर :— पंचपल्लव—

पीपल, गूलर, प्लक्ष, आम और बड़ की डारें ये पंचपलव कहलाते हैं। कर्मकांड व तांत्रिक पूजाओं में इनका बड़ा भारी महत्त्व है।

अश्वत्थोदुम्बरप्लक्षचूतन्यग्रोधपल्लवा,
पञ्चपल्लवा इति ख्याताः सर्वकर्मसु शोभनाः ॥

—ब्रह्माण्डपुराणे

और यह भी कहा गया है कि पंचपल्लव के अभाव में सुवर्ण पत्र रखें।

अभावे सर्वरत्नानां हेम सर्वत्र योजयेत ॥

प्रश्न :— *पंचगव्य किसे कहते हैं?*

उत्तर :— पंचगव्य—

गोमूत्र, गोमय (गोबर) दूध, दही, घृत एवं कुशा से मार्जित जल युक्त मिश्रण को शास्त्रकारों ने 'पंचगव्य' कहा है जो कि महापातक दोषों को नाश करने वाला माना जाता है। विष्णुधर्म में कहा है कि जितना पंचगव्य बनाना हो तो आधा अंश तो गोमूत्र लेना चाहिए। तीन भाग गोबर और तीन ही भाग दूध का होना चाहिए। दो भाग दही और एक भाग घृत, बाकी का कुशाजल होना चाहिए।

प्रायश्चित एवं पवित्रिकरण प्रक्रिया व आत्मशुद्धि में पंचगव्य का बड़ा भारी महत्त्व है।

गोमूत्रं गोमय क्षीरं दधि सर्पि कुशोदकं,
पञ्चगव्यमिदं प्रोक्तम्महापातक नाशनम् ॥

—वशिष्ठ संहितायाम्

प्रश्न :— *पंचवर्ण किसे कहते हैं? मंडल-प्राचीन माडंले एवं हवन इत्यादि में कौन-कौन से रंग काम में लाये जाते थे? उनको बनाने की प्रक्रिया क्या थी?*

उत्तर :— पंचवर्ण—

(मंडलार्थ पंचवर्णानि) हवन इत्यादि मांगलिक कार्यों में पांच प्रकार के रंगों का प्रयोग शास्त्रकारों ने इस प्रकार किया है—श्वेत के स्थान में गेहूं, चावल तथा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यव का चूर्ण, कुसुम, सिंदूर और गेरू के लाल रंग के स्थान में, हरताल व हल्दी के चूर्ण को पीले रंग के स्थान में, जले हुए जौओं से काला तथा पीले और काले से हरा रंग बना लेना चाहिए । अन्य प्रकार के रंग या केमिकल हवन एवं मंडल इत्यादि में काम नहीं आते ।

प्रश्न :— *पंचपात्र किसे कहते हैं ? ये कौन-कौन से होते हैं एवं इनका प्रयोजन क्या है ?*

उत्तर :— प्राय: प्रत्येक धार्मिक अनुष्ठान में 'पंचपात्र' लिखाया जाता है परंतु बहुत से सज्जन पंचपात्र क्या है ? इसके बारे में नहीं जानते । पूजन के प्रयुक्त होने वाले पांच ताम्बे के बर्तनों के सैट को 'पंचपात्र' या 'पंचोपात्र कहते हैं । इन बर्तनों के नाम इस प्रकार हैं:

1. तिरबाणी (ताम्बे की प्लेट) 2. पंचपात्र (ताम्बे की छोटी गिलास) 3. आचमनी (ताम्बे का छोटा चम्मच) 4. अर्घ्य (ताम्बे का बड़ा चम्मच पत्ते की आकृति में) 5. घंटा—इन बर्तनों के बिना संध्या वंदन नहीं हो सकता ।

पंचपात्र में पवित्र जल रखा जाता है । आचमनी द्वारा उसे ग्रहण किया जाता तथा तिरबाणी में संकल्पित जल छोड़ा जाता है । अर्घ्यपात्र देवताओं को अर्घ्य देने हेतु काम आता है तथा देवताओं के आगमन हेतु घंटानाद किया जाता है । घंटानाद से असुरप्रवृत्तियों का नाश होता है । इसके ध्वनि-कंपन से शुभ कर्मों की सूचना मिलती है । इसलिए पंचपात्र का सैट प्रत्येक नवीन पूजा को प्रारंभ करने के पूर्व मंगवाया जाता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वैदिक मंत्रोच्चार एवं स्वर परिचय

संसार में ज्ञान की सदा प्रशंसा होती है और अज्ञान की निन्दा । जो वेदपाठी विद्वान् वेदों को पढ़कर उसके अर्थ को नहीं जानता, वह उस स्थाणु (गधे) के समान है जो चंदन के भार को ढोता हुआ भी उसके उपयोग से वंचित है । अर्थ को न जानकर पुस्तक पढ़ने वाला व्यक्ति केवल व्यर्थ ही श्रम करता है क्योंकि वह वेदवाणी को देखता हुआ भी नहीं देखता और इस पवित्र वाणी को सुनता हुआ भी (अर्थ ग्रहण के अभाव में) नहीं सुनता । निरुक्तकार यास्क कहते हैं—'ऋतुकाल के पश्चात उत्तम वस्त्रों से अलंकृत कामयमाना पत्नी जिस प्रकार अपने पति के आगे अपना सर्वस्व शरीर खोलकर रख देती है, ठीक उसी प्रकार से अर्थ के अभिमानी स्वामी (मर्मज्ञ) के आगे वेदवाणी भी (निर्वस्त्र) नग्न हो जाती है अर्थात् मर्मज्ञ वेदांती इसके तत्त्व को प्राप्त कर लेता है ।'

वैदिक मंत्रों की उच्चारण-शुद्धता उसके अर्थज्ञान पर निर्भर है तथा वेद में अर्थज्ञान का आधार स्तम्भ है स्वरज्ञान । व्याकरणाचार्य पाणिनि कहते हैं जिसे वैदिक स्वरों का ज्ञान नहीं उसे वैदिक (संहिता) पाठ करने का कोई अधिकार नहीं । यथा—

मंत्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वा, मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह ।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ॥

—पा० शि० श्लोक 52

इंद्र के पराभव के लिए वृत्र द्वारा किये गये यज्ञ में 'इंद्रशत्रुर्वर्धस्वः' मंत्र से आहुति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दी जा रही थी। तत्पुरुष समास में उत्तरपद में उदात्त स्वर होना चाहिए था। जिसका अर्थ होता—इंद्र का शत्रु अर्थात् वृत्र बढ़े। इसके स्थान पर उच्चारण भेद से (पूर्व पद में उदात्त के कारण) यह शब्द बहुब्रीहि बन गया और इसका अर्थ हुआ कि— इंद्र बढ़े। स्वर की अशुद्धता के कारण अर्थ बिल्कुल उल्टा हो गया और वृत्र का नाश हो गया।

स्वर परिचय–

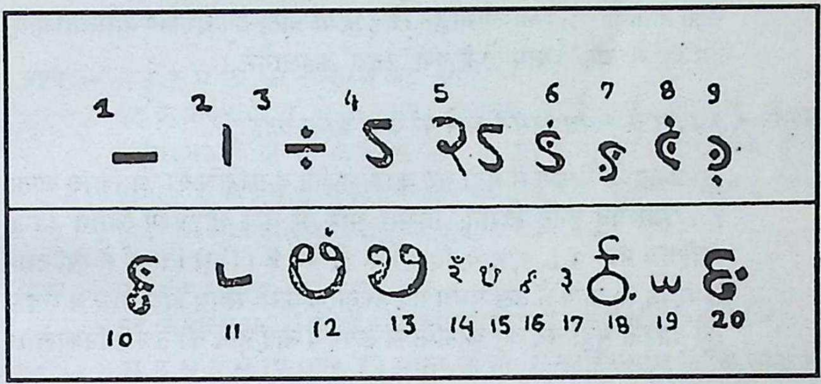

प्रश्न :— *अनुदात्त किसे कहते हैं?*

उत्तर :— 1. एक पड़ी-रेखा (Horizontal stroke)(—)से चिह्नित वर्ण को 'अनुदात्त' कहा जाता है। **नीचैरनुदात्तः** उच्चारण स्थान के निम्न भाग से उच्चारित बीच का स्वर अनुदात्त माना जाता है। यह हमेशा उदात्त स्वर के पूर्व होता है। यथा—**सहस्राणि** इस पद में **'ह'** उदात्त और **'स'** अनुदात्त है।

प्रश्न :— *उदात्त किसे कहते हैं?*

उत्तर :— **उच्चैरुदांतः**— उदात्त को उच्च स्वर माना जाता है। उदात्त स्वर के उच्चारण में गात्रौं को ऊपर खींचा जाता है। ध्वनि को कठोर बनाया जाता है तथा कंठ को दबाकर उच्चारण किया जाता है। वैदिक (संहिता) पाठ में उदात्त स्वर को अचिन्हित छोड़ दिया जाता है। यथा—**सहस्राणि**।

इस पद में अचिह्नित वर्ण 'ह' उदात्त कहलायेगा।

प्रश्न :— *समाहार किसे कहते है?*

समाहार स्वरित—स्वरित को उदात्त व अनुदात्त का समाहार (मध्यम स्वर) माना जाता है। यह एक स्वतंत्र स्वर है। नियमानुसार उदात्त के बाद आने वाला अनुदात्त स्वरित के रूप में बदल जाता है। स्वरित को वर्ण के ऊपर एक खड़ी रेखा (|)Vertical stroke से चिह्नित किया जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यथा—**संहस्राणि।**

इस पद में 'सा' वर्ण स्वरित कहलाएगा।

प्रश्न :— *स्वरित के बाद आने वाले अनुदात्त को क्या कहते हैं?*

उदात्त, अनुदात्त व स्वरित स्वरों के अलावा एक '**प्रचय**' नामक स्वर भी होता है। स्वरित के बाद आने वाले अनुदात्त चाहे एक हो या अनेक उनकी 'प्रचय' संज्ञा होती है। इन्हें भी अचिह्नित छोड़ दिया जाता है। यथा—**नासत्याभ्याम्**, इस पद में '**या,**' **भ्याम्** दोनों वर्ण 'प्रचय' कहलायेंगे।

प्रश्न :— *मंत्रपाठ के समय विसर्ग आने पर क्या करना चाहिए?*

इस प्रकार के विसर्ग में मुट्ठी बंद करके तर्जनी व कनिष्ठिका को खोला जाता है। '**विसर्गेषु ईषद् विरामः**' विसर्ग आने पर कुछ थोड़ा सा विराम करना चाहिए। नं० 3, 6, 7, 8, 9, विसर्ग के ही भेद हैं। जिस विसर्ग में बिन्दियां ऊपर (6, 8) होती हैं उस समय मंत्र उच्चारण करते समय हाथ मध्य में रखते हुए दाहिनी मुट्ठी बंद कर कनिष्ठिका ऊपर व बाएं हाथ की तर्जनी निकालें।

प्रश्न :— *अवग्रह किसे कहते हैं?*
उत्तर :— अवग्रह ऽ में कुछ विश्राम लेते हुए 'अ' की दीर्घ ध्वनि निकलती है।

प्रश्न :— *प्लुत स्वर क्या होता है?*
उत्तर :— **प्लुत स्वर** को 2 या 2 ऽ से चिह्नित किया जाता है। मंत्र बोलते समय दाएं हाथ की तर्जनी व मध्यमा को मुट्ठी से खोलकर, हाथ ऊपर की ओर ले जाते हुए तर्जनी को तीन बार ऊपर नीचे करते हुए 'आ' की ध्वनि का दीर्घ उच्चारण किया जाता है। नं. 14, 17 भी यही स्वर हैं।

नं० 10, 12, 13, 15, 16, 18 व 20 '**घू**' के भेद है। नं० 12, 13, 15 ह्रस्व '**घू**' के बोधक चिह्न हैं इनको बोलते समय अंगुष्ट तर्जनी के मूल का स्पर्श करता है। नं० 10, 16 दीर्घ '**घू**' बोधक चिह्न है। इनको बोलते समय अंगूठे से टक्कर देकर सीधी तर्जनी अंगुली बाहर निकाली जाती है। नं० 18 व 20 भी इसी प्रकार मध्यम घोष वाला 'घू' है। इसमें तर्जनी बिना टक्कर के छोड़ी जाती है।

11. अनुदात्त से वापस स्वरित में अक्षर बोलते समय यह चिह्न लगाया जाता है। इसको उच्चारित करते समय हाथ घुमाया (Round)जाता है। 19. यह स्वर अनुदात्त बोधक है। इसको बोलते समय गोकर्णवत् हाथ को नीचे की तरफ उल्टा किया जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उच्चारण नियम—

प्रश्न :— *यजुर्वेद में 'ख' का उच्चारण कहां होगा ?*
यजुर्वेद में मूर्धन्य **'ष'** का उच्चारण **'ख'** होता है । परंतु यदि ट वर्ग (ट, ठ, ड, ढ, ण) से संयुक्त हो तो 'स' का उच्चारण होगा । यथा— **'उष्ण'** में 'ख' नहीं बोला जाकर 'स' बोला जायेगा । यदि 'ष' के पूर्व में न, व,स इत्यादि वर्ण हो तो इसका उच्चारण 'श्' वत् बोला जायेगा । यथा—**नमऽउष्णीषिणे** (5/22) **इष्णन्निषाणामुम्म** (2/22) ।

प्रश्न :— *यजुर्वेद में 'ज' का उच्चारण कहां होगा ?*
पद के प्रारंभ में **'य'** हो तो उसका उच्चारण **'ज'** होता है । यदि 'ह', ऋ र से 'य'संयुक्त हो तो पद के प्रारंभ, मध्य व अंत में भी इसका उच्चारण **'ज'** ही होगा । 'र' से युक्त ह, य होने पर उसका द्वित्त्व होता है और उच्चारण 'ज' ही होता है । यथा—**तं य्यज्ञम्बर्हिषि** (2/9) ।

प्रश्न :— *यजुर्वेद में द्वित्त्व 'त्त्व' कहां लगेगा ?*
पद के प्रारंभ में 'व' हो तो उसका द्वित्त्व होता है । **व्वेदाहमेतं** (2/18) ।
श, ष, स, ह से रेफ (हल् 'र') संयुक्त हो तो **'र'** का उच्चारण 'रे' हो जाता है । ह्रस्व **'ऋ'** पृथक हो या किसी व्यंजन से युक्त हो तो उसका उच्चारण भी 'रे' हो जाता है । यथा—**सहस्त्रशीर्षापुरुषः** (2 ।1) ।

प्रश्न :— 'घृ' किसे कहते है ? इनमे दीर्घ व ह्रस्व 'घृ' की पहचान क्या है ?
अनुस्वार के पीछे **श, ष, ह** या **'र'** हो तो **'घृ'** का उच्चारण होता है । अनुस्वार के पूर्व का स्वर ह्रस्व हो तो **'घृ'** का उच्चारण दीर्घ होता है और पूर्व का स्वर दीर्घ हो तो **'घु'** का उच्चारण ह्रस्व होता है ।
'आन्' के आगे कोई स्वर आवे तो 'न्' का चंद्रबिंदु हो जाता है और 'आ' का उच्चारण प्लुत स्वर में होता है । यथा— **'तञ्जुनाँ'2 अनु (4 ।3)**
यजुर्वेद में पदांत हलंत **'म्'** को पूरे 'म्' की तरह उच्चारित किया जाता है तथा इसको बोलते समय मुष्टिका बंद कर दी जाती है ।
पदांत 'न्' को बोलते समय अंगुष्ठ व तर्जनी के नखों का परस्पर स्पर्श किया जाता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रुद्राभिषेक पुष्य-नक्षत्र को ही क्यों ?

कर्मकाण्ड में 'पुष्य नक्षत्र' पर ही रुद्राभिषेक तथा नाना प्रकार की रत्न-जड़ित मुद्रिकाओं के प्राणप्रतिष्ठा एवं बालारिष्ट के नाश हेतु बच्चों के गले में चांदी से निर्मित मोती युक्त 'चंद्र' पर अभिषेक का विशेष प्रावधान है ऐसा क्यों ? कारण स्पष्ट है कि 'पुष्य' शब्द पौष्टि, पोषण से संबंधित है । इसका शाब्दिक अर्थ पौषण एवं पोषाहार करना है । पौषण भौतिक सुख ज्ञान एवं शारीरिक स्वस्थता के लिए किया जाता है । 'पुष्य नक्षत्र' का प्रतीक है गाय का थन । यह पुरुष लिङ्ग है । इसके तीन तारे (तीनों लोकों के द्योतक व त्रिकाल ताप नाशक) हैं । यह आकाश में मध्य मार्ग में स्थित है एवं इसका देवता बृहस्पति तथा राशि कर्क है । गाय के थन का गुण दूध प्रदान करने के लिए है । दूध सकल विश्व का आहार है । इस आहार का रस शरीर की विभिन्न ग्रंथियों में पहुंचकर चित्त वृत्तियों को प्रभावित करता है । वृत्ति या व्यवहार का संबंध कार्य प्रणाली से है । यह कर्क राशि के अधिष्ठित है ।

कर्क राशि चर, जल, संज्ञक सौम्य, सत्त्वगुणी, विप्रवर्ण, बहुप्रसव व श्वेत रंग वाली दैवी गुण संपन्न ओजस्वी ब्राह्मण-राशि है । इसका शारीरिक लक्षण नरम तथा मृदु है इसका मानसिक लक्षण कल्पना है । पुष्य व चंद्र का अन्योनाश्रित संबंध है यही कारण है कि 'पुष्य' पर आरूढ होकर चंद्रमा बलशाली होकर स्वगृही कहलाता है । इसका देवता बृहस्पति ज्ञान, विद्या, विवेक, प्रज्ञा, बुद्धिमानी व आयु प्रदान कर अनेक अरिष्ट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

योगों को भंग करता है ।

'किं कुर्वन्ति ग्रहा सर्वे यस्य केंद्रे बृहस्पति' सर्वाधिक प्रसिद्ध उक्ति है । जिस कुंडली में 'बालारिष्ट योग' बन गया हो उस स्थान पर किंवा उस ग्रह विशेष पर यदि बृहस्पति की दृष्टि पड़ जाय तो वह योग भंग होकर 'जीव योग' में परिवर्तित हो जाता है । इसलिए बृहस्पति का दूसरा नाम **'जीव'** रखा गया है । बृहस्पति व चंद्र दोनों दैवीगुण संपन्न सौम्य व जीवदाता होने से इनका भी अन्योनाश्रित संबंध है । बृहस्पति व चंद्र के केंद्रगत होने पर, दृष्टि संबंध होने पर तथा इनको आपस में भिन्न-भिन्न स्थिति पर ऋषियों ने अनेकानेक योगों की सृष्टि का वर्णन किया है । यहां पुष्य नक्षत्र पर अभिषेक वास्तव में, पुष्टिवर्द्धक नक्षत्र का जीवदाता बृहस्पति के सान्निध्य में होकर, बच्चों का मातृवत् पालन करने वाला, रोग नाशक तथा अमृतकणों को सृष्टि करने वाले, प्राणदाता चंद्र के अधिष्ठित होने वाले इस नक्षत्र के घटिपलों में ही 'रुद्र' को प्रसन्न करने हेतु किया गया 'रुद्राभिषेक' विशेष कल्याणकारी होकर फलदायी होता है इसमें संदेह नहीं । ज्योतिष शास्त्र में भी चंद्र को मन का कारक माना गया है यह मन का नियंत्रक है ।

मनोवैज्ञानिकों का कथन है वायु तथा मन दोनों ही गतिमान हैं अत: वहन शक्ति पर चंद्र असर डालता है । मानसिक चिकित्सालय के रोगी पूर्णिमा के रोज अधिक विकल हो उठते हैं । पूर्णिमा के रोज जितने बच्चे पैदा होते हैं उतने अन्य समय पर नहीं होते हैं । चंद्र का प्रभाव मस्तिष्क व रीढ़ पर पड़ता है । चंद्र की शीतल रश्मियां स्वास्थ्य के लिए काफी लाभप्रद सिद्ध हुई हैं । वेदों में **'पय: पृथिव्यापयं औषधि'** मंत्र से दूध को औषधि और अमृत का प्रतीक माना है जो चंद्र को ही लक्ष्य करता है । पृथ्वी का सबसे निकटतम ग्रह चंद्र है । इसका जल तत्त्व पर विशेष प्रभाव है । जल, यह चल-तत्त्व है कभी स्थिर नहीं रहता, अत: चंद्र चंचल है और मन भी । शीध्रगति ग्रह चंद्र है और मन भी ज्योतिष शास्त्र में **'मनस्तु हिमगु'** ऐसा कहा है । इस तरह चंद्र का मन से पूर्ण साम्य है । चंद्र जिस राशि पर हो वही जातक की जन्म राशि होती है । उसी से मन का स्वभाव और वृत्ति का पता चलता है । एक डाक्टर व ज्योतिषी व्यक्ति ने 40000 कुंडलियों का अध्ययन करके निष्कर्ष रूप में बताया है कि चंद्र का प्रभाव प्राणी मात्र पर पड़ता है । चंद्र-ग्रहण के बाद तेजी से जंतुओं की उत्पत्ति होती है जो कि हानिकारक होती है अत: धर्मशास्त्र ग्रहण के वेध के समय अन्न-जल ग्रहण का निषेध करते हैं और उसके तुरंत बाद स्नान का विधान रखते हैं ताकि दूषित जंतुओं से मन व शरीर पर कुप्रभाव न पड़े । खगोल, भूगोल, पदार्थ, रसायनवेत्ता डॉक्टरों ने स्वीकार किया है कि ग्रह सजीव और निर्जीव दोनों पर अपना प्रभाव डालते हैं । यही स्थूल प्रभाव सूक्ष्म जगत में कर्मकांड प्रक्रिया द्वारा दूर किया जा सकता है ।

अत: चंद्र प्रतीक पय का रुद्र पर अभिषेक करके विष पर अमृत चिंतन की प्रक्रिया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

से कल्याण चाहा जाता है । आश्वलायन गृह्य सूत्र (4-9-16) में कहा है कि इस संसार के सभी नाम सभी सेनाएं रुद्र की हैं । ऋग्वेद काल से ही रुद्र एक महत्त्वपूर्ण देवता रहा हैं । रुद्र को 'ऋढूदर' जिसका पेट कोमल हो ऋग्वेद (2-23-5) कहा है तथा वाजसनेया संहिता में **'नीलकंठ'** विष पीने के कारण (6-7) कहा है । रुद्री में रुद्र को **'सहस्राक्ष'** सूर्य कहा है । 'नमोऽस्तु'नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे' रुद्र के भूमण्डल में असंख्य रूप गिने गये हैं **'असंख्याता सहस्राणि'** सूर्य से ही समस्त सौर परिवार का जन्म हुआ है । यही सूर्य रुद्र है । यही सूर्य काल है । रुद्र इसका निष्क्रिय देवता है । बाण या लिङ्ग रूप शिव का प्रतीक है । यह उसी रूप में पूजा जाता है । सूर्य निष्क्रिय अग्नि का गोला नहीं है । वह सक्रिय है और प्रतिपल सूर्य की तरंगों से रूपान्तरण भी पृथ्वी के प्राणी को कंपित करता है । यह प्रसिद्ध है कि कोई व्यक्ति बीमार तब पड़ता है जब उसके और उसके जन्म के साथ जुड़े हुए नक्षत्रों के बीच तारतम्य टूट जाता है । सूर्य और चंद्र के बीच ही नक्षत्र है । चंद्र नक्षत्राधिपति है अतः चंद्र प्रतीक दूध का रुद्र पर अभिषेक करना श्रेष्ठ माना है । ज्वर रोग, पागलपन को शांत करने व दीर्घायु हेतु लोग शिव पूजन करते हैं क्योंकि महाकाल, रुद्र काल के विजेता हैं और सर्वत्र शक्तिमान प्रलयंकर्ता दोनों ही रूप में हैं । कोमल हृदय होने से आशुतोष हैं । सहस्राक्ष सहस्रों किरणों वाले होने से सब के लिए सर्वत्र गतिमान हैं ।

शिव पर बिल्वपत्र आदि उत्तम औषधियों के पत्र शिव में अग्नितत्त्व और तेजस बढ़ाते हैं । जलतत्त्व में आर्द्रता व अग्नि दोनों ही विद्यमान हैं । ऐसे तत्त्व पर पय की धारा करने में अमृत तत्त्व का उदगम होता है । पय में ओज और औषधि तत्त्व का मिश्रण होता है जिसका आचमन भक्त की तेजस्विता को उद्दीप्त कर मन को पय रूप अमृत का पान कर शीतलता व सुख का अनुभव कर संतोषित होते हैं । भक्त को मुंह मांगा वरदान मिल जाता है । **'औढ़र वरदान'** के रूप में शिव तो प्रसिद्ध हैं । यही कारण है कि सर्वत्र दुग्ध मिश्रित जलधारा ही शिव पर चढ़ाई जाती है । ऐसा करने से सूक्ष्म जगत में नक्षत्रों के मध्य टूटे हुए तारतम्य पुनः जुड़ जाते हैं ।

रुद्राभिषेक दूध से ही क्यों करें

हर सोमवार को शिवजी पर रुद्राभिषेक की प्रक्रिया लोक में प्रचलित है । प्रदोष के दिन या श्रावण मास में तो रुद्राभिषेक करना भारत भर में सर्वानुमोदित क्रिया है । ज्योतिष शास्त्र भी स्थान-स्थान पर अनीष्ट निवारणार्थ, रुद्राभिषेक को महत्त्व देता है; खासकर चंद्र जनित दोषों के लिए या दीर्घायु कामनार्थ महामृत्युंजय जप और रुद्राभिषेक को रामबाण औषधि के रूप में व्यवहृत करता है । प्राचीन समय से ही गौदुग्ध रुद्राभिषेक में विशेष मान्य किया है । रुद्र पर अभिषेक करते वक्त पञ्चामृत, विजया, जल और दूध

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के अलग-अलग प्रयोग विशेषतः प्रयुक्त किए जाते हैं। इस कर्मकांड के पीछे क्या वैज्ञानिक रहस्य हैं, इस पर विचार करना आज के युग में अभिप्रेत है।

ज्योतिर्विज्ञान के अनुसार चंद्र एक जल तत्त्व है। चंद्रमा कर्क राशि का अधिष्ठाता है। कर्क राशि जलभू, जलचर, सौम्य, रात्रिबली, सम, बहुशक्ति, स्निग्धकांति, विप्रवर्ण, पृष्ठोदय, स्त्री संज्ञक, चर, मृदु, जलतत्त्व, अपद, गुलाबी रंग,शीत, कफधातु, बहु प्रजाकारक, वक्षस्थल की अधिष्ठाता है। अतः सारे गुण औषधिनाथ चंद्र में हैं। चंद्र सुधांशु अमृतमय है। वह अपने अमृत सिंचन से जगत में औषधि व चराचर को प्राण देता है। चंद्र की उत्पत्ति क्षीर सागर से है। चंद्र चंचल है। वह अपनी कलानुसार घटता बढ़ता है। पूर्ण चंद्र को देखकर समुद्र में ज्वार उठता है। ज्योतिष में चंद्र को लेकर बहुत-से फलित संबंधित विवाद हैं। चंद्र की भिन्न-भिन्न अवस्थाएं हैं। मुख्यतः हीन, मध्य और पूर्ण बली इस तरह तीन प्रकार हैं। चंद्र यदि पूर्ण बली है तो उसे शुभ माना है और हीन बली है तो उसे पापी माना है। अष्टम स्थान में शुक्ल पक्ष का पूर्ण बली चंद्र दीर्घायु कर्त्ता है और वही हीन बली हो तो सद्यः मरण करता है। मान सागरी ने कहा है—

'कृष्णे पक्षे दिवा जन्म शुक्ल पक्षे यदा निशि, तदा षष्टाष्मः चंद्रः मातृवत् परिपालयेत्' चंद्र लग्नाधिपति होकर अथवा लग्नेश के साथ क्षीण बली हो और पापदृष्ट हो तो मनुष्य की मृत्यु अल्पायु में कर देता है। चंद्र का मन से विशेष संबंध है। वेदों में चंद्र की उत्पत्ति मन से कही है **'चंद्रमा मनसो जातः'** अतः चतुर्थेश होकर चंद्र जिस भाव में स्थित होगा मनुष्य के मन का विशेष रुझान उस भाव से प्रदर्शित वस्तुओं के प्रति होगा। चंद्र मन की तरह शीघ्रगामी ग्रह है। इस तरह चंद्र वस्तुतः मन का प्रतीत ग्रह है। चंद्र आठवें भवन में हो तो जल में डूबने या वात योग का भय रहता है। क्षीण चंद्र बारहवें भाव में बालारिष्टकर्त्ता है। अस्तु।

इधर समुद्र मंथन की कथा में स्पष्ट है कि चंद्र की उत्पत्ति जहां से हुई उसी समुद्र से अमृत और विष दोनों की उत्पत्ति हुई। अमृत को चंद्र ने पिया और विष को रुद्र ने पिया। रुद्र के विष जनित ताप के निवारणार्थ शिव ने चंद्र की एक कला धारण की और वे चंद्रशेखर कहलाए। चंद्र का नाम सुधांशु रखा गया।

दूसरी ओर भागवतकार ने तृतीय स्कंध में विराट पुरुष के वर्णन प्रसंग में रुद्र और चंद्र की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए लिखा है कि—

मनसचंद्रमा जातो, बुद्धिर्बुद्धेर्गिरांपतिः।
अहंकारस्ततो रुद्रः चितं चैत्य स्तनोऽभवत्॥ 26-161

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आगे वे लिखते हैं—

हृदयं मनसा चंद्रो नोदतिष्ठतदा विराट।
रुद्रोभिमत्या हृदयं नोदतिष्ठतदा विराट॥ 68-70

इससे स्पष्ट है कि हृदय वह स्थान है जिस पर मनुष्य का दारो मदार है। इसी हृदय में, मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त चारों समाविष्ट हैं। मन का देव चंद्र, बुद्धि का ब्रह्मा अहंकार का रुद्र और चित्त का स्वयं परमात्मा या क्षेत्रज्ञ (आत्मा) है। गीता ने शरीर को क्षेत्र और आत्मा को क्षेत्रज्ञ कहा है।

'इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्र मित्यभिउधीयते'

और **'क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि'** से क्षेत्रज्ञ आत्मा और परमात्मा का संकेत है। 'अहं' मनुष्य का सर्वाधिक प्रिय रूप है। अहं की बढ़ती उसे राक्षस (अहंकारी) बना देती है। अहं का न होना उसे निष्क्रिय बना देता है। अत: अध्यात्म मार्ग की यह उलझन है कि 'अहं' का क्या करे?

मनुष्य में यदि अहं (Ego) न रहे तो वह कोई भी कार्य क्यों करेगा? अत: अहं रखना भी है और उसे हटाना भी है। अत: अहं को ईश्वर के चरणों में रख दो। प्रभु का ही अहं, मैं तेरा हूं, यह अहं शुद्ध है। फिर कर्म जनित दोष नहीं होगा। मनुष्य **'शिव'** रूप हो जायेगा। अत: चंचल मन को बुद्धि की प्रेरणा से प्रेरित कर अहं का चित्त में समाधान करना है। यह प्रक्रिया 'रुद्राभिषेक' है। अत: ब्राह्मण की प्रेरणा ब्राह्मण द्वारा दूध से रुद्र पर अभिषेक करके चित्त (परमात्मा) को प्राप्त किया जाता है। इसी का मूल स्थूल रूप चंद्रवार के दिन या जल तत्त्व प्रधान मास नभस् (श्रावण) में या दोषनाथ के दिन अर्थात् प्रदोष में क्योंकि **चतुर्दशी** का अधिष्ठातृ देवता रुद्र है और **'त्रयोदशी त्रयोभागा एक भागा चतुर्दशी'** ही प्रदोष है। शिव पार्वती रूप अर्द्धनारीश्वर शिव पर चंद्र तत्त्व, जल, क्षीर और अमृत रूप का अभिषेक है।

'पय: की लीलाममृतम्' अमरकोष: और **'पयं तु सलिलं जलम्'** से क्षीर, पय जल तीनों पर्याय हैं। पय में अमृतत्त्व विद्यमान है। पय के अर्थात् दूध के दो गुण हैं। यह थोड़ी मात्रा में अमृत का कार्य करता है, और अतिमात्रा में जहर का काम देता है। जीर्ण ज्वर रोगी के लिए दूध जहर और रोग मुक्त के लिए अमृत है। अत: गौ दुग्ध में वे दोनों प्रक्रियाएँ सन्निहित होने से रुद्र पर दूध का अभिषेक स्वीकृत किया गया है।

मनुष्य के संसार जनित पीड़ा, ताम, दु:ख दैन्य ये सब विष के प्रतीक हैं। उनके शमन के लिए अमृत का प्रतीक दूध नीलकंठ, विषपानकर्त्ता शिव पर चढ़ाया जाता है ताकि अमृत की बूंदें विष को दूर करें। हे प्रभो! हमारे दु:ख रूपी विष को आप अमृत के तत्त्व

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
में सिंचित कर उसे दूर करें यही प्रार्थना इस स्थूल प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्म जगत् को पहुंचाई जाती है। आध्यात्मवादी भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु इसी प्रक्रिया को अपनाते हैं और संसारी चंद्र-ग्रह जनित दोष शमन हेतु रुद्राभिषेक प्रक्रिया से लक्ष्य सिद्धि का आह्वान करते हैं। यही कारण है कि ज्योतिष् विज्ञान के द्वारा चंद्र दोष दूर करने और दीर्घायु कामना के लिए रुद्र पर दूध का अभिषेक किया जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चमत्कारिक महामृत्युंजय जप

'मृत्युभीत मृकंड सूनूकृतस्तवं शिवसन्निधौ
यत्रकुत्र च यः पठेन्नहितस्य मृत्युभयं भवेत्।'

मांत्रिक अनुष्ठानों में **'महामृत्युंजय जप'** का अनुष्ठान बहुत ही प्राचीन समय से सर्वानुभूत और सफल प्रयोग प्रसिद्ध है। हमारे पूर्वजों और ऋषियों ने इस मंत्र से मरणासन्न व्यक्तियों को बचाने के प्रयोग किये हैं और वे सर्वत्र सफल हुए हैं। आसन्न दुर्घटना के दर्शन के पूर्व यदि इसका प्रयोग किया जाए तो व्यक्ति दुर्घटना से बाल बाल बच जाता है और यदि प्राणघातक जैसा योग हो तो भी वह घटना स्वल्पमात्रा में होकर प्राणी को बचा देती है। दूसरी मुख्य बात; यह सात्विक प्रयोग है अतः इससे लाभ ही लाभ होता है। शरीर रक्षा के साथ बुद्धि, विद्या, यश और लक्ष्मी भी बढ़ती है।

हमने स्वयं इसके अनेक अनुभूत प्रयोग कर चमत्कार और साफल्य प्राप्त किया है। एक बार हमारे यजमान के एक मित्र मेडिकल वार्ड 'महात्मा गांधी अस्पताल', जोधपुर में भर्ती थे। डॉक्टरों ने उनके जीवन की आशा 15 दिन तक इलाज करने के बाद छोड़ दी थी। अचानक मैं अपने किसी संबंधी को देखने अस्पताल गया तो अस्पताल में हमारे यजमान मिल गये। तब अपने उन सज्जन को भी देखा वे बेहोशी की हालत में थे, घर के लोग व्याकुल थे। जन्मपत्री में प्रबल मार्केश की दशा बन रही थी। मैंने औषधि के साथ- साथ महामृत्युंजय जप का सुझाव दिया। वे बोले यह काम आपको ही करना होगा। स्थिति की गम्भीरता देखते हुए मैंने तुरंत 11 ब्राह्मणों से लघु रुद्र करवाकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महामृत्युंजय जप का प्रयोग करवाया। प्रयोग चल रहा था तभी रोगी की हालत सुधरने लगी। 7 रोज के भीतर उन्हें अस्पताल से छुट्टी मिल गई। 11 दिन का प्रयोग चला और 11 वें दिन वे पूर्ण स्वस्थता का अनुभव करने लगे। कमजोरी शेष थी। प्राणघातक मार्केश टल गया। शूल की पीड़ा सूई में बदल गई। वह भी धीरे-धीरे समाप्त हो गई।

ज्योतिषी लोग अरिष्ट ग्रह निवारणार्थ, आयुष्य वर्धनार्थ व अपघात या अपमृत्यु निवारणार्थ जन्म पत्र में स्पष्टत: 125000 महामृत्युंजय जप का प्रयोग आज भी लिखते हैं। ऐसा करने से कई बालकों को अपमृत्यु के मुख से बचाया भी गया है।

जिन लोगों के बालक जन्म लेकर 10-15 दिन के भीतर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं उनके होते ही उनको प्रसव के पूर्व या प्रसव के तत्काल बाद भी इस प्रयोग द्वारा बचाया जा सकता है। भीनमाल में एक व्यक्ति के पुत्र क्रमश: पैदा होने के एक मास बाद मर जाया करते थे। इस तरह चार पुत्रों की मृत्यु हो गई थी। वह व्यक्ति मेरे पास आया तो उसके जब पुत्र प्रसव हुआ तब मंदिर में हमने महामृत्युंजय जप का प्रयोग करवाया और शिव कृपा से बालक अभी भी जीवित है। यह घटना सन् 1977 के अगस्त माह की है।

महामृत्युंजय जप के अनेक तरह के अनुष्ठान और प्रयोग प्रचलित हैं उनमें से सूक्ष्म, सरल एवं अनुभूत प्रयोग निम्नलिखित हैं जिन्हें कोई भी व्यक्ति सरलता से अज़माकर देख सकता है।

अथ ध्यानं—

ॐ हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसै राप्लावयन्तं शिरो।
द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये द्वाभ्यां वहन्तं परम्॥
अंकन्यस्तकरद्वयामृतघटं कैलाशसकान्तं शिवे।
रच्छाम्भोजगतं नवेन्दुमुकुटाभांतंत्रिनेत्रं भजे॥
मृत्युञ्जय महादेव त्राहि मां शरणागतम्।
जन्म मृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः॥

अथ बृह-मंत्र की पांच माला जप—

ॐ हों ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम्। उर्वारूकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्। भूर्भुवः स्वरों जूं सः हों ॐ।

जप विधि—

1. संकल्प 2. गायत्री की एक माला 3. महामृत्युञ्जय की 5 माला 4. लघुरुद्र या अनुष्ठान के अंत में पुन: गायत्री की 1 माला।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विशेष—

यदि व्यक्ति मृत्युसन्निकट हो और उसे बचाना अभीष्ट हो तो तत्काल सिद्धि हेतु 'महामृत्युञ्जय जप' के 108 जप करें। मृत्तिका के शिवलिङ्ग पर अभिषेक करके प्रत्येक मंत्र के पश्चात श्वेत दूर्वा, काला तिल व शहद मिलाकर चढ़ावें, बाद में अनुष्ठान प्रारंभ करें।

वर्षा के लिए प्रयोग—

चातुर्मास में वर्षा न हो तब महादेव पर सहस्र घट से (1111) घट से रुद्राभिषेक करके उसमें यजुर्वेदोक्त निम्न मंत्र का प्रति अध्याय पर संपुट दिया जावे, उससे वर्षा होती है।

ॐ अपां गम्भन्सीद मा त्वा सूर्योऽभि ताप्सी माऽग्नि वैश्वानरः।
अच्छिन्नपत्राः प्रजा अनुवीक्षस्वानु त्वा दिव्या वृष्टिः सचताम्॥

(यजुर्वेद अ० 13 मंत्र 30)

महाँ 2 इंद्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्ठि माँ 2 इव। स्तामैर्वत्सस्य वावृधे। उपयामगृहीतोऽसि महेन्द्राय त्वैषते योनिर्महेन्द्राय त्वा॥

(यजुर्वेद अ० 7 मंत्र 40)

फिर इंद्रे 3 हि वरुणे 3 हि वापी कूप तडाग सरितादि परिपूरय॥

यह 3 बार बोला जाए।

उक्त मंत्रों का अलग से नाभिपर्यन्त जल में खड़े रहकर ब्राह्मणों द्वारा जप भी कराया जाए।

केंसर व हृदय-रोग की मुक्ति हेतु सफल प्रयोग

केंसर व हार्ट अटैक जैसी बीमारी को दूर करने हेतु सर्वप्रथम लघुरुद्र या नमक-चमक रुद्राभिषेक करके 'अक्षीभ्यां' के अनुवाक से एवं 'आपोहिष्ठा०' इन तीनों मंत्रों से अभिषिक्त जल द्वारा शिव निर्माल्य से रोगी का मार्जन करें। उसका कुछ जल उसे पिलायें। इससे यक्ष्मा, केंसर आदि रोग भगवत्कृपा से छूट जाते हैं व औषधि सेवन सफल होता है।

विनियोग :—

अक्षीभ्यामिति षण्णां विवृहा ऋषिः अनुष्टुप् छन्दःयक्ष्महा देवता आपोहिष्ठेति तिसृणां सिन्धुद्वीप ऋषिः गायत्री छन्दः आपो देवताः सर्व रोग शान्त्यै

अभिषेकोदकेन अस्य अमुक (नाम) रोगिणोपरि मार्जने विनियोगः॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अक्षीभ्यां सूक्त—(अनुवाक)

ॐ अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि।
यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया विवृहामि ते ॥1 ॥
ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनूक्यात्।
यक्ष्मं दोषण्यामंसाभ्यां बाहुभ्यां विवृहामिते ॥2 ॥
आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोर्हृदयादधि।
यक्ष्मं मतस्नाभ्यां यक्नः प्लाशिभ्यो विवृहाम्रि ते ॥3 ॥
ऊरुभ्यां ते अष्ठीवद्भया पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम्।
यक्ष्मं श्रोणिभ्यां भासदाद्धंससो विवृहामि ते ॥4 ॥
मेहनाद्वनं करणाल्लोमभ्यस्ते नखेभ्यः।
यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं विवृहामि ते ॥5 ॥
अङ्गादङ्गाल्लोम्नो लोम्नो जातं पर्वणि पर्वणि।
यक्ष्मं सर्वस्यादात्मनस्तमिदं विवृहामि ते ॥6 ॥

ॐ आपोहिष्ठा मयो भुव० ॥ 1 ॥ ॐ योवः शिवतमो० ॥ 2 ॥

ॐ तस्माऽरङ्ग मा० ॥3 ॥ इन तीनों मंत्रों से मस्तक से लेकर पांव तक सारे शरीर पर अभिषिक्त जल के छींटें लगावें।

शल्य चिकित्सार्थ व भूत-प्रेत बाधा निवारणार्थ विशिष्ट प्रयोग

संकल्प—

ॐ अस्य श्री नीलकंठ स्त्रोत-मंत्रस्य ब्रह्म ऋषिः अनुष्टुप् छंदः नीलकंठो सदा शिवो देवता ब्रह्मबीजम् पार्वती शक्तिः शिव इति कीलकम मम काय जीव संरक्षणार्थे सर्वारिष्ट विनाशार्थे चतुर्विधा पुरुषार्थ सिद्धयर्थे भक्ति-मुक्ति सिद्धयर्थे श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थे च जपे विनियोगः ॥

मंत्र प्रयोग—

ॐ नमो नीलकण्ठाय, श्वेत शरीराय नमः। सर्पलिंकृत भूषणाय नमः। भुजंग परिंकराय नाग यज्ञोपवीताय नमः। अनेक काल मृत्यु विनाशनाय नमः ॥ युगयुगान्त काल प्रलय प्रचण्डाय नमः। ज्वलन्मुखाय नमः दंष्ट्रा कराल घोर रूपाय नमः। हुं हुं फट् स्वाहा। ज्वालामुख मंत्र करालय नमः। प्रचण्डार्क सहस्रांशु प्रचण्डाय नमः। कर्पूरामोद परिमलांग सुगन्धिताय नमः। इंद्रनील महानील वज्र वैडूर्यमणि माणिक्य मुकुट भूषणाय नमः। श्री अघोरास्त्र मूल मंत्रस्य नमः।

ॐ ह्राँ स्फुर स्फुर ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर ॐ ह्रू स्फुर स्फुर अघोर घोरतरस्य नमः। रथ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रथ तत्र तत्र चट् चट् कह कह मद मदन दहनाय नमः ।

श्री अघोरास्य मूल मंत्राय नमः । ज्वलन मरणभय क्षय हूं फट् स्वाहा । अनंत घोर ज्वर मरण भय कुष्ठ व्याधि विनाशनाय नमः ॥ डाकिनी शाकिनी ब्रह्मराक्षस दैत्य दानव बन्धनाय नमः ॥ अपर पारभूत वेताल कूष्माण्ड सर्वग्रह विनाशनाय नमः । यंत्र कोष्ठ करालाय नमः । सर्वापद विच्छेदाय नमः । हुँ हुँ फट् स्वाहा । आत्म मंत्र सुरक्षणाय नमः ।

ॐ ह्रॉं ह्रीं ह्रूँ नमो भूत डामर ज्वाला वश भूतानां, द्वादश भूतानां, त्रयोदश भूतानां, पञ्चदश डाकिनीनां, हन हन दह दह नाशन नाशन एकाहिक, द्वयाहिक, चतुराहिक, पञ्चाहिक व्याप्ताय नमः ।

आपादान्त सन्निपात, वातादि हिक्का, कफादि कासश्वासादिक दह दह छिन्धि छिन्धि श्री महादेव निर्मित स्तम्भन- मोहन- वश्याकर्षणोच्चाटन-कीलन-उद्वासन इति षट् कर्म विनाशनाय नमः ।

अनन्त, वासुकी, तक्षक, कर्कोटक, शंखपाल, विजय पद्म, महापद्म, एलापत्र, नाना नागांनां कुलकादि विषं छिन्धि-छिन्धि, भिन्धि-भिन्धि प्रवेशन शीघ्रं शीघ्रं हुँ हुँ फट स्वाहा ॥

वातज्वर, मरणभय, छिन्न छिन्न हन हनः भूतज्वर, प्रेतज्वर, पिशाच ज्वर, रात्रि ज्वर, शीत ज्वर, सन्निपात ज्वर, ग्रह ज्वर, विषम ज्वर, कुमार ज्वर, ताप ज्वर, ब्रह्मज्वर, विष्णु ज्वर, महेश ज्वर, आवश्यक ज्वर, कामाग्निविषय ज्वर, मरीचिज्वरादि प्रबल दण्डधराय नमः । परमेश्वराय नमः ।

आवेशय आवेशय शीघ्रं शीघ्रं हुँ हुँ फट् स्वाहा । चोर मृत्यु ग्रह व्याघ्रासर्पादि विषभय विनाशनाय नमः । मोहन मंत्राणां, पर विद्याच्छेदन मंत्राणां ॐ ह्रॉं ह्रीं ह्रँ कुलि लीं लीं हुं क्षं कुं कुं हुं हुं फट् स्वाहा । नमो नील कण्ठाय नमः दक्षाध्वर हराय नमः श्री नील कण्ठाय नमः ॥

उपरोक्त पाठ को नित्य करें, यह 108 दिन में सिद्ध हो जाता है । फिर इसका झाड़ा लग सकता है । नित्य पाठ करने से सारी कामनाएँ पूर्ण होती हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

माला, उसका महत्त्व एवं संस्कार

साधकों के लिए माला बड़े महत्त्व की वस्तु है। माला भगवान् के स्मरण और नाम जप में बड़ी ही सहायक होती है, इसलिए साधक उसे अपने प्राणों के समान प्रिय समझते हैं और उसे गुप्त धन की भांति सुरक्षित रखते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जप की संख्या अवश्य होनी चाहिए। इससे उतनी संख्या पूर्ण करने के लिए सब समय प्रेरणा प्राप्त होती रहती है एवं उत्साह तथा लगन में किसी प्रकार की कमी नहीं आने पाती। जो लोग बिना संख्या के जप करते हैं, उन्हें इस बात का अनुभव होगा कि जब कभी जप करते-करते मन अन्यत्र चला जाता है, तब मालूम ही नहीं होता कि जप हो रहा था या नहीं या कितने समय तक जप बंद रहा। यह प्रमाद हाथ में माला रहने पर या संख्या से जप करने पर नहीं होता। यदि कभी मन कहीं चला भी जाता है तो माला का चलना बंद हो जाता है, संख्या आगे नहीं बढ़ती, और यदि माला चलती भी रही तो जीभ भी अवश्य ही चलती रहेगी और ये दोनों कुछ ही समय में मन को खींच लाने में समर्थ हो सकेंगी। जो लोग यह कहते हैं कि मैं जप तो करता हूं पर मेरा मन कहीं अन्यत्र रहता है, उन्हें यह विश्वास रखना चाहिए कि यदि जीभ और माला दोनों घूमती रहीं-क्योंकि बिना कुछ-न-कुछ मन रहे ये घूम नहीं सकती तो बाहर घूमने वाला मन कहीं भी आश्रय न पाकर अपने उसी स्थिर अंश के पास लौट आवेगा जो मूर्च्छित रूप से माला की गति में जो श्रद्धा और विश्वास की शक्ति काम कर रही है, वह एक दिन व्यक्त हो जायेगी। और सम्पूर्ण मन को आत्मसात् क़र लेगी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

माला के द्वारा जब इतना काम हो सकता है, तब आदरपूर्वक उसका विचार न करके यों ही साधारण-सी वस्तु समझ लेना भूल नहीं तो और क्या है ? उसे केवल गिनने की एक तरकीब समझकर अशुद्ध अवस्था में भी पास रखना, बाएं हाथ से गिन लेना, लोगों को दिखाते फिरना, पैर तक लटकाए रहना, जहां कहीं रख जिस किसी चीज़ से बना लेना तथा चाहे जिस प्रकार गूंथ लेना सर्वथा वर्जित है । ऐसी बातें समझदारी और श्रद्धा की कमी से ही होती हैं, विशेषकर उन लोगों से, जिन्होंने किसी गुरु से विधिपूर्वक दीक्षा न लेकर माला के विधि-विधान पर विचार ही नहीं किया है । शास्त्रों में माला के संबंध में बहुत विचार किया गया है । यहां संक्षेप में उसका थोड़ा-सा दिग्दर्शन कराया जाता है ।

माला प्राय: तीन प्रकार की होती हैं— करमाला, वर्णमाला और मणिमाला । अंगुलियों पर जो जप किया जाता है, वह करमाला का जप है । यह दो प्रकार की होती हैं—एक तो अंगुलियों से ही गिनना और दूसरा अंगुलियों के पर्वों पर गिनना । शास्त्रत: दूसरा प्रकार ही स्वीकृत है । इसका नियम यह है कि अनामिका के मध्यभाग से नीचे की ओर चलें, फिर कनिष्ठा के मूल से अग्रभाग तक; और फिर अनामिका और मध्यमा के अग्रभाग पर होकर तर्जनी के मूल तक जाएं इन क्रम से अनामिका के दो, कनिष्ठा के तीन, पुन: अनामिका का एक, मध्यमा का एक और तर्जनी के तीन पर्व-कुल दस संख्या होती है । मध्यमा के दो पर्व सुमेरू के रूप में छूट जाते हैं । साधारणत: करमाला का यही क्रम है, परंतु अनुष्ठानभेद से इसमें अन्तर भी पड़ता है । जैसे शक्ति के अनुष्ठान में अनामिका के दो पर्व, कनिष्ठा के तीन, पुन: अनामिका का अग्रभाग एक,मध्यमा के तीन पर्व और तर्जनी का एक मूलपर्व । इस प्रकार दस संख्या पूरी होती है । श्रीविद्या में इससे भिन्न नियम है । मध्यमा का मूल एक, अनामिका का मूल एक, कनिष्ठा के तीन, अनामिका और मध्यमा के अग्रभाग एक-एक और तर्जनी के तीन, इस प्रकार दस संख्या पूरी होती है । करमाला से जप करते समय अंगुलियां अलग-अलग नहीं होनी चाहिएं । थोड़ी-सी हथेली मुड़ी रहनी चाहिए । मेरु का उल्लंघन और पर्वों की संधि (गांठ) का स्पर्श निषिद्ध है । यह निश्चित है कि जो इतनी सावधानी रखकर जप करेगा, उसका मन अधिकांश अन्यत्र नहीं जाएगा । हाथ को हृदय के सामने लाकर, अंगुलियों को कुछ टेढ़ी करके वस्त्र से उसे ढककर दाहिने हाथ से ही जप करना चाहिए । जप अधिक संख्या में करना हो तो इन दशकों को स्मरण नहीं रक्खा जा सकता । इसलिए उसको स्मरण करने के लिए एक प्रकार की गोली बनानी चाहिए । लाक्षा, रक्तचंदन, सिंदूर और गौ के सूखे कंडे को चूर्ण करके सबके मिश्रण से वह गोली तैयार करनी चाहिए । अक्षत, अंगुली, अन्न, पुष्प, चंदन अथवा मिट्टी से उन दशकों का स्मरण रखना निषिद्ध है । माला की गिनती भी इनके द्वारा नहीं करनी चाहिए ।

वर्णमाला का अर्थ है:— अक्षरों के द्वारा संख्या करना । यह प्राय: अंतर्जप में काम

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में आती है, परंतु बहिर्जप में भी इसका निषेध नहीं है। वर्णमाला के द्वारा जप करने का प्रकार यह है कि पहले वर्णमाला का एक अक्षर बिंदु लगाकर उच्चारण कीजिये और फिर मंत्र का-इस क्रम से अवर्ग के सोलह, क वर्ग से प वर्ग तक के पच्चीस और वर्ग के हकार तक आठ और पुन: एक लकार इस प्रकार पचास तक गिनते जाइये; फिर लकार से लौटकर अकार तक आ जाइये, सौ की संख्या पूरी हो जायेगी। क्ष को सुमेरु मानते हैं। उसका उल्लंघन नहीं होना चाहिये। संस्कृत में त्र और ज्ञ स्वतंत्र अक्षर नहीं, संयुक्ताक्षर माने जाते हैं। इसलिये उनकी गणना नहीं होती। वर्ग भी सात नहीं, आठ माने जाते हैं। आठवां शकार से प्रारंभ होता है। इनके द्वारा "अं कं चं टं तं पं यं शं" यह गणना करके आठ बार और जपना चाहिए ऐसा करने से जप की संख्या 108 हो जाती है। ये अक्षर तो माला के मणि हैं। इनका सूत्र है कुण्डलिनी शक्ति। वह मूलाधार से आज्ञाचक्रपर्यंत सूत्ररूप से विद्यमान है। उसी में ये सब स्वर वर्ण मणिरूप से गुथे हुए हैं। इन्हीं के द्वारा आरोह और अवरोह क्रम से अर्थात नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे जप करना चाहिये। इस प्रकार जो जप होता है , वह सद्य: सिद्धिप्रद होता है।

जिन्हें अधिक संख्या में जप करना हो, उन्हें तो मणिमाला रखना अनिवार्य है। मणि (मनिया) पिरोये होने के कारण इसे मणिमाला कहते हैं। यह माला अनेक वस्तुओं की होती है। रुद्राक्ष, तुलसी, शंख, पद्मबीज,जीवपुत्रक, मोती, स्फटिक, मणि, रत्न, सुवर्ण, मूंगा, चांदी, चंदन, और कुशमल इन सभी के मनियों से माला तैयार की जा सकती है। इनमें वैष्णवों के लिए तुलसी और स्मार्त, शैव शक्ति आदिकों के लिए रुद्राक्ष सर्वोत्तम माना गया है। माला बनाने में इतना ध्यान रखना चाहिए कि एक चीज़ की माला में दूसरी चीज़ न लगायी जाय। विभिन्न कामनाओं के अनुसार भी मालाओं में भेद होता है और देवताओं के अनुसार भी, उनका विचार कर लेना चाहिए। माला के मणि (दाने) छोटे-बड़े न हों। एक सौ आठ दानों की माला सब प्रकार के जपों में काम आती है। ब्राह्मण कन्याओं के द्वारा निर्मित सूत से माला बनाई जाए तो सर्वोत्तम है। शांतिकर्म में श्वेत, वशीकरण में रक्त, अभिचार में कृष्ण और मोक्ष तथा ऐश्वर्य के लिए रेशमी सूत की माला विशेष उपयुक्त है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिए क्रमश: श्वेत, रक्त,पीत और कृष्ण वर्ण के सूत्र श्रेष्ठ हैं। रक्त वर्ण का प्रयोग सब वर्णों के लोग सब प्रकार के अनुष्ठानों में कर सकते हैं। सूत को तिगुना करके फिर से तिगुना कर देना चाहिए। प्रत्येक मणि को गूंथते समय प्रणव के साथ एक-एक अक्षर का उच्चारण करते जाना चाहिए जैसे "ॐ आं" कहकर प्रथम मणि तो "ॐ आं" कहकर दूसरी मणि बीच में जो गांठ देते हैं, उसके संबंध में विकल्प है। चाहे तो गांठ दें और चाहे तो न दें। दोनों ही बातें ठीक हैं। माला गूंथने का मंत्र अपना इष्टमंत्र भी है। अंत में ब्रह्म ग्रंथि देकर सुमेरु गूंथें और पुन: ग्रंथि लगावें। स्वर्ण आदि के सूत्र से भी माला पिरोई जा सकती है। रुद्राक्ष

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के दानों में मुख और पुच्छका भेद भी होता है । मुख कुछ ऊंचा होता है और पुच्छ नीचा । परोने के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि दानों का मुख परस्पर में मिलता जाय अथवा पुच्छ । गांठ देनी हो तो तीन फेरे अथवा ढाई फेरे की लगानी चाहिए । ब्रह्म ग्रंथि भी लगा सकते हैं । इस प्रकार माला का निर्माण करके उसका संस्कार करना चाहिए ।

पीपल के नौ पत्ते लाकर एक को बीच में और आठ को अगल-बगल इस ढंग से रखें कि यह अष्टदल कमल सा मालूम हो । बीच वाले पत्ते पर माला रखें और "ऊं अं आं" इत्यादि से लेकर "हं क्षं" पर्यंत समस्त स्वर-वर्णों का उच्चारण करके पंचगव्य के द्वारा उसका क्षालन करें और फिर "सद्योजात" मंत्र पढ़कर पवित्र जल से उसको धो डालें । "सद्योजात" मंत्र यह हैं—

ॐ सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः ।
भवे भवे नाति भवे भवस्व मा भवोद्भवाय नमः ।

इसके पश्चात वामदेव मंत्र से चंदन, अगर, गंध आदि के द्वारा घर्षण करें । वामदेवमंत्र निम्नलिखित है-

ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः ।
कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः ।
बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ।

तत्पश्चात् अघोर मंत्र से धूपदान करें ।

ॐ अघोरेभ्यो थ घोरघोरतरेभ्यः सर्वभ्यः सर्वशवेभ्यों नमस्ते अस्तु रुद्रेरूपेभ्यः ।

यह अघोर मंत्र है तदनन्तर तत्पुरुष मंत्र से लेपन करें ।

ॐ तत्पुरुषाय विह्महे महादेवाय धीमहि तन्नों रुद्रः प्रचोदयात् ।

इसके पश्चात् एक-एक दाने पर एक-एक अथवा सौ-सौ बार ईशानमंत्र का जप करना चाहिए । ईशानमंत्र यह है—

ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्ममाधिमित ।
ब्रह्ममणोधिमतिब्रह्मा शिवो में अस्तु सदा शिवोम् ॥

फिर माला में अपने इष्ट देवता की प्राण-प्रतिष्ठा करें । प्राण प्रतिष्ठा की विधि पूजा के प्रकरण में देखनी चाहिए । तदनंतर इष्टमंत्र से सविधि पूजा करके प्रार्थना करनी चाहिए—

माले-माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्यान्मे सिद्धिदा भव ॥

यदि माला में शक्ति की प्रतिष्ठा की हो तो इस प्रार्थना के पहले 'ह्रीं' जोड़ लेना चाहिए । और रक्तवर्ण के पुष्प से पूजा करनी चाहिए । वैष्णवों के लिए माला-पूजा का मंत्र है—

'ॐ ऐं श्रीं अक्षमालाये नमः' ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अकरादि क्षकारांत प्रत्येक वर्ण से पृथक-पृथक पुटित करके अपने इष्टमंत्र का एक सौ आठ बार जप करना चाहिए। इसके पश्चात एक सौ आठ आहुति हवन करें अथवा दो सौ सोलह बार इष्टमंत्र का जप कर लें। उस माला पर दूसरे मंत्र का जप न करें। स्वयं हिलें नहीं और माला को हिलाएं नहीं। आवाज़ नहीं होनी चाहिए और हाथ से छूटकर गिरनी नहीं चाहिए। माला का टूटना मृत्यु ही है— ऐसा समझकर निरंतर सावधान रहना चाहिए। उसे बड़े आदर से पवित्र स्थान में रखना चाहिए और प्रार्थना करनी चाहिए—

ॐ त्वं माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता।
तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि मातर्नमो स्तु से॥

ऐसी प्रार्थना करके माला को गुप्त रखना चाहिए। अंगुष्ठ और मध्यमा के द्वारा जप करना चाहिए और तर्जनी से माला का कभी स्पर्श नहीं करना चाहिए। सूत पुराना हो जाए तो फिर गूंथकर सौ बार जप करना चाहिए। माला के इन नियमों में सावधानी बरतने से शीघ्र ही सिद्धि-लाभ होगा, इसमें संदेह नहीं।

माला के संस्कार की एक और प्रक्रिया है जिसका, आगमकल्पद्रुम में उल्लेख हुआ। भूतशुद्धि आदि करके माला में विष्णु, शिव, शक्ति, सूर्य और गणेश का आवाह्न करके पूजा करनी चाहिए। फिर माला को पंचगव्य में डालकर 'ॐ हे सौ:' इस मंत्र से निकालकर उसको सोने के पात्र में रखें। उसके ऊपर पंचामृत के नियम से दूध, दही, घी, मधु और शीतल जल से स्नान करावें। इसके पश्चात चंदन, कस्तूरी और कुंकुम आदि सुगंध द्रव्य से माला को लिप्त करें और 'हे सौ:' इस मंत्र का एक सौ आठ बार जप करें। इसके पश्चात् माला में नवग्रह, दिक्पाल और गुरुदेव की पूजा करके उस माला को ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार की माला ही प्रत्येक क्षण भगवान् का स्मरण दिलाती रहती है। साधक को माला की आवश्यकता, उसके भेद, निर्माणपद्धति, संस्कार और प्रायश्चित, जानकर उसके अनुसार अनुष्ठान करना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मंत्र साधना में गुरु का स्थान

आजकल प्रत्येक व्यक्ति को ज्ञान की उत्कण्ठ पीपासा लगी हुई है । हरेक व्यक्ति अच्छे शास्त्र को पढ़ना चाहता है एवं अच्छे पुरुष को गुरु बनाना चाहता है । किसे गुरु बनाना चाहिए, किसे नहीं, कौन-सी किताब पढ़नी चाहिए कौनसी नहीं, इसका ज्ञान सभी को नहीं होता । इसलिए कहा गया है कि जब तक साक्षात् परमेश्वर की कृपा नहीं होती तब तक कोई भी पुरुष सद्‌गुरु एवं सत्शास्त्र को प्राप्त नहीं कर सकता ।

मंत्रों में विलक्षण शक्ति छिपी होती है पर कलिकाल में सभी मंत्र कीलित होते हैं । गुरु के पास इन मंत्रों की चाबी होती है तथा गुरु-कृपा से सभी मंत्र उत्कीलित हो जाते हैं ।

शास्त्रों मे पांच प्रकार के पिता, पांच प्रकार की माताएं एवं पांच प्रकार के गुरुओं का वर्णन मिलता है । पहला अक्षर गुरु जो **अक्षर ज्ञान** कराता है, दूसरा **विद्या-गुरु** जिससे हम विद्याध्ययन कहते हैं, तीसरा **व्यवसाय-गुरु** जो रुचिकर धन्धा-व्यवसाय या हुनर सिखाता है, चौथा **संस्कार-गुरु** जो हमें नामकरण, उपनयन, विवाह, इत्यादि संस्कारों से संस्कारित करता है. ऐसे गुरु, कुल परम्परागत कर्मकाण्डी विद्वान होते हैं इन्हें '**कुलगुरु**' की पदवी मिलती है । पांचवां '**अध्यात्मगुरु**' होता है जिससे हम मंत्र दीक्षा लेते हैं, जिससे हम साधनाएं सीखते हैं । यही गुरु हमें अध्यात्म मार्ग की ओर प्रवृत कर ईश्वर से साक्षात्कार कराता है । इसमें जो अंतिम अवस्था का गुरु है वह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्यक्ति होता है क्योंकि बाकी के गुरु तो हमें इच्छा-अनिच्छा या परम्परा से प्राप्त होते हैं पर **अध्यात्म-गुरु** को तो हम स्वयं अपने विवेक एवं बुद्धि से चुनते हैं अत: उसके प्रति शिष्य का दायित्व कुछ ज़्यादा ही होता है ।

किसी भी प्रकार की साधना, अनुष्ठान या तपस्या हो, उसमें जपने वाला मंत्र गुरुमुख से ही निश्रित होना चाहिए, तभी मंत्र काम करेगा । फिर उनमें चाहे वह 'राम' का नाम ही क्यों न हो । महर्षि नारद ने तो बाल्मीकि नामक प्राणी को 'मरा' शब्द का निरन्तर जाप करने को कहा । गुरु मंत्र के प्रभाव से एक साधारण मनुष्य आदिकवि महर्षि बाल्मीकि के नाम से विश्व प्रसिद्ध कीर्ति व यश का स्वामी बनकर जगत्पूज्य पुरुष हो गया । जो लोग पुस्तकों से मंत्र लेकर उसका जप या प्रयोग करते हैं वे लोग एक प्रकार की चोरी करते हैं और जीवन में कभी भी सफल नहीं होते । इसलिए मंत्र-साधना में दीक्षित होना परम आवश्यक है ।

जिस प्रकार एक हलवाई की दुकान पर तरह-तरह की आकर्षक मिठाइयां **'शो-केस'** में सजी हों और कोई उसे बिना दाम दिये उठा ले जाए तो यह चोरी होगी एवं चोर राजदण्ड पाने का अधिकारी होगा । ठीक उसी प्रकार से पुस्तकों में छपे मंत्र-संग्रह में से अपने मनपसंद मंत्र को उठाकर, गुरु को बिना पूछे, बिना दक्षिणा दिये मंत्र जाप भी एक चोरी है । गुरु **ज्ञान** का प्रतीक है । ज्ञान का पूजन करना, सम्मान करना, ही कृतज्ञता है । कृतघ्न व्यक्ति ईश्वरीय दण्ड का अधिकारी हो जाता है । एक बात और है—मंत्र की मूल चेतनशक्ति तो **'ध्वनि'** में निहित होती है और यह ध्वनि पुस्तक के निर्जीव पृष्ठों में नहीं होती । शुद्धि-अशुद्धि के उच्चारण का ज्ञान भी गुरु मुख से निश्रित मंत्रों से होता है ।

इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि गुरु से आज्ञा लेकर की गई साधना में एक अज्ञात शक्ति हमारी रक्षा करती है । गुरुदेव का प्रभा-मण्डल शिष्य के इर्द-गिर्द ही घूमता रहता है । ऐसे में शिष्य का किसी प्रकार का अमंगल नहीं होता और वह अपने को अकेला भी महसूस नहीं करता । शाबर मंत्रों के अंत में मंत्र के देवता को गुरु-शक्ति के सान्निध्य का बोध कराया जाता है तथा गुरु की शक्ति का वास्ता देकर अदृश्य शक्तियों से काम कराया जाता है । कहते हैं—

शब्द सांचा, पिण्ड कांचा
मेरी भक्ति, गुरु की शक्ति,
फुरो मंत्र ईश्वरोवाचा ।

अत: साधना की सिद्धि का प्रथम द्वार गुरु की सच्ची सेवा में से होकर निकलता है । दीक्षा लेने वाला शिष्य कैसा हो, इस विषय में शास्त्रकार कहते हैं जो चतुर, जीतेंद्रिय, बुद्धिमान, सत्यवादी, शान्त,अक्रोधी, निर्लोभी, कपट, अहंकार और अभिमान से रहित हो तथा परमार्थी, त्यागी और गुरु का अनन्य भक्त हो, वही मंत्र लेने योग्य पात्र (शिष्य) हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सकता है । मंत्र दीक्षा में पात्र-अपात्र की परीक्षा करनी अनिवार्य है । वरना वो छुरी जो सब्ज़ी काटने के काम आती है, गलत हाथों में जाकर किसी की हत्या का माध्यम भी बन सकती है । भस्मासुर एवं रावण दो ऐसे उदाहरण हैं जिन्होंने गुरु-प्रदत्त शक्ति व ज्ञान का दुरुपयोग किया ।

गुरु में ईश्वरीय प्रतिबिम्ब

यदि ईश्वर और गुरु की तुलना की जाय तो लोगों ने गुरु को ईश्वर से बढ़कर माना है क्योंकि 'गुरु' के द्वारा ही ईश्वर की प्राप्ति होती है । महात्मा कबीर ने कहा—

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूं पांव।
बलिहारी गुरु आपकी, गोविन्द दियो बताय ॥

शास्त्रकार कहते हैं कि भाग्य प्रतिकूल हो जाए, ईश्वर नाराज़ हो जाए तो चिंता नहीं करनी चाहिए क्योंकि सतगुरु की कृपा से ईश्वर और भाग्य दोनों अनुकूल हो सकते हैं, परंतु यदि गुरु ही नाराज़ हो तो फिर इंसान के लिए कहीं भी ठौर नहीं है । उसके लोक-परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं । गुरु, मंत्र और ईश्वर की तुलना करते हुए आचार्यों का कथन है कि गुरु, मंत्र और ईश्वर ये तीनों ही एक ही शब्द के पर्यायवाची नाम हैं, यह तीनों एक हैं । कहा भी है—

यथा घटश्च कलशः, कुम्भश्चैकार्थवाचकाः ।
तथा मंत्रो देवताश्च, गुरुश्चैकार्थवाचकः ॥

जैसे **घट, कलश** और **कुम्भ** एक ही अर्थ के वाचक हैं वैसे ही **मंत्र, देवता** और **गुरु** भी एक ही अर्थ के बोधक शब्द हैं । इन तीनों में उस परमपिता परमात्मा का अंश प्रतिबिम्बित होता है । गुरु में निश्चय ही सत्व, रजस व तमस तीनों भाव रहते हैं । गुरु ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव का स्वरूप है । इसलिए कहा है—

गुरुः ब्रह्मा गुरु विष्णुः, गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

सर्वप्रथम ब्रह्मा रूप में गुरु शिष्य का निर्माण करता है तदन्तर विष्णु रूप में शिष्य का भरण-पोषण करता है और अंत में शिव रूप में शिष्य के समस्त दुर्गुण व अज्ञान को नष्ट करता है ।

यस्य देवे परा भक्तिः यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाश्यन्ते महात्मभिः ॥

जिसकी देवता में भक्ति है और जैसी देवता में श्रद्धा है वैसी ही गुरु में जिसकी भक्ति है, उसी सज्जन के सभी प्रयल अर्थात् चारों पुरुषार्थ स्वतः ही सिद्ध हो जाते हैं । इसमें संदेह नहीं । अतः व्यक्ति को गुरु की सेवा में किसी प्रकार का संकोच नहीं करना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चाहिए। मारवाड़ी में एक कहावत है—

गुरु गंगा गुरु गौमती, गुरु देवां रा देव।
गुरु सूं चेला आगला, करै गुरां री सेव॥

गुरु पावन नदियों में गंगा और गौमती के समान पवित्र है। जिस प्रकार ये नदियां अपने जल से मनुष्य के जीवन को निर्मल-पवित्र करती हैं। उसी प्रकार से गुरु भी ज्ञान से शिष्यों के जीवन को निर्मल-पवित्र करते हैं। गुरु तो देवताओं के भी देव हैं कारण कि देवताओं को भी समय-समय पर मार्ग-दर्शन प्राप्त करने के लिए गुरु की ही शरण में जाना पड़ता है। इस प्रकार से गुरु की महिमा तो बखानी ही नहीं जा सकती जो लोग अपनी साधना एवं सेवा से गुरु से सच्चा आशीर्वाद लेते हैं, वे कई बार गुरु से भी बढ़कर आगे निकल जाते हैं। अर्थात गुरु से भी अधिक नाम व यश प्राप्त कर लेते हैं।

वस्तुत: गुरु की इतनी महिमा एवं योग्य शिष्य का गुरु से भी आगे बढ़ जाने के पीछे एक रहस्य छिपा है। वह यह है कि गुरु जो कुछ भी ज्ञान अपने संपूर्ण जीवन में प्राप्त करता है, वह अल्पावधि में योग्य शिष्य को हस्तांतरित कर देता है तत्पश्चात शिष्य उस ज्ञान सीमाओं को आगे बढ़ाने में जुट जाता है। इस प्रकार गुरु-शिष्य-परम्परा के द्वारा विश्व का समग्र ज्ञान पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होता हुआ विकास को प्राप्त होता है। विश्व का अद्यावधि संचित ज्ञान परम्परा से गुरु के पास होता है चूंकि गुरु के द्वारा ज्ञान वितरण का अमूल्य कार्य किया जाता है। अत: संसार भरने गुरु की महिमा का मुक्त कण्ठ से गुणगान किया है। सन्त कबीर ने गुरु के बारे में बहुत ही जबरदस्त बात कही है—इससे बढ़कर और कुछ कहा नहीं जा सकता है:

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।
शीश दिये जो गुरु मिलै, तो भी सस्ता जान॥

गुरु की उम्र नहीं होती

ज्ञान (सीखने) की कोई आयु नहीं होती और गुरु की कोई उम्र नहीं होती। 14 वर्ष की लघु आयु में ब्रह्मवेत्ता शुकदेव मुनि समस्त देवताओं के साथ जगतपिता ब्रह्मा को भी पढ़ा रहे थे। एक बार मुनि शुक ने सभी देवताओं को— 'आओ वत्स।' कहकर संबोधित कर दिया। इससे श्वेतकेशी ब्रह्माजी अपमानित होकर क्रोधित हो उठे। वे न्याय हेतु श्रीहरि के पास गये । श्री हरि ने उन्हें समझाया कि भले ही वे उम्र, पद व ऐश्वर्य में शुक से बड़े हैं पर—**न च वयं, न च धनं, ज्ञानवृद्धोऽपि वृद्ध।** न तो धन से व्यक्ति बड़ा कहलाता है, न आयु से, जो ज्ञान में वृद्ध (बड़ा) है वही वास्तव में सबसे बड़ा है। फिर गुरु के लिए तो शिष्य पुत्रवत् ही होता है अत: शुकदेव ने यदि आप (ब्रह्मा) को पुत्र कहकर सम्बोधित किया तो कुछ भी गलत नहीं किया। श्वेतकेशी वृद्ध जगतपिता ब्रह्मा श्री हरि के इस समाधान के सामने निरुत्तरित हो गये। भगवत्पाद आचार्य शंकर ने पांच

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर्ष की लघु आयु में पहला शास्त्रार्थ जीता और जैन मुनि जगदाचार्य को पराजित किया। सोलह वर्ष में समस्त वेद-उपनिषदों पर भाष्य लिख डाला एवं बत्तीस वर्ष की लघु आयु में ही चारों दिशाओं को जीतकर स्वधाम चले गए। उनके द्वारा दीक्षित सभी चारों शिष्य आयु में उनसे बहुत बड़े थे। अत: गुरु के सामने बड़ी आयु का बड़प्पन, धन व ऐश्वर्य का बड़प्पन कभी प्रदर्शित नहीं करना चाहिए। ऐसा करने पर पाण्डुवंशीय महाराजा परीक्षत की तरह व्यक्ति अपने सर्वनाश को आमंत्रित करता है।

एक ही गुरु से संपूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं होता

एक व्यक्ति के जीवन में अनेक गुरु होते हैं। बाल्यावस्था में बच्चे पहले गुरुकुल जाया करते थे अब स्कूल। व्यक्ति को अक्षर ज्ञान देने वाला सज्जन '**विद्यागुरु**' कहलाता है। अक्षर ब्रह्म से साक्षारत्कार कराने वाले विद्यागुरु का उपकार अविस्मरणीय है।

बालक कुछ बड़ा होता है तो उसे उपनयन संस्कार दिया जाता है। युवा होने पर विवाह-संस्कार, इस प्रकार के षोडश-संस्कार हिंदू सनातन धर्म में प्रचलित हैं। इन संस्कारों को कराने वाले सज्जन को **कुलगुरु, कुल पुरोहित** कहते हैं। व्यक्ति के जीवन में विभिन्न संस्कारों द्वारा नवीन परिवर्तन लाने वाले कुलगुरु का उपकार भी कभी भुलाया नहीं जा सकता।

ब्रह्मचारी जब युवा हो चलता है। कुछ कमाने के लिए व्यापार-व्यवसाय किंवा अपने मनपसंद कार्य-क्षेत्र की ओर प्रवृत्त होता है तो उसे अपने क्षेत्र के अनुभवी व्यक्ति की शरण में जाना होता है। वहां वह अपने उस्ताद किवां '**व्यवसाय गुरु**' का वरण करता है। व्यवसाय गुरु उसे अंगुली पकड़कर कमाना सिखाता है। अत: व्यवसाय गुरु का योगदान भी जीवन में अविस्मरणीय होता है।

इसी प्रकार व्यक्ति जब ज्ञान के क्षेत्र में परिपक्व होकर आध्यात्म की ओर जाना चाहता है तो उसे **अध्यात्म गुरु, मंत्र गुरु** अथवा **दीक्षा गुरु** की आवश्यकता पड़ती है। शिष्य के संताप को हरने वाले ऐसे मंत्र गुरु अत्यंत दुर्लभ कहे गये हैं, क्योंकि वही वास्तव में सर्वोच्च परमगुरु कहे गये हैं। यथा—

'मन्त्रदाता गुरुः प्रोक्तो मन्त्रस्तु परमोगुरुः।'

मंत्र (दीक्षा) दाता गुरु व्यक्ति को परमोच्च कल्यान के मार्ग की ओर ले जाता है तथा व्यक्ति का जीवन भौतिक व आध्यात्मिक सुखों से परिपूर्ण कर देता है।

इन सबके अतिरिक्त भी व्यक्ति के जीवन में अनेक गुरु होते हैं। जिससे भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में कुछ सीखा जाय वह भारतीय संस्कृति में गुरु कहलाता है। भगवान् श्री दत्तात्रेय ने अपने जीवन में ऐसे चौबीस गुरु बनाये, जिनसे उन्होंने शिक्षा (सीख) ग्रहण की। विश्व के इतिहास में मानवेत्तर प्राणियों के अतिरिक्त गुरु बनाने के ये उदाहरण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने आप में अनुपम हैं।

अवधूत दत्तात्रेय अत्रि और अनसूया के पुत्र थे। ये विष्णु के अंश से अवतीर्ण हुए थे, अतः विष्णु के अवतार के रूप में इनकी प्रसिद्धि है। गिरिनार में दत्तात्रेयजी का विष्णुपद-आश्रम प्रसिद्ध है। रेणुकापुर या मातापुर, सह्यादि-शिखर पर मध्यप्रदेश के यवतमाल के अर्णा गांव से सोलह मील की दूरी पर स्थित अत्रि-आश्रम, जो आज 'माहुर' ग्राम के नाम से प्रसिद्ध है, यही पवित्र स्थल अवधूत दत्तात्रेयजी का जन्मस्थान माना गया है। माहुर में भी दत्तात्रेयजी की पादुका है। कहते हैं कि ये वहीं प्रतिदिन भिक्षा ग्रहण करते हैं **'माहुरीपुरभिक्षाशी'**। काशी में मणिकर्णिका घाट पर भी उनकी पादुका है, वे वहीं प्रतिदिन स्नान करते हैं और कोल्हापुर में प्रेमपूर्वक जप करते हैं **'वाराणसीपुरस्नायी कोल्हापुरजपादरः**।' श्रीमद्‌भागवत में परम धार्मिक राजा यदु के वृत्तांत से दत्तात्रेयजी के शिक्षा-ग्रहण का जो उल्लेख प्राप्त होता है, उससे यह शिक्षा मिलती है कि हम अपने सच्चरित्र-निर्माण के लिए शिक्षा-ग्रहण के क्षेत्र को संकीर्ण न बनायें। चेतन प्राणियों में अथवा स्थावर-जगत में जो स्वल्प भी, अच्छाइयां हों उन्हें ग्रहण करें तथा जो बुराइयां हैं, उनसे दूर रहें।

भगवान् श्रीदत्तात्रेयजी ने विभिन्न शिक्षा प्राप्ति के निमित्त चौबीस गुरु बनाए, जिनकी कथा पुराणों में वर्णित है। प्रबुद्ध पाठकों के लिए श्री दत्तात्रेय जी के चौबीस गुरुओं से ग्रहण करने योग्य शिक्षा का संक्षिप्त सार यहां प्रस्तुत है।

1. पृथ्वी से ग्रहणयोग्य शिक्षा

प्रत्येक व्यक्ति को क्षमाशील होना चाहिए तथा निरन्तर धैर्यपूर्वक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहना चाहिए। दत्तात्रेयजी ने पृथ्वी से धैर्य और क्षमा की शिक्षा ली। लोग पृथ्वी पर अनेक प्रकार का उत्पात करते हैं, गड्‌ढ़े खोदते हैं, गंदगी करते हैं, परंतु पृथ्वी न तो किसी से बदला लेती है, न चिल्लाती है न रोती ही है। पृथ्वी के इन गुणों के कारण ही उसे 'मां' की संज्ञा दी गई है। माता की गोद में बालक टट्टी करता है, पेशाब करता है, मां को लातें भी मारता है पर बदले में 'मां' अपने स्तन का मीठा दूध पिलाकर बिना किसी अपेक्षा के बच्चे को पुष्ठ करती है, उसकी कोई शिकायत किसी से नहीं करती।

एक बार मातृभक्त एक अरबपति सेठ को यह अभिमान हो गया कि वह अपनी विधवा माता की बड़ी सेवा कर रहा है। उसने भौतिक संसार में उपलब्ध सभी ऐश्वर्य मां के चरणों में न्यौछावर कर रखे थे और रोज उठकर माता की चरण-वंदना करता, नमस्कार करता, मां की स्तुति-प्रशंसा करता, उसकी हर आज्ञा को सर्वोपरि मानता था और मन ही मन यह समझता कि मैं मातृ-ऋण से मुक्त हो रहा हूं। मुझ जैसा और मातृ-भक्त शायद ही कोई हो। मां बच्चे के इस मनोभाव को ताड़ गई और उसे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वास्तविकता का परिचय कराना चाहा । एक रात जब उसका पुत्र गहरी नींद में सो रहा था, वह उठी और पानी पीने के बहाने एक लोटा पानी अपने लाडले पुत्र के बिस्तर पर गिरा दिया । सेठ हड़बड़ाकर उठा, देखा मां ने गलती से पानी गिरा दिया । उससे उसे तकलीफ तो हुई, पर बनावटी विनम्रता बतलाते हुए मां से क्षमा मांगी, बिस्तर बदला और सो गया । मां मुस्करा दी । एक घंटे बाद मां फिर उठी और फिर पानी गिराया । सेठ पुन: जागा और बोला— 'मां' क्या हो गया तुझे ! जरा देखकर चला करो ।' बिस्तर बदला और पुन: सो गया । मां एक घंटे बाद पुन: उठी और वही प्रक्रिया दोहराई, इस बार पुत्र जाग रहा था । वह बड़बड़ाया—'मां ! यह तुझे क्या हो गया है ? तुम जानबूझ कर पानी गिरा रही हो, तुम पागल तो नहीं हो गई ?' मां ने कहा बेटा गलती हो गई और सो गई । बेटा रात भर परेशान था, मां के आश्वासन पर वापस सो गया । मां इस बार दो घंटे बाद जब बेटा गहरी नींद में सो रहा था, उठी और इस बार पानी के संपूर्ण घड़े को ले जाकर कुछ ऐसी ठोकर खाई कि बेटे की रजाई, बिस्तर, तकिया सब गीला हो गया । इस बार पुत्र क्रोध से झल्लाया—'मां तुम सचमुच पागल हो गई हो, तुम्हे डॉक्टर को दिखाना पड़ेगा ।' मां मुस्करा कर बोली— 'मेरे लाडले पुत्र ! मैं ठीक हूं । तू तो एक रात में ही परेशान हो गया ! मैं सैकड़ों रातों तक गीले बिस्तर में सोती रही, मैंने तो कभी बिस्तर नहीं बदला । हां, तुम्हारे कपड़े अवश्य बार-बार बदलती रहती कि कहीं तुम्हें सर्दी न लग जाय । मैं गीले में सोती और तुम्हें सूखे में सुलाती । जब तू बीमार था, रात-रात भर जागती और तुम्हें सुलाने के बाद ही नींद लेने की सोचती । मैं मां हूं ना ! ! मैंने तेरी इन हरकतों पर कभी किसी से शिकायत नहीं की । उन अभावों के दिनों में जब तेरे पिता की कोई आय नहीं थी, मैं भूखी सोती और तुझे खूब खिला-पिलाकर गहरी नींद में सोया हुआ देख मन-ही-मन बड़ी प्रसन्न होती । मैं तो कई रातों तक नहीं सोई, फिर भी तुम्हें बड़ा करने में मैंने कोई परेशानी महसूस नहीं की ।' सेठ निरुत्तर होकर पानी-पानी हो गया और यह वास्तविकता जान गया कि मां से बड़ा धैर्यशाली कोई नहीं ? उसका ऋण नहीं चुकाया जा सकता । उसी तरह इस धरती का ऋण भी नहीं चुकाया जा सकता । धीर पुरुष को सर्वदा सन्मार्ग पर चलना चाहिये कि वह आक्रमणकारी के साथ भी अपना धैर्य न खोवे और क्रोध न करे । सर्वदा सन्मार्ग पर चलता रहे । पृथ्वी के ही विकार पर्वत-नदी और वृक्ष से उन्होंने यह शिक्षा ग्रहण की जैसे उनकी सारी चेष्टाएं सदा-सर्वदा दूसरों के हित के लिए ही होती हैं उसी प्रकार मानवमात्र को चाहिए कि वह पृथ्वी से धैर्य, क्षमा एवं परोपकार की शिक्षा ग्रहण करे ।

2. वायु से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

वायु प्राण है । शरीर में स्थित प्राणरूप सूक्ष्म वायु, इंद्रियों द्वारा प्राप्त भोजन, रस, विषय जनित सुख-दु:ख में रहता हुआ भी, उनसे निर्लिप्त रहता है तथा किसी भी प्रकार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की अपेक्षा नहीं रखता । वायु के समान ही ज्ञानी पुरुषों को विषयों से निर्लिप्त रहना चाहिए।

दत्तात्रेयजी ने शरीर स्थित प्राणवायु से यह शिक्षा ग्रहण की कि जैसे वह सूक्ष्म आहार मात्र की इच्छा रखता है और उसे पाकर ही संतुष्ट हो जाता है, वैसे ही साधक को भी चाहिए कि जितने से जीवननिर्वाह हो जाय उतना ही भोजन करे । विषयों का उपयोग ऐसा करना चाहिए, जिससे बुद्धि विकृत न हो , मन चंचल न हो और वाणी व्यर्थ की बातों में न लग जाए । शरीर के बाहर रहने वाली वायु से उन्होंने यही सीखा कि वायु की तरह परिव्राजक (संन्यासी) को निरंतर भ्रमण करना चाहिए । वायु कहीं भी, किसी स्थान विशेष पर नहीं रुकती, उसमें आसक्त नहीं होती इसी प्रकार साधक को भी अपने लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए अन्यत्र कहीं आसक्त नहीं होना चाहिए ।

गंध पृथ्वी का गुण है, परंतु वायु को कभी-कभी गंध का वहन करना पड़ता है, ऐसा करने पर भी वायु शुद्ध ही रहता है । इसी प्रकार साधक का जब तक पार्थिव शरीर से संबंध है, तब तक उसे व्याधि-पीड़ा आदि को सहन करना पड़ता है, परंतु आत्मदर्शी साधक उस पर भी उक्त पीड़ा आदि से निर्लिप्त रहता है ।

3. आकाश से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

आकाश सर्वविभु एवं व्यापक है । जिस तरह आकाश सर्वविभु और व्यापक है, उसी तरह ईश्वर भी सर्वविभु एवं व्यापक है । आकाश दिखलाई नहीं देता, जिस तरह आकाश के बिना पंचभूतों का अस्तित्व नहीं, ठीक उसी तरह ईश्वर के बिना पंचभौतिक देह का अस्तित्व नहीं । आकाश की तरह ईश्वर भी अदृश्य है पर उसकी सत्ता को सदैव महसूस किया जाता है ।

साधक को आत्मा में आकाशरूपता की भावना करनी चाहिए । आग लगती है, पानी बरसता है, अन्नादि पैदा होते हैं और नष्ट होते हैं । वायु की प्रेरणा से बादल आते और चले जाते हैं । यह सब होने पर भी आकाश इन सबसे अस्पृश्य, अछूता ही रहता है । आकाश की दृष्टि से यह सब कुछ नहीं है, इसी प्रकार त्रिकाल में न जाने किन-किन नाम-रूपों की सृष्टि और प्रलय होते हैं, परंतु आत्मा के साथ उनका कोई संस्पर्श नहीं है । दत्तात्रेयजी ने आकाश से व्यापकता और अस्पृशता की शिक्षा ग्रहण की ।

4. जल से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

जिस प्रकार जल स्वभाव से ही स्वच्छ, चिकना, पवित्र और मधुर होता है तथा तीर्थों में प्रवाहित गंगा आदि के दर्शन, स्पर्श और नामोच्चारण से लोग पवित्र होते हैं वैसे ही साधक को भी स्वभाव से शुद्ध स्निग्ध, मधुरभाषी और लोकपावन होना चाहिए, जिसके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दर्शन, स्पर्श और नामोच्चारण से प्राणी मात्र को पवित्रता का अनुभव हो ।

5. अग्नि से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

अग्नि का गुण है तेजस्विता । अग्नि सम्पूर्ण पदार्थों को खा जाती है, किंतु उनके दोष को ग्रहण नहीं करती । अग्नि को स्वाद-अस्वाद से प्रयोजन नहीं । उसी प्रकार मुनि का भी ऐसा स्वभाव होना चाहिए कि भोजन में उसे स्वाद-अस्वाद से प्रयोजन नहीं होना चाहिए । जहां भी, जैसा भी भोजन मिले, ग्रहण करना चाहिए तथा उसके गुण व दोषों से लगाव नहीं रखना चाहिए । मनुष्य को अपने विवेक-रूपी अग्नि के माध्यम से सदैव तेजस्वी रहना चाहिए ।

दत्तात्रेयजी ने अग्नि से यह शिक्षा ली है कि जैसे अग्नि तेजस्वी और ज्योतिर्मय होती है । उसे कोई अपने तेज से दबा नहीं सकता, उसके पास संग्रह-परिग्रह के लिए कोई पात्र नहीं, सब कुछ अपने पेट में रख लेती है, सर्वभक्षी होने पर भी निर्लिप्त है, वैसे ही साधक को संसार में रहते हुए भी निर्लिप्त रहना चाहिए । अग्नि की तरह साधक को भी कहीं प्रकट, कहीं अप्रकट तथा कल्याणकामी पुरुष का उपास्य होना चाहिए । जैसे अग्नि लंबी-चौड़ी, टेढ़ी-सीधी लकड़ियों में रहकर उसके समान ही लंबी-चौड़ी, सीधी-टेढ़ी दिखाई पड़ती है । वास्तव में वह वैसी नहीं है, वैसी ही सर्वव्यापक आत्मा भी अपनी माया से रचे हुए कार्य-कारण रूप जगत में व्याप्त होने के कारण उन-उन वस्तुओं के नाम-रूप, से कोई सम्बंध न होने पर भी उनके रूप में प्रतीत होने लगता है ।

6. चंद्रमा से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

चंद्रमा शीतल है । उसकी चांदनी सब को अच्छी लगती है । उसी प्रकार मनुष्य को अपने व्यवहार में शीतलता रखनी चाहिए ताकि उसका व्यवहार सबको सुख देने वाला एवं प्रिय हो ।

दत्तात्रेयजी ने चंद्रमा से यह शिक्षा ली कि काल के प्रभाव से चंद्रमा की कलाएं घटती-बढ़ती रहती हैं तथापि चंद्रमा-चंद्रमा ही है; वह न घटता है और न बढ़ता है, वैसे ही जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत जितनी भी अवस्थाएं हैं, सब शरीर की हैं । आत्मा से उनका कोई संबंध नहीं है । जैसे आग अथवा दीपक की लौ क्षण-क्षण में उत्पन्न और नष्ट होती रहती है, यह क्रम निरन्तर चलता रहता है, परंतु दीख नहीं पड़ता, वैसे ही जल-प्रवाह के समान वेगवान् काल के द्वारा क्षण-क्षण में प्राणियों के शरीर की उत्पत्ति और विनाश होता रहता है, परंतु अज्ञानवश वह दिखाई नहीं देता ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

7. सूर्य से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

सूर्य काल का नियंता है । वह ठीक समय पर उदित होता है एवं ठीक समय पर नियमपूर्वक अस्त होता है । उसके नियमित जीवन से मानव-मात्र को प्रेरणा लेकर अपने स्वयं के जीवन को नियमित एवं व्यवस्थित बनाना चाहिए ।

सूर्य में समत्व बुद्धि है । वह गरीब-अमीर, स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण व शूद्र सभी को समान रूप से बिना किसी भेद-भाव से प्रकाश, गर्मी व छाया देता है । उसी प्रकार से योगी पुरुष को भी समत्व भाव से सबको ज्ञान का वितरण करना चाहिए ।

श्री दत्तात्रेयजी ने सूर्य से यह शिक्षा ग्रहण की कि जैसे वे अपनी किरणों से जल खींचते और समय पर उसे बरसा देते हैं वैसे ही योगी पुरुष इंद्रियों के द्वारा समयानुकूल विषयों का ग्रहण और मुंचन करता है । किसी भी समय आसक्त नहीं होता । आत्मा सूर्य के समान एक ही है । एक ही सूर्य अनेक जल पात्रों में नाना आकार का दिखाई देता है । पर वह विभिन्न पात्रों में विभिन्न रूप में प्रतिबिंबित होने पर भी अनेक नहीं है ।

8. कबूतर से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

कथा प्रसिद्ध है कि एक कबूतर और कबूतरी अपने बच्चों को घोंसले में छोड़कर चारा चुगने गये थे । चारा लेकर जब वे वापस लौटे, तब उन्होंने देखा कि उनके बच्चों को एक व्याध जाल में फंसाए हुए है । कबूतरी ने बच्चों के स्नेह में अंधी होकर अपने को भी जाल में जान-बूझकर फंसा दिया और फिर कबूतर ने भी अपनी पत्नी के प्रेम में अंधे होकर अपने को जाल में फंसा दिया। इस प्रकार मोहांधता के कारण दोनों कपोत-कपोती नष्ट हो गए । यह मानव-शरीर मुक्ति का खुला हुआ द्वार है । इसे पाकर भी जो कबूतर की तरह अपनी घर-गृहस्थी में ही फंसा हुआ मोहांध है, वह बहुत ऊंचे स्थान पर पहुंचकर सुरक्षित स्थिति प्राप्त करने पर भी गिर जाता है, शास्त्र की भाषा में उसे आरूढ़च्युत कहा जाता है ।

भगवान् दत्तात्रेयजी ने कबूतर से यह शिक्षा ग्रहण की कि कहीं किसी के साथ अत्यंत स्नेह अथवा आसक्ति नहीं करनी चाहिए अन्यथा बुद्धि अपना स्वातंत्र्य खोकर दीन हो जाएगी और उसे कबूतर की तरह अत्यन्त क्लेश उठाना पड़ेगा। जो कुटुंबी के भरण-पोषण में ही सारी सुध-बुध खो बैठा है, उसे कबूतर की तरह कभी सुख-शांति नहीं मिलती ।

कबूतर चालाक प्राणी नहीं, वह डरपोक एवं असावधान होता है । उसमें उड़ने की योग्यता है पर अक्सर जब बिल्ली कबूतर का शिकार करती है तो सबसे पहले कबूतर की आंख से अपनी आंख मिलाती है । बिल्ली की आंख से आंख मिलते ही क़बूतर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपनी मृत्यु देखकर उससे बचने के लिए आंख मूंद लेता है। कबूतर के आंख मूंदते ही, बिल्ली झपटकर उसे मृत्यु का ग्रास बना लेती है। अतः कष्ट के समय मनुष्य को कबूतर की तरह घबराकर निश्चेष्ट नहीं होना चाहिए। कष्ट, दुःख व मृत्यु के प्रति आंख मूंदने से वे चले नहीं जाते अपितु अपनी योग्यता, बुद्धि एवं सावधानी से उनका मुकाबला करने से आसन्न मृत्यु, दुःख व कष्ट पर विजय पाई जा सकती है, उन्हें टाला जा सकता है।

9. अजगर से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

प्रत्येक प्राणी को प्रारब्ध कर्म अवश्य भोगना पड़ता है, अतः उसके लिए ज्यादा चिंता करके शरीर का नाश नहीं करना चाहिए। अजगर ऐसा प्राणी है जो जीवित रहने के लिए कोई परिश्रम नहीं करता। इसलिए कहा भी है—

अजगर करे न चाकरी, पंछी करे न काम।
दास मलूका कह गये, सबके दाता राम॥

अजगर को कई दिनों तक भूखा रहना है पर अजगर इसकी चिन्ता नहीं करता, फलस्वरूप वह न तो दुर्बल होता है, न मरता है। अजगर का शिकार स्वतः ही उसके मुंह के पास चल कर आता है। भगवान् श्री दत्तात्रेयजी ने देखा कि अजगर कभी शिकार करने नहीं जाता, वह एक जगह पड़ा रहता है। ईश्वर उसका पोषण करता है। हाथी को मण, कीड़ि को कण ईश्वर देता है। अतः मनुष्य को अपने निजी भोजन की प्राप्ति के लिए अधिक चिंता नहीं करनी चाहिए। मनुष्य जीवन का लक्ष्य मात्र भोजन नहीं, परमार्थ है। परमार्थ के पथिक व योगी पुरुष को अपने भोजन की चिंता ईश्वर पर छोड़ देनी चाहिए, तभी उसको लक्ष्य में सिद्धि मिलेगी अन्यथा भोजन संग्रह के चक्कर में भटक जाएगा। ईश्वर के प्रति अटूट भरोसा रखिए वह बराबर आपकी सहायता करने वाला है।

पूर्वकर्मानुसार सुख-दुःख की प्राप्ति स्वतः होती ही रहती है। बिना मांगे, बिना इच्छा किए स्वयं ही जो कुछ मिल जाय, वह चाहे रूखा-सूखा हो, चाहे बहुत मधुर या स्वादिष्ट हो, थोड़ा हो या अधिक हो, अजगर की तरह उसे ही खाकर बुद्धिमान पुरुष अपना जीवन-निर्वाह करे।

10. समुद्र से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

अथाह जलराशि का स्वामी होते हुए भी समुद्र कभी छलकता नहीं, सीमा का उल्लंघन नहीं करता। मनुष्य को भी समुद्र की तरह गहरा व गम्भीर होना चाहिए। उसे कभी छलकना नहीं चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

समुद्र से भगवान दत्तात्रेय जी ने यह शिक्षा ग्रहण की कि साधक को सर्वदा प्रसन्न, गम्भीर, अथाह, अपार और असीम होना चाहिए। उसे ज्वार-भाटे और तरंगों से रहित शांत समुद्र की तरह रहना चाहिए। समुद्र वर्षा ऋतु में न बढ़ता है और न ग्रीष्म ऋतु में घटता है। नदियों के जल बढ़ने से वह न छलकता है और न सूखता है। उसी प्रकार भगवत्परायण साधक को सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति से अथवा अप्राप्ति से प्रफुल्लित या उदास नहीं होना चाहिए।

11. पतंगे से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

पतंगा दीपक के प्रकाश से अत्यधिक प्रेम रखता है तथा मोहित होकर अग्नि में कूद पड़ता है एवं सर्वनाश को प्राप्त करता है। ऐसे ही सुंदर स्त्री को देखकर अजितेन्द्रिय पुरुष, उसके हाव-भाव से मोहित होकर नरक-कुण्ड में गिर पड़ता है। किसी गुणी ने कहा है—

परनार मिठी छुरी, तीन ठौर सु खाय।
धन हरे, यौवन हरे, मुओं नरक ले जाय॥

भगवान् दत्तात्रेयजी ने पतंगे से यह शिक्षा ग्रहण की कि जैसे पतंगा दीपक के रूप पर मोहित होकर आग में कूद पड़ता है और जल मरता है वैसे ही अपनी इंद्रियों को वश में न रखने वाला पुरुष जब रूपासक्त हो जाता है, तब घोरांधकार में गिरकार अपना सत्यनाश कर लेता है। गरुड़पुराण में कहा है—

पतंगमातंगकुरंगभृंगमीना हता पंचभिरेव पंच।
एकः प्रगादी स कथं न हन्यते यः सेवते पंचभिरेव पंच॥

पतंगा, हाथी, हरिण, भृंग और मछली मात्र एक ही इंद्रिय के वश में होकर मोहित होने से नष्ट हो जाते हैं तो फिर मनुष्य शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध के लिए पांच इंद्रियों के माध्यम से विषयासक्त होने पर कैसे बचा रह सकता है? भगवान् दत्तात्रेयजी के अनुसार आसक्ति मात्र एक ही विषय से सम्बंधित होने पर नाश का कारण होती है, अतः मनुष्य को सामान्य जीवों की अपेक्षा अधिक सावधानी की आवश्यकता है; क्योंकि वह पांच इंद्रियों के माध्यम के विषयों में आसक्त हो जाने की स्थिति में रहता है।

12. भ्रमर से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

सायंकाल का समय था। घूमते-घूमते भगवान दत्तात्रेय एक रम्य सरोवर के किनारे पहुंचे। उसका ध्यान एक विकसित कमल पुष्प की ओर गया। उन्होंने देखा कि एक भ्रमर कमल-पत्र के भीतर परागकणों पर चिपककर रस-पान करने लगा। भ्रमर को समय का ज्ञान न रहा और रात हो गई। सूर्य की किरण से खिलने वाला कमल, रात्रि को मुरझाकर बंद हो गया, मोहित भ्रमर कमल-पत्र में कैद हो गया। भ्रमर ने सोचा—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं,
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः ।
इत्थं विचिंतयति कोशगते द्विरेफे,
हा हंत! हंत! नलिनीं गज उज्जहार ॥

सम्पूर्ण रात्रि ऐसे ही मस्ती में बीत जाएगी और प्रातःकाल जब स्वर्णिम रश्मि वाला सूर्य उदय होगा तो इस कमल पुष्प का ऐश्वर्य पूर्ण रूप से खिल उठेगा, पंखुड़ियां खुल जाएंगी और मैं रसपान से तृप्त होकर उड़ जाऊंगा। भ्रमर ऐसा सोचता ही रहा कि कहीं से एक हाथी आया और उस कमल पुष्प को सूंड से तोड़कर भ्रमर सहित खा गया। भगवान श्रीदत्त ने सोचा भ्रमर की तरह ही मानव मात्र कल की मधुर कल्पनाओं में खोया रहता है और मृत्यु उसे कब ग्रस लेती है, उसे पता ही नहीं चलता। अक्सर जो काम कल पर टाला जाता है, वह कभी होता ही नहीं। अत्यधिक संग्रह प्रवृत्ति एवं आसक्ति के कारण भ्रमर की भांति ही मनुष्य जीवन बिना किसी सार्थकता के नाश को प्राप्त हो जाता है।

इस तात्विक सत्य की प्राप्ति के निमित्त श्री दत्त ने भ्रमर को नमस्कार कर अपना मार्गदर्शक माना, उसे गुरु रूप में स्वीकार किया और अत्यधिक आसक्ति के प्रति मनुष्य मात्र को सावधान किया।

13. हाथी से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

हाथी एक शक्तिशाली प्राणी है। निशंक गजराज को बांधना मनुष्य के लिए सम्भव नहीं। पर चालाक शिकारी किसी हथिनी को गड्ढे में गिराकर या जाल में बांध देते हैं। हाथी स्पर्श सुख के वशीभूत होकर हथिनी के पास जाता है और खुद फंस जाता है। स्त्री के प्रति आसक्त होकर गजराज भी बंधन में पड़कर दुःखमय जीवन व्यतीत करता है।

दत्तात्रेयजी ने हाथी से यह शिक्षा ग्रहण की कि जिस प्रकार शिकारी हथिनी के माध्यम से ही हाथी को पकड़ता है और हाथी स्वजन के मोह में अपने को भी बंधन में डाल देता है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य को भी स्वजनों के मोह और मोहजनित भ्रम से बचना चाहिए; क्योंकि यही बंधन का कारण हो जाता है।

14. मधुमक्खी से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

मधुमक्खियां बड़े कठोर परिश्रम एवं यत्न से संग्रह करती है, किंतु मधुहारी उन्हें भगाकर उस शहद का उपभोग करता है। मधुमक्खियां शहद के संग्रह में इतनी व्यस्त रहती हैं कि शहद का उपयोग ही नहीं कर पातीं। मधुहारी लोभी पुरुष भी धन के लोभ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
से अत्यंत कष्ट द्वारा संग्रहीत उस शहद को दूसरे को बेच देता है, स्वयं उसका उपयोग नहीं करता।

मधु निकालने वाले पुरुष से दत्तात्रेयजी ने शिक्षा ग्रहण की कि संसार के लोभी पुरुष बड़ी कठिनाई से धन-संचय तो करते हैं, किंतु उपभोग नहीं कर पाते; जैसे मधु निकालने वाले पुरुष का कष्ट से प्राप्त मधु कोई दूसरा ही ले लेता है। जैसे मधुहारी मधुमक्खी के द्वारा संचित मधु को उसके खाने के पहले ही साफ कर देता है, वैसे ही मधु निकालने वाला भी धन के लोभ में मधु बेचकर स्वयं भोगने से वंचित हो जाता है, उसी प्रकार लोभी और संग्रह की वृत्ति से मोहग्रस्त व्यक्ति भी स्वयं कष्ट द्वारा उपार्जित और संग्रहीत धन का उपभोग स्वयं करने से वंचित रह जाता है।

दत्तात्रेयजी ने मधुमक्खी से दूसरी यह शिक्षा ग्रहण की कि मनुष्य किसी एक से बंधे नहीं और जिस प्रकार मधुमक्खी विभिन्न पुष्पों से, चाहे वे छोटे हों या बड़े, सार संग्रह करती है वैसे ही बुद्धिमान पुरुष छोटे-बड़े सभी से सार-तत्त्व को ग्रहण करे। साथ ही उसे संग्रही नहीं होना चाहिए, अन्यथा वह मधुमक्खी के समान अपना जीवन भी संग्रहीत धन के लोभ में गंवा बैठता है।

15. हिरण से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

जंगल के पशु-पक्षी भी संगीत से आकृष्ट होते हैं। एक दिन श्री दत्तात्रेय ने देखा कि वंशी की मधुर स्वर-लहरी से आकर्षित होकर एक हिरण शिकारी के बाण से मारा गया।

हरिन से भगवान दत्तात्रेयजी ने यह सीखा कि मनुष्य को कभी विषय-संबंधी गीत, जिससे वासना जगे, नहीं सुनना चाहिए; क्योंकि जैसे हरिन व्याध के गीत से मोहित होकर बंध जाता है, उसी प्रकार श्रुति-मधुर विषयवासना की ओर प्रवृत्त करने वाला गीत, नृत्य, वचन अथवा शब्द से मनुष्य को विरत रहना चाहिए अन्यथा वह बंधन और नाश का कारण होता है।

16. मछली से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

कांटे में लगे मांस खंड को लेने मछली आती है और मांस के भीतर लगे कांटे में उसका मुख फंस जाता है और मृत्यु को प्राप्त होती है।

मछली से भगवान दत्तात्रेयजी ने जो शिक्षा ग्रहण की वह यह है कि जैसे मछली कांटे में लगे हुए मांस के टुकड़े के लोभ से अपने प्राण गंवा देती है, वैसे ही स्वाद का लोभी मनुष्य भी अपनी जिह्वा के वश में होकर प्राण गंवा देता है। विवेकी पुरुष को रसनेंद्रिय को वश में कर लेना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

17. वेश्या से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

एक दिन भगवान दत्तात्रेय ने एक अत्यंत व्यथित महिला के दर्शन किए। निशीथ वेला, अर्धरात्रि का समय, एक सुसज्जित कक्ष में सुगंधित दीपक जल रहा था। वहां से उड़ने वाली सुगंध राजपथ पर आ रही थी। भगवान् दत्तात्रेय अपने परिव्राजक जीवन में निरंतर भ्रमण करते रहते थे। उन्होंने देखा वह सुंदर युवती बार-बार द्वार पर आती है, किसी को निहारती है फिर दीर्घ श्वास लेकर पुनः कक्ष में चली जाती है। भगवान् दत्तात्रेय दूर खड़े हुए सब देख रहे थे। उसकी आंखें गीली हो रही हैं, अश्रुपात हो रहा है। शरीर में कंपन होता हुआ दिखाई दे रहा है। वह तितिक्षु नेत्रों से मार्ग को देख रही है। हल्की सी आहट होते ही वह पुनः द्वार पर आती है। उसे अपने प्रियतम की अत्यंत गहन प्रतीक्षा है। रात भर प्रिय मिलन की आशा में वह बेचैन रही। सुबह होने को आई तो निराश होकर वह अपनी शैय्या पर सो गई। उसे तुरंत गहरी नींद आ गई। भगवान् ने सोचा किसी से कुछ पाने की आशा ही दुःख (मनस्ताप) की पहली सीढ़ी है। जो कुछ पाने के प्रति आशावान है वह, जब तक आशा के पाश में बंधी है तब तक उसमें व्यथा थी, अशांति थी। उद्विग्नता मिट गई और वह गहरी नींद में सो गई है। इससे यह सिद्ध हुआ कि आशा ही महान् दुःख है और निराशा (वैराग्य) ही परमसुख है। त्रेतायुग के भगवान् दत्तात्रेय ने इस सीख के लिए उस पिंगला नामक वेश्या को अपना गुरु माना और नमस्कार करके चल पड़े।

स्वेच्छाचारिणी और रूपवती पिंगला नाम की वेश्या से भगवान् दत्तात्रेयजी ने यह शिक्षा ग्रहण की कि आशा ही महान् दुःख है और निराशा (वैराग्य) में परमसुख है। जिस प्रकार उस वेश्या को अपने व्यवसाय में निराशा होने पर वैराग्य उत्पन्न हो गया है और वैराग्य होने पर अपने भाव की अभिव्यक्ति में उसने एक गीत गाया, जिसका आशय यह था कि मनुष्य आशा की फांसी पर लटक रहा है, इसे तलवार की तरह काटने वाली यदि कोई वस्तु है तो वह केवल वैराग्य ही है। पिंगला ने कहा कि मैं इंद्रियों के अधीन होने के कारण दुष्ट पुरुषों के अधीन हो गई, मेरे मोह का विस्तार तो देखो, मैं सचमुच मूर्ख हूं। मेरा यह शरीर माया-मोह के हाथों बिक गया है। यह शरीर एक घर के समान है, इसमें हड्डियों के टेढ़े-तिरछे बांस और खम्भे लगे हुए हैं, चमड़े और रोएं तथा नाखूनों से यह छाया गया है। इसमें नौ दरवाजे हैं, जिनसे मल निकलते रहते हैं। इसमें संचित सम्पत्ति के नाम पर केवल मल और मूत्र ही हैं। अब मैं भगवान् का यह उपकार आदरपूर्वक स्वीकार करती हूं कि उसने इस निराशा के माध्यम से वैराग्य का दीप जला दिया। अब मैं विषय भोगों की दुराशा छोड़कर उन्हीं जगदीश्वर की शरण ग्रहण करूंगी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

18. कुरर पक्षी से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

भगवान् श्री दत्त स्वामी ने एक बार अचानक आकाश की ओर देखा तो उन्हें कुरर नामक एक पक्षी उड़ता हुआ दिखलाई दिया। कुरर पक्षी की चोंच में मांस का टुकड़ा था। उस मांस के टकड़े को लेने के लिए अनेक पक्षी उसे ही मारने को उद्यत हो गए, किंतु ज्यों ही उसने मुंह में रखा मांस का टुकड़ा जमीन की ओर गिराया, त्यों ही सभी पक्षी उसी ओर दौड़ पड़े, जिससे वह निश्ंचित होकर पुन: आकाश में विचरण करने लगा। बुद्धिमान पुरुष को अनन्त सुखस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति के लिए कुरर पक्षी द्वारा संग्रहीत मांस का टुकड़ा फेंकने की भांति संचित धन का त्याग करके सुखी हो जाना चाहिए। त्याग और अपरिग्रह द्वारा ही मनुष्य निश्ंचित होकर जीवनयापन कर सकता है। **प्रिय वस्तु का संग्रह ही दुःख का कारण है,** यह शिक्षा भगवान दत्तात्रेयजी ने कुरर पक्षी से ली।

इस असार संसार में परिवार का मुखिया कुरर पक्षी की भांति है तथा उसके द्वारा संग्रहीत धन ही वह मांस का टुकड़ा है, जिसे प्राप्त करने के लिए परिवार के सभी कुटुंबजन लालायित रहते हैं तथा कुरर को प्रताड़ित करने की चेष्टा करते हैं। अत: विवेकी पुरुष को व्यर्थ के संग्रह से बचना चाहिए।

19. शिशु से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

एक अबोध शिशु को मान-अपमान का दु:ख नहीं होता। किसी के प्रति ईर्ष्या, राग-द्वेष या मलिन भाव नहीं होता। उसकी निर्दोषिता गुणीजनों के लिए आदर्श है।

मान-अपमान का ध्यान न रखने वाले, घर एवं परिवार की चिंता से विहीन आत्मरागी बालक से भगवान् दत्तात्रेयजी ने यह शिक्षा ग्रहण की कि इस संसार में दो ही प्रकार के व्यक्ति निश्ंचित और परमानंद में रहते हैं—एक तो भोला-भाला निश्चेष्ट नन्हा सा बालक और दूसरा वह पुरुष जो गुणातीत हो गया हो।

20. कुंवारी कन्या से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

एक बार श्री दत्त स्वामी किसी गांव में से होकर गुज़र रहे थे। किसी घर में एक कुमारी कन्या थी। घर वाले कहीं बाहर गये हुए थे। उस कन्या को देखने के लिए वरपक्ष के लोग आने वाले थे। घर में पकाने को कुछ नहीं था। घर में चावल की भूसी पड़ी थी। कन्या उसे कूटकर चावल निकालने लगी। हाथ में पहनी चूड़ियों के कारण धान कूटने से आवाज़ आने लगी। तब कन्या ने विचार किया कि अतिथि के आने पर धान कूटना दरिद्रता का सूचक है। अत: आवाज़ न हो, अतिथि को धान कूटने का पता न चले, उसने एक कंगन उतार दिया, परंतु फिर भी ध्वनि हुई तो उसने एक-एक करके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्य सभी कंगन उतार दिए और धान कूट दिया । अत: जहां अनेक रहते हैं, वहां कलह (ध्वनि) स्वाभाविक है । दत्त भगवान ने इस सीख के लिए कन्या को धन्यवाद दिया, उसे गुरु माना ।

अतिथि सत्कार के लिए धान कूटने वाली कुमारी कन्या से भगवान् दत्तात्रेयजी ने यह शिक्षा ग्रहण की कि जब बहुत लोग एक साथ रहते हैं तब कलह होता है और जब दो आदमी एक साथ रहते हैं, तब भी वाद-विवाद की सम्भावना रहती है, इसलिए कुमारी कन्या की चूड़ी के समान जब तक अकेली नहीं हुई तब तक आपसी संघर्ष से और उससे उत्पन्न ध्वनि से वह अपने को छिपा न सकी थी । इसलिए साधक को एकांत सेवन की भी आवश्यकता उसके साधनाकाल में होती ही रहती है ।

21. बाण बनाने वाले से शिक्षा

मिथिला के व्यस्त राजमार्ग पर एक लोहार बाण बना रहा था । वह काम में इतना मग्न व तल्लीन था कि उसे आस-पास की घटना का कोई ध्यान ही नहीं था । तत्काल उस देश के राजा की शाही-सवारी, गाजे-बाजे के साथ वहां से गुज़री पर लोहार का ध्यान भंग नहीं हुआ। कुछ देर बाद एक राजपुरुष वहां आया और उसने लोहार से पूछा—'क्यां तुमने राजा की सवारी यहां से निकलते देखी ?' लोहार ने कहा 'पता नहीं ! !' श्री दत्त स्वामी ने अर्जुन की तरह लक्ष्य वेधन में पटु उस लोहार की कार्य-निष्ठा को नमन किया ।

बाण बनाने वाले से भगवान श्री दत्तात्रेयजी ने यह शिक्षा ग्रहण की कि आसन और श्वास को जीतकर वैराग्य और अभ्यास के द्वारा अपने मन को वश में किया जा सकता है, जैसे एक बाण बनाने वाले को रास्ते में आने-जाने वालों का पता नहीं लग सका था ।

22. सांप से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

श्री दत्त स्वामी ने एक बार सर्प की चेष्टाओं का सूक्ष्म परीक्षण किया । उन्होंने देखा कि सर्प कभी भी अपने रहने के लिए घर नहीं बनाता । सर्प कभी समूह में नहीं रहता, वह अकेले विचरण करता है । अत: संन्यासियों को भी सर्प की भांति आचरण करना चाहिए ।

साधक को सर्प की भांति अकेले ही विचरण करना चाहिए, मंडली नहीं बांधनी चाहिए, मठ नहीं बनाना चाहिए, वह गुहा आदि में पड़ा रहे, बाहरी आचारों से पहचाना न जाए, किसी से सहायता न ले और बहुत कम बोले, अनित्य शरीर के लिए घर बनाने के प्रपंच में न पड़े, सर्पवत जहां कहीं स्थान मिले, वहीं आराम से समय काट ले । यही भगवान् दत्तात्रेयजी ने सर्प से शिक्षा ग्रहण की ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

23. मकड़ी से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

मकड़ी अपने मुख से लार टपकाती हुई जाला बुनती है, फिर उस जाले को ही खा जाती है। फलतः श्री दत्त स्वामी ने सोचा कि मकड़ी में सृष्टि, स्थिति और संहार तीनों शक्तियां विद्यमान रहती हैं।

सबके पालक भगवान ही सृष्टि के कर्ता, धर्ता एवं हर्ता भी हैं। जैसे मकड़ी अपने हृदय से मुंह के द्वारा जाला फैलाती है, उसी में विहार करती है और फिर उसे निगल जाती है वैसे ही परमेश्वर भी इस जगत में अपने में से उत्पन्न करते हैं, उसमें जीवरूप से विहार करते हैं और फिर उसे अपने में ही लीन कर लेते हैं। यही भगवान दत्तात्रेयजी ने मकड़ी से शिक्षा ग्रहण की।

24. भृंगी कीट से ग्रहण करने योग्य शिक्षा

श्रीदत्त स्वामी ने देखा कि भृंगी कीट अन्य कीड़ों को पकड़कर उसे अपने जैसे रूप में परिवर्तित कर देता है । ऐसे ही यदि मनुष्य भगवान का ध्यान करे तो आनंदमय वह जीव भगवद्रूप हो सकता है।

यदि प्राणी स्नेह से, द्वेष से अथवा भय से भी जान-बूझकर एकाग्ररूप से अपना मन किसी में लगा दे तो उसे उसी वस्तु का स्वरूप प्राप्त हो जाता है, जैसे भृंगी एक कीड़े को ले जाकर दीवार पर अपने रहने की जगह में बंद कर देता है तब वह कीड़ा भय से उसी का चिंतन करते-करते अपने शरीर का त्याग किए बिना उसी शरीर से तद्रूप हो जाता है। इसलिए मनुष्य को विषयवस्तु का चिन्तन न करके केवल परमात्मा का ही चिन्तन करना चाहिए यही शिक्षा भगवान दत्तात्रेयजी ने भृंगी कीड़े से ग्रहण की जो आगे चलकर 'कीट भ्रमर न्याय' से प्रसिद्ध हो गई।

क्या गुरु बदला जा सकता है?

सागर (मध्य प्रदेश) से एक संभ्रान्त महिला गुरुदेव के पास आई। उसने एक लम्बी दुःखद कहानी सुनाते हुए बताया कि उसने जिसको गुरु बनाया वह तो एक छली, धोखेबाज और नटवरलाल को मात देने वाला ठग निकला। उसकी कंठी व फोटो महिला के गले में लटक रही थी। उस महिला ने रोते हुए बताया कि वह गुरु द्वारा प्रदत्त यह कंठी (माला) उतार नहीं सकती, क्योंकि गुरु तो जीवन में केवल एक ही बार बनाया जाता है और वह किसी भी प्रकार के प्रायश्चित, शाप या अशुभ को सहने के लिए अब तैयार नहीं है। उसके पास सबसे विकट समस्या थी, गुरु बदलने की। गुरुदेव अवाक रह गये। क्या अध्यात्म मार्ग के पथिक गुरु भी धोखेबाज होते हैं? क्या धोखेबाज व्यक्ति भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुरु होने का स्वांग कर सकते हैं ? शास्त्रों में दुष्ट गुरु बदलने के लिए विधान दिए गए हैं । गुरु-मंत्र को अष्टगंध से पीपल के पत्ते पर लिखकर पानी में बहाने का विधान है, पर यहां समस्या विचित्र थी । वह संभ्रांत महिला गुरु बदलने का साहस नहीं जुटा पा रही थी । यह जानते हुए भी कि उसका गुरु धोखेबाज है, उसके साथ भारी छल किया है फिर भी वह उस गुरु-घंटाल की माला गले से उतारने को तैयार न थी । गुरुदेव की स्थिति उस डॉक्टर की तरह थी जिसका मरीज़ बीमारी तो बता रहा या पर ठीक होने के लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं था ।

आखिर श्री द्विवेदी ने उसे '**सिंह सिद्धांत सिंधु**' और **मेरूतंत्र**' के उन प्रकरणों को बताया और समझाया कि गलती से कोई दुष्ट गुरु के चक्र में फंस जाए तो उससे छुटकारा पाने का विधान शास्त्रों में स्पष्ट है । कोई प्रायश्चित नहीं लगता, कुछ भी अशुभ नहीं होता । **जीवन में केवल एक ही गुरु होता है, यह धारणा बिल्कुल गलत है, क्योंकि एक ही गुरु से सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं होता । व्यक्ति को जीवन के भिन्न-भिन्न मार्गों में अनेक गुरु मिलते हैं** । पर 'दीक्षा गुरु' बार-बार बदलने की परंपरा प्रशस्त नहीं है । अत: जो गुरु आप स्वेच्छा से वरण कर रहे हैं, उससे सोच-समझकर ही दीक्षा लें । जिस प्रकार शिष्य को अनेक विधि से परखा जाता है, उसी प्रकार गुरु को भी परखें, इसमें कोई बुराई नहीं । यदि गुरु के पास आप से अधिक ज्ञान व अनुभव का अथाह समुद्र है तो उसमें डुबकी लगाने में कोई बुराई नहीं । उससे आपको कुछ न कुछ ज्ञान का अनमोल मोती प्राप्त ही होगा, आप घाटे में नहीं रहेंगे ।

शिष्य-परीक्षा की सौ कसौटियां

गुरु को चाहिए कि ज्ञान या क्रिया से शिष्य की प्रयत्नपूर्वक परीक्षा करे । यह परीक्षा एक वर्ष, छ: मास, या तीन मास तक हो सकती है । '**श्री विद्यार्णवतन्त्र**' में 51 प्रकार के वर्जित शिष्यों की सूची प्रकाशित की है । इस संदर्भ में अब कुछ महत्त्वपूर्ण सूत्र यहां उद्धृत कर रहे हैं जो गुरु-शिष्य परम्परा के लिए उपयोगी हैं—

(1) गुरु के घर को शिष्य पावन मंदिर समझे, उसे साफ करे, ऐसा विचार न करे कि मुझे मजबूरी में यह सब कुछ करना पड़ रहा है, जब वह गुरु के घर को मंदिर समझकर कार्य करेगा तो निश्चय ही शिष्य बनने का अधिकारी हो सकेगा ।

(2) इस बात का बराबर ध्यान रखें कि शिष्य की भावना गुरु के प्रति किस प्रकार की है, क्या केवल होंठों से ही प्रशंसा का भाव है या उसके मन में भी गुरु के प्रति सच्ची भावना है, यदि वह दिखावा करता है या गुरु को प्रभावित करने की ही कोशिश करता है और वास्तव में वह उस प्रकार का नहीं है, तो वह शिष्यता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(3) शिष्य पर गुरु की हमेशा सतर्क दृष्टि बनी रहे । वह इस बात का ध्यान रखें कि होने वाले शिष्य का चाल-चलन कैसा है, उसका व्यवहार, उसका रहन-सहन, उसका खान-पान किस प्रकार का है, दूसरे व्यक्तियों के साथ उसका व्यवहार किस प्रकार का है ?

(4) यह देखें कि उसके मन में सेवा की कितनी गहरी भावना है । यदि वह पूर्णता के साथ गुरु की सेवा को ही अपनी निधि समझता है, गुरु की सेवा से अलग होने पर उसकी आंखें छलछला आती हैं तो वास्तव में ही वह शिष्य बनने योग्य है ।

(5) कभी-कभी शिष्य को कोई गोपनीय बात कह दें चाहे उस गोपनीय बात का अस्तित्व भी न हो और फिर यह देखें कि यह बात या तथ्य शिष्य के मन में टिकता भी है या नहीं । यदि मन में बात नहीं टिकती है, और वह दूसरों को राज़ की बात या गोपनीय बात कह देता है, तो निश्चय ही वह शिष्य बनने के योग्य नहीं है ।

(6) गुरु इस बात को भी ध्यान में रखें कि वह परिश्रमी है या नहीं । कामचोर या आलसी शिष्य आगे चलकर निश्चित रूप से गुरु का नाम डुबो देते हैं ।

(7) गुरु इस बात का ध्यान रखें कि वह तार्किक तो नहीं है, अपनी जिज्ञासा को गुरु के चरणों में बैठकर पूर्ण करना अलग बात है, और कुतर्क करके अपने आपको श्रेष्ठ सिद्ध करना बिलकुल दूसरी बात, अत: जो बुद्धि पर हावी हैं, जो केवल कुतर्क ही कर सकते हैं, जो बात-बात पर तर्क करते हैं, वे शिष्य बनने के योग्य नहीं है ।

(8) गुरु कभी-कभी उसे ज़रूरत से ज्यादा कार्य दे, ज़रूरत से ज्यादा परिश्रम करने की आज्ञा दें, इतना अधिक परिश्रम करा लें कि वह थककर चूर हो जाए फिर भी उसके चेहरे पर कोई शिकन न आवे और उतनी ही प्रफुल्लता के साथ कार्य करे तो निश्चय ही वह शिष्य बनने के योग्य है ।

(9) गुरु के यहां उनसे मिलने के लिए सैकड़ों लोग आते हैं जो कि विविध प्रांतों से और विविध स्थानों से आते हैं, गुरु यह देखें कि उस शिष्य की यह आदत तो नहीं कि वह उनसे गप्पें लड़ाता हो या उनसे घुलता-मिलता हो, या उनसे बातचीत में ही समय बरबाद करता हो । यदि वह ऐसा करता है तो निश्चय ही वह शिष्य बनने के योग्य नहीं है । कौन मिलने के लिए आया है, क्यों मिलने आया है, कहां से आया है, यह जानना शिष्य के लिए आवश्यक नहीं होता, शिष्य को ऐसा करना भी नहीं चाहिए ।

(10) इस बात का गुरु विचार करें कि कहीं इसमें बुरी आदत तो नहीं, छिपकर धूम्रपान करना या किसी प्रकार की बुरी आदत का पालन करना आदि । यदि शिष्य में ऐसी प्रवृत्ति है तो उस शिष्य को तुरंत छोड़ देना चाहिए, क्योंकि धूम्रपान, असत्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भाषण, साबुन और तेल लगाना, सुगंधित इत्र लगाना, अपने बालों को संवारना सजाना, छाता धारण करना या कोमलता प्रदर्शित करना शिष्य की हीनता है ।

(11) इस बात का विचार करें कि कहीं शिष्य में छुपकर बात सुनने की आदत तो नहीं है, यदि गुरु कक्ष में किसी से बात कर रहा है तो शिष्य छुपकर या झांककर देखने की आदत नहीं रखता, और यदि उसमें ऐसी आदत है तो निश्चय ही ऐसे शिष्य का तुरंत परित्याग कर देना चाहिए ।

(12) गुरु इस बात को अच्छी तरह से परख लें, कि कहीं शिष्य में झूठ बोलने की आदत तो नहीं है, ऐसा नहीं कि वह किसी बात को छुपाने की कोशिश करता हो या किसी तथ्य को बढ़ा-चढ़ाकर कहने का अभ्यस्त हो, ये दोनों ही शिष्य के लिए दुर्गुण हैं और ऐसे दुर्गुण वाले शिष्य को रखना गुरु का स्वयं पतन है ।

(13) गुरु इस बात का विचार करें कि क्या वह साधना के प्रति एकनिष्ठ है या नहीं । यदि वह रुचि के साथ साधना करने की इच्छा रखता हो तो निश्चय ही वह योग्य शिष्य है, परंतु यदि केवल दिखावा करता है या आलसी है या साधना में रुचि नहीं है या एक आसन पर बैठने का अभ्यस्त नहीं है तो वह सही शब्दों में शिष्य कहलाने का अधिकारी नहीं है ।

(14) गुरु इस बात का भी विचार करें कि कहीं शिष्य व्यभिचारी और विलासी तो नहीं है, उसके मन में कोई कामुक प्रवृत्ति तो नहीं है, यदि वह छिपकर पत्र लिखता हो या कोई चीज छिपाकर रखने का अभ्यंस्त हो तो निश्चय ही ऐसा शिष्य निंदा का पात्र है, और ऐसे शिष्य को तुरंत छोड़ देना चाहिए ।

(15) गुरु इस बात का भी विचार करें कि शिष्य क्षमता के साथ गुरु की आज्ञा का पालन करता है, कभी-कभी उसे विपरीत आदेश भी देकर देख लेना चाहिए कि क्या वह आदेश पालन करने को तत्पर है या नहीं । यदि वह आदेश पालन में हिचकिचाहट रखता है, तो निश्चय ही वह अयोग्य शिष्य है ।

(16) गुरु की सेवा और गुरु से संबंधित कार्य करने में उसे प्रसन्नता का अहसास होना चाहिए, गुरु के पैर दबाना, उनके शरीर की तेल मालिश करना, उनके कपड़े धोना, आश्रम की सफाई करना और आश्रम को साफ-सुथरा बनाये रखने की भावना यदि शिष्य में नहीं है तो निश्चय ही ऐसा शिष्य आगे चलकर पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता है ।

(17) गुरु के घर की किसी भी वस्तु पर शिष्य का कोई अधिकार नहीं होता, इसलिए बिना गुरु की अनुमति के वह कागज के टुकड़े को भी अपने स्वयं के लिए उपयोग न करे, बिना अनुमति के वह किसी भी चीज को न तो छुए और न उपयोग करे ऐसा विचार रखने वाला ही सही शिष्य हो सकता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(18) गुरु को यह भली प्रकार से जांच परख लेना चाहिए कि शिष्य की नज़र साफ हो। उसकी नज़र में किसी प्रकार की कोई गंदगी न हो, गुरु-पत्नी या गुरु-पुत्री पर उसकी आंखों में कोई गलत भावना न हो, यदि ऐसा है तो ऐसे शिष्य को तुरंत ही त्याग देना चाहिए।

(19) गुरु यह अच्छी तरह से देखें कि शिष्य उसके प्रति कितनी समर्पण भावना से कार्य कर रहा है। यदि समर्पण भावना में न्यूनता है या उसके मन में तर्क है। या वह अपने आपको कहीं न कहीं श्रेष्ठ समझता है तो ऐसा शिष्य सही शब्दों में शिष्य कहलाने का अधिकारी नहीं है और ऐसे शिष्य को तुरंत छोड़ देना चाहिए।

(20) जो गुरु से छिपाकर धन रखता है, जो गुरु से छिपाकर धन संचय करता है या जो गुरु के घर आने-जाने वालों की जासूसी करता है या जो इस बात का विचार करता है कि गुरु किन से क्या ले रहे हैं या क्या दे रहे हैं या परस्पर क्या बातें कर रहे हैं तो ऐसा शिष्य अधम ही कहा जाता है और ऐसे शिष्य को तुरंत छोड़ देना चाहिए।

(21) जिस शिष्य में अपने कुल, जाति, गोत्र, वंश, धन या अपनी कुल-परंपरा का घमंड हो, ऐसे घमंडी को भी तुरंत छोड़ देना चाहिए।

(22) यदि महिला शिष्य है और उसमें अपने रूप, यौवन और सुंदरता का घमंड है या जो रूप और यौवन के बल पर गुरु को प्रभावित करना चाहती है, ऐसी शिष्या को तुरंत छोड़ देना चाहिए।

(23) जो शिष्या शुद्ध आचरण वाली न हो, जिसकी आंखों में कामुकता हो जो व्यभिचारी हो, या जिसमें घमंड हो ऐसी शिष्या को भी छोड़ देना श्रेयस्कर होता है।

(24) यदि शिष्या को किसी भी प्रकार की कोई आज्ञा देने पर वह आज्ञा पालन में हिचकिचावे या आज्ञा पालन में तत्परता न बरते या तर्क वितर्क करे तो भी ऐसी शिष्या का परित्याग कर देना चाहिए।

(25) शिष्या के मन में यह अहसास ही नहीं होना चाहिए कि मैं "कुछ" हूं यह "कुछ" होने का भाव ही उसके पतन का रास्ता है।

(26) गुरु के सामने न तो सुंदर होने का अहसास होना चाहिए न यह एहसास होना चाहिए कि गुरु ने क्या और कैसी आज्ञा दी है। आज्ञा-पालन, शुद्धता के साथ कर्तव्य पालन उसके जीवन का धर्म और कर्तव्य होना चाहिए और ऐसी शिष्या ही जीवन में श्रेष्ठता प्राप्त करती है।

(27) न तो गुरु अपने कर्तव्य और मर्यादा से नीचे गिरे और न गुरु अपने शिष्य या शिष्या को मर्यादा से नीचे गिरावें, परस्पर प्रेम, स्नेह, और विश्वास का ताना-बाना भली प्रकार से बना रहे, ऐसा होने पर ही पूर्णता आ सकती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(28) कभी-कभी गुरु अप्रत्याशित और आश्चर्यजनक आज्ञा देकर उसका पालन करवावें, उसकी निष्ठा के बल पर ही उसकी पात्रता को परखना चाहिए।

(29) गुरु से मिलने के लिए शिष्य के मन में वेग होना चाहिए। यदि दो तीन महीनों के अंतराल से भेंट न हो सके तो उसका मन छटपटाना चाहिए।

(30) जब गुरु बुलावे तब सौ काम छोड़कर गुरु के चरणों में पहुंच जाए, और जब तक गुरु अपने पास रहने का आदेश दें तब तक गुरु के चरणों में बना रहे यह उसके जीवन का कर्तव्य और धर्म होना चाहिए।

(31) कभी-कभी गुरु परीक्षा के लिए कुछ लोगों के सामने या अन्य शिष्यों के सामने उसको ताड़ना दे, बुरा भला कहे और बाद में उसके मन पर क्या प्रतिक्रिया रहती है या संबंधों में कितना अंतर आता है, इस अंतर के आधार पर ही उसकी परीक्षा होनी चाहिए।

(32) कभी-कभी गुरु उसे आश्रम से या घर से निकाल दे और छः महीने तक उससे संपर्क ही न रखे, पर बराबर देखता रहे कि उसके मन की प्रतिक्रिया क्या रहती है ? यदि वह गुरु की निंदा या बुरा-भला विचार समाज में फैलाता है तो निश्चय ही ऐसा शिष्य अयोग्य माना जाता है। वस्तुतः ये सूत्र अपने आप में पूर्ण हैं और इसके अलावा भी गुरु जिस प्रकार से भी चाहे शिष्य की परीक्षा ले सकता है। पर एक बार परीक्षा में पूर्ण हो जाए तब उसे प्रयत्न कर अपने समकक्ष बना देता है अथवा गुरु के मानसिक संकल्प से ही शिष्य का काम पूरा हो जाता है।

विप्रोऽपि गुणयुक्तो वाप्यभक्तो न प्रशस्यते।
म्लेच्छोऽपि गुणहीनो वा भक्तिमान् स विशिष्यते॥

(33) अंत में कहा गया है कि गुणवान् ब्राह्मण हो परंतु उसमें भक्तिभाव समर्पण की भावना न हो तो वह शिष्य होने के योग्य नहीं है। म्लेच्छ व शूद्र गुणहीन हो, परंतु भक्तिभाव, श्रद्धा एवं विश्वास से युक्त हो तो वह शिष्यता के लिए प्रशस्त है।

(34)शास्त्रीय दृष्टि से अयोग्य शिष्यों की सूची इस प्रकार हैं— (35) कुरूप (36) गुणहीन (37) परशिष्य (38) पाखंडी (39) हीनाधिक विकारांग (40) हमेशा विकल (रोगी) रहने वाला (41) जूठा खाने वाला (42) अपवित्र वस्तुओं का भक्षण करने वाला (43) स्वेच्छाधारी (44) कुटिल (45) निद्रा आलस्य युक्त (46) जुआरी (47) व्यसनी (48) मिथ्याचारी (49) गुरुभक्ति शून्य (50) चपल (51) शठ (ढीठ) (52) चरित्रहीन (कामी) (53) रहस्यभेदक (54) कृतघ्न (55) बिल्ली जैसी चेष्टा वाला (56) बगुले जैसी चेष्टा वाला (57) देवकार्य में रुचि न लेने वाला (58) छिद्रान्वेषक (59) विश्वासघातक (60) ब्राह्मणद्रोही या पापकार्य (61) पापकार्य में रत (62) याचक (भिक्षु) (63) बुरी सोहबत में रहने वाला (64) बहुत बक-बक करने वाला (65) आत्मप्रशंसी (66) कलहप्रिय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(67) वृथा आक्षेप करने वाला (68) मुंह पर मीठा एवं पीछे बुराई करने वाला (69) अप्रिय (कठोर) वचन बोलने वाला (70) विद्या चोर (71) रुक्ष व्यवहार करने वाला (72) दूसरों के गुणों से द्वेष रखने वाला (73) क्रोधी (74) नास्तिक (75) मित्रद्रोही (76) कुटुम्ब विरोधी (77) प्रत्येक काम में "ना" बोलने वाला (78) निरुत्साही (79) तस्कर (80)अति हंसने वाला (81) असंयम मजाक करने वाला (82) निर्लज्ज (83) अहंकारी (84) लोभी (85) अधीर (86) अधिक भोजन करने वाला (87) समय भ्रष्ट (88) स्त्री भ्रष्ट (89) प्रतिपल दीनता प्रदर्शित करने वाला (90) अप्रसन्न चित्त वाला (91) हीन मनोवृत्ति वाला (92) जड़बुद्धि (93) कठोर (94) निर्दयी (95) माता-पिता, भाई बन्धु का अहित चाहने वाला (96) शापित (97) राजद्रोही (98) असन्तुष्ट (99)व्यर्थ चिंता करने वाला (100)जातिच्युत ।

ऐसे दुर्गुणी व्यक्ति चाहे स्त्री हो या पुरुष, प्रथम दृष्टि में ही इनको त्याग देना चाहिए ।

सुयोग्य शिष्य के कर्तव्य

ऐसी बात नहीं है कि जिज्ञासु (व्यक्ति) विद्यार्थी को ही सदैव गुरु की तलाश रहती है अपितु गुरु को भी सुयोग्य एवं सत्पात्र शिष्य की तलाश रहती है । जिस प्रकार कुशल जौहरी को सदैव अच्छे हीरे की तलाश रहती है ठीक उसी प्रकार से सत्गुरु को भी योग्यतम शिष्य की तलाश रहती है ।

आकुल-व्याकुल छत्रपति शिवाजी को समर्थ गुरु रामदास जैसे फक्कड़ व सिद्ध गुरु मिल गए । धनुर्विद्या के उत्कट जिज्ञासु एकलव्य को द्रोणाचार्य मिल गये परंतु रामकृष्ण परमहंस जैसे गुरु को विवेकानंद जैसे शिष्य की तलाश थी । आचार्य चाणक्य को भी एक ऐसे एकनिष्ठ क्षत्रीय शिष्य की तलाश थी, जो उनके अपमान का बदला ले सके । आचार्य चाणक्य ने एक साधारण क्षत्रीय युवक को भारत का सर्वप्रभुत्व संपन्न शक्तिशाली सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य बना दिया तथा सिकंदर महान के सेनापति सैल्यूकस की पुत्री से चन्द्रगुप्त का विवाह कराया । द्रोणाचार्य ने अपने प्रिय शिष्य अर्जुन को अजेय धनुर्धर होने का आशीर्वाद दिया तथा गुरु-दक्षिणा में महाराजा द्रुपद के जीवित शरीर को बंदी बनाकर, अपने चरणों में झुकाने की आज्ञा प्रदान की और फिर द्रुपद कन्या द्रौपदी से अर्जुन का विवाह रचाया ।

कहने का तात्पर्य यह है कि प्राचीन काल में शिष्य के संपूर्ण जीवन एवं वर्चस्व पर गुरु का आधिपत्य था । शिष्य गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण किया करते थे । शिष्य का भरण-पोषण गुरुकुल में होता था । गुरु शिष्य को पुत्र के समान पालते थे, उनसे वात्सल्य भाव अनन्य स्नेह रखते थे । राजा और रंक में भेद न था । गुरु संदीपन के आश्रम में यादवेंद्र भगवान श्रीकृष्ण और गरीब ब्राह्मण सुदामा एक ही प्रकार का भोजन प्राप्त करते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

थे। दोनों ही आश्रम के लिए लकड़ियां काटकर समान रूप से श्रम व गुरु चरणों की सेवा किया करते थे। परंतु आजकल कलिकाल का प्रभाव बढ़ गया है अब 'गुरुमार शिष्य' पैदा होने लगे हैं। जब तक गुरु से स्वार्थ है, दिन में दस चक्कर काटते हैं और कार्य समाप्त होने के बाद वर्षों तक गुरु का स्मरण नहीं। धन के लालच में आकर शिष्य वर्ग ने गुरुजनों की हत्या तक की है। अत: गुरुजन भी आलतू-फालतू शिष्यों के मोहजाल में फंसने से कतराते हैं। अत: ऐसे में शिष्य वर्ग को उनके कर्त्तव्य का बोध कराना अति आवश्यक है अन्यथा गुरु ऋण मृत्युपर्यंत उसका पीछा नहीं छोड़ता।

(1) गुरु की आज्ञा शिष्य के लिए सर्वोपरि एवं सर्वप्रथम अनुपालनीय कर्त्तव्य है।

(2) शास्त्र वचनों के अनुसार ऋतु परिवर्तन एवं संक्रांति परिवर्तन पर अर्थात् वर्ष में कुल 12 बार शिष्य को गुरु से मिलना ही चाहिए।

(3) वर्ष में एक बार 'गुरु पूर्णिमा' (आषाढ़ सुद पूनम) को आती है। गुरु पूर्णिमा का यह दिन महर्षि वेद व्यास का जन्म दिन है। क्योंकि महर्षि वेद व्यास ही समस्त वेद-पुराणों के रचनाकार, ज्ञान के प्रसारक, अंवेषक रहे हैं अत: इन्हें विश्वगुरु एवं आदि गुरु होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। गुरु पूर्णिमा शिष्य वर्ग के लिए आदर्श पर्व है। शिष्य चाहे कहीं भी हो इस दिन गुरु के पास जाता है। उनकी अर्चना एवं पंचोपचार षोडशोपचार पूजन करता है तथा यथोचित श्रीफल, पुष्पाहार, द्रव्य-दक्षिणा-मिठाई वगैरह भेंट कर गुरु को प्रसन्न कर, उनका आशीर्वाद प्राप्त करता है।

(4) प्रत्येक शुभ कार्य में, महत्त्वपूर्ण कार्य में गुरु की वाचिक आज्ञा एवं परामर्श लेते रहना चाहिए।

(5) कोई भी साधना गुरु से छिपकर या गुप्त रखकर नहीं करनी चाहिए।

(6) प्रत्येक शुभ कार्य में, पूजा-पाठ में गुरु का स्मरण अवश्य करना चाहिए।

(7) कोई भी मूलमंत्र सिद्ध करने के पूर्व गुरु-मंत्र की एक माला अवश्य जपनी चाहिए।

(8) देव मंदिर में और गुरु के पास कभी भी खाली हाथ नहीं जावें। चाहे पुष्प या पुष्प की पंखुड़ी ही ले जावें अन्यथा जो खाली जाता है, उसे खाली हाथ ही लौटना पड़ता है।

(9) शिष्य को हर प्रकार से ऐसे प्रयत्न करने चाहिएं जिससे गुरु प्रसन्न रहे। गुरु के कार्य में शिथिलता नहीं रखनी चाहिए। अपने मंत्र गुरु एवं संस्कार गुरु के चित्र पूजन स्थल में रखने चाहिए। शिष्य का परमकर्त्तव्य है कि गुरु की अंतिम अवस्था में स्वयं उपस्थित रहकर तन-मन-धन से गुरु की सेवा करें एवं मरणोपरांत 'गुरु प्रसादी' की व्यवस्था करें। गुरु के आदर्शों का पालन करना, प्रचार करना ही शिष्य की गुरु के प्रति सच्ची श्रद्धांजली है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दीक्षा की तिथियां एवं मुहूर्त

दीक्षा मुहूर्त निर्णय—

गुरु मुख से दीक्षित मंत्र ही मंत्र-साधना की सिद्धि का प्रथम सोपान है। दीक्षा के अभाव में करोड़ों बार जपा गया मंत्र भी सिद्ध नहीं होता। साधना में सफलता, अनुष्ठान में सिद्धि हेतु दीक्षा अनिवार्य है। 'नारदसंहिता' के अनुसार आचार्य (गुरु) से मंत्र-दीक्षा लिए बिना अथवा मंत्र-दीक्षा की दक्षिणा न देने पर कितना ही अभ्यास करने पर भी मंत्र फलप्रद नहीं होता। दीक्षा के माध्यम से ही गुरु शिष्य का कायाकल्प कर देता है। अतः यह दीक्षा सही मुहूर्त (समय) में ली जाए तो शीघ्र सिद्धी मिलती है। शास्त्रकारों ने दीक्षा हेतु मुहूर्त का निर्धारण इस प्रकार से किया है।

दीक्षा मास—

वैशाखे श्रावणे वाऽपि आश्विने कार्तिकेय वा।
फाल्गुणे मार्गशीर्षे या कुर्यान्मंत्रस्य दीक्षणम्॥

—सिद्धांतशेखर

शरत्काले च मंत्रस्य दीक्षा श्रेष्ठं फलप्रदा।
फाल्गुणे मार्गशीर्षे च ज्येष्ठे दीक्षा तु मध्यमा॥

—मंत्रमहार्णव

मंत्र दीक्षा वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, फाल्गुण या मार्गशीर्ष मास में देनी चाहिए। सिद्धांत शेखर में कहा गया है कि शरत्काल में मंत्र दीक्षा श्रेष्ठ फल देने वाली होती है। फाल्गुण, मार्गशीर्ष तथा ज्येष्ठ मास में दी जाने वाली दीक्षा मध्यम फल देने वाली होती है। आषाढ़ तथा श्रावण मास में दी जाने वाली दीक्षा कनिष्ठफल देने वाली होती है। अधिक मास के सभी महीने पौष और भाद्रपद महीना दीक्षा के लिए निंदित कहे गये हैं।

सूर्य-चन्द्र ग्रहण में दीक्षा—

निंदित महीनों में यदि ग्रहण लगा हो तो उस समय दीक्षा देना शुभ होता है। **'रूद्रयामल'** के अनुसार सूर्य-चन्द्र पर्व (ग्रहण) में मास, तिथि, वार इत्यादि शोधन की आवश्यकता नहीं रहती। इस दिन बिना अभ्यास के ही वेगपूर्वक मंत्र ही सिद्धि हो जाती है। संहिता ग्रन्थों में कहा गया है कि कर्क और मकर राशि पर सूर्य के पहुंचने पर, दोनों अयनों में संक्रांतियों पर और मदनोत्सव पर दीक्षा देनी चाहिए। इनके अतिरिक्त अन्य पवित्र महापर्वों पर भी दीक्षा देनी चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दीक्षा तिथियां एवं वार—

मुक्ति (मोक्ष-वैराग्य) चाहने वालों को कृष्ण पक्ष में दीक्षा लेनी चाहिए तथा लौकिक ऐश्वर्य, समृद्धि चाहने वाले को सदा शुक्ल पक्ष में दीक्षा लेनी चाहिए। पूर्णिमा, पंचमी, द्वितीया, सप्तमी, त्रयोदशी तथा दशमी तिथियां कामनाओं को पूर्ण करने वाली होती हैं।

भाद्रपद के कृष्णपक्ष की षष्ठी, आश्विन कृष्णपक्ष की त्रयोदशी, कार्तिक शुक्लपक्ष; इनमें दीक्षा लेने से करोड़ों तीर्थों का फल मिलता है।

रविवार, सोमवार, बुधवार, गुरुवार तथा शुक्रवार को दीक्षा देनी चाहिए शेष अन्य वार निंदित कहे गये हैं।

दीक्षा नक्षत्र एवं चंद्रमा—

श्रवण, आर्द्रा, धनिष्ठा तथा शतभिषा नक्षत्रों को तंत्र शास्त्र के मर्मज्ञों ने दीक्षा नक्षत्र कहा है। वैसे अश्विनी, रोहिणी, स्वाति, विशाखा, हस्त, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद एवं उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रों में मंत्रदीक्षा सार्थक रहती है।

इसी प्रकार मेष, कर्क, कन्या, तुला, वृश्चिक, मकर एवं कुंभ के चंद्रमा में दीक्षा देना हर प्रकार से शुभ फलदाई होता है।

विशिष्ट शास्त्र प्रावधान—

'सारसंहिता' नामक ग्रंथ में कहा गया है कि सद्‌गुरु का आसानी से मिलना कठिन है। अतः जब उनकी उपस्थिति की सूचना मिले, तभी जहां उनकी आज्ञा हो वहीं दीक्षा का महान् क्षण (मुहूर्त) है। सद्‌गुरु यदि ग्रामों, अरण्य में, खेत पर, दिन में या रात्रि में जब जहां प्रकट हो जाए, वहीं तत्काल दीक्षा हो जाती है।

इसी प्रकार **'तत्वसार'** नामक ग्रंथ में कहा गया है कि सद्‌गुरु की जब इच्छा हो, अनुज्ञा हो तभी दीक्षा हो सकती है। 'मनइच्छा अङ्गिरा' अङ्गिरा ऋषि कहते हैं दीक्षा के लिए तीव्र उत्कण्ठा, मन की तीव्रतर इच्छा ही प्रधान कारण है। अतः ऐसे में दीक्षा हेतु तिथि मुहूर्त व्रत, होम, स्नान, जप की विशेष आवश्यकता नहीं रहती।

गुरु पूजन कब-कब करना चाहिए

वैसे तो गुरु पूर्णिमा ही गुरुपूजन हेतु विशिष्ट पर्व है, परंतु **'श्रीविद्यार्णव तंत्र'** के अनुसार निम्न अवसर विशेष रूप से गुरु पूजन हेतु ग्राह्य हैं। इन अवसरों पर प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से शिष्य को गुरु पूजन करना ही चाहिए।

गुरोस्तु जन्मदिवसं, विद्याप्राप्तिदिनं तथा।
स्वजन्मदिवसं नाथव्याप्तिवासरमेव च॥ 1 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अक्षरत्रयसम्पातदिनं पूर्णादिनं तथा।
षट्षर्वाणि विशिष्टानि सदर्शं सप्तपर्वकम्।
मासतो वर्षतो वापि कुर्यादितेषु पूजनं ॥ 2 ॥

(1) गुरु देव के जन्म दिवस पर (2) विद्याप्राप्ति के अवसर पर (3) दीक्षा के अवसर पर (4) स्वयं के जन्म दिवस पर (5) कोई भी प्रकार की पूजा, धार्मिक अनुष्ठान प्रारंभ करने के पूर्व (6) प्रत्येक मास की पूर्णिमा पर (7) षट्पर्वों पर अतिविशिष्ट अवसरों पर सत्शिष्य को गुरुपूजन का स्मरण करना चाहिए, तभी उसमें आध्यात्मिक शक्ति बराबर जाग्रत रहती है।

गुरु पूजन के लिए आवश्यक सामग्री

दीक्षा ग्रहण करने के पूर्व गुरु का पूजन होता है। वैसे तो गुरु के प्रति शिष्य का पूर्ण समर्पण भाव ही प्रधान पूजन सामग्री है, परंतु जिस प्रकार से भगवान् की षोडशोपचार पूजा होती है, उसी प्रकार से गुरु का प्रत्यक्ष पूजन का शास्त्र में विधान दिया गया है। गुरु का राजोपचार पूजन एवं षोडशोपचार पूजन प्रत्येक के लिए संभव नहीं है, इसलिए पांच वस्तुएं अत्यधिक आवश्यक हैं जिसे पंचोपचार कहा गया है।

1. गंधाक्षत, पुष्प, पुष्पाहार, दीप,फल।
2. वस्त्र, धोती + चोला या गुरु के पहनने योग्य परिधान।
3. नैवेद्य (मिठाई) उपहार।
4. दक्षिणा (दीक्षा एवं योग्यतानुसार) एवं श्रीफल (नारियल)।
5. पूर्ण समर्पण की शुद्ध भावना से चरण-वंदना।

यदि शिष्य शुभ मुहूर्त में पूर्ण निष्ठा एवं भावना के साथ पूजन करता है तो शास्त्रकार कहते हैं कि उसे तत्काल दशगुणित लाभ मिल जाता है।

श्री गुरुं गुरुपत्नीं च पितराविति चिन्तयेत्।
गुरुभक्तया यथा देवि प्राप्यन्ते सर्वसिद्धम ॥

जिस प्रकार गुरु के प्रति भक्ति हो, उसी प्रकार गुरुपत्नी को माता के समान आदर देना चाहिए एवं गुरुपुत्र को स्वयं के सहोदर भाई के तुल्य आदर देना चाहिए। इस प्रकार की श्रद्धापूर्वक निष्ठा एवं भक्ति से भी गुरु का अप्रत्यक्ष रूप से पूजन होता है।

गुरु पूजन की संपूर्ण विधि

प्रात: काल ब्रह्ममुहूर्त में उठकर स्नान-संध्यादि से निवृत्त होकर (गणपति और इष्टदेव पूजन के पहले) सर्वप्रथम गुरु का ध्यान व स्मरण करें। यदि श्री गुरुदेव का चित्र हो तो सामने रखें, और चित्र न होने की स्थिति में नारियल को सामने रखकर, दीपक, अगरबत्ती

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जलाकर निम्न मंत्रों से गुरुदेव का ध्यान करें:

ध्यान एवं स्मरण

गुरुर्ब्रह्मा गुरु विष्णु: गुरुर्देवो महेश्वर: ।
गुरु: साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम: ॥1 ॥
ध्यानमूलं गुरो: मूर्ति: पूजामूलं गुरो: पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्य मोक्षमूलं गुरो कृपा ॥2 ॥
न गुरोरधिकं तत्वं न गुरोरधिकं तप: ।
गुरो: परतरंनास्ति तस्मात्सम्पूज्यते गुरु: ॥3 ॥
नमामि सद्गुरु शान्तं प्रत्यक्षं शिव रुपिणम् ।
गिरसायज्ञपीठस्थं तस्मै श्री गुरवे नम: ॥4 ॥
त्वंपिता, त्वं च मे माता, त्वं बन्धु त्वं च देवता ।
त्वं मोक्ष प्राप्ति हेतुश्च, तस्मै श्री गुरवे नम: ॥5 ॥

इन मंत्रों के साथ गुरु को प्रत्यक्ष पवित्र जल का छींटा सुगंधित पुष्प के माध्यम से दें । गुरु प्रत्यक्ष न हो तो उसके चित्र का पूजन करें । चित्र भी न हो तो आकाश में गुरु के नाम से कुंकुम का छींटा दें, अक्षत एवं पुष्प चढ़ावें तो यह पूजा अदृश्य रूप से गुरु के चरणों में पहुंच जाती है ।

आह्वान

दोनों हाथों की अंजलि बनाकर गुरु का आह्वान करें । गुरु यदि प्रत्यक्ष है तो गुरु में दिव्य शक्ति का आह्वान करें । यों तो गुरु साधारण व्यक्ति दिखलाई देता है पर जब गुरुदेव अपने आसन पर होते हैं और उसमें शक्ति का आह्वान होता है तब उस समय वे साधारण मानव नहीं होते, उनमें ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश से भी बढ़कर शक्ति आ जाती है । इसलिए आह्वान क्रिया जरूरी है ।

श्री गुरो: स्मरणे वापि कीर्तने दर्शनेऽपि वा ।
वंदने परिचर्यामाह्वाने प्रेषणे प्रिये ॥
ॐ ऐं परम ऐं परम गुरवे सशक्तिम् श्री (यहां गुरु के नाम का उच्चारण करें) गुरवै आवाहनं समर्पयामि ॥
ॐ स्वरूप निरूपण हेतवे (अमुकं) श्री गुरवे नम: ॥
ॐ स्वच्छ प्रकाश विमर्ष हेतवे (अमुकं) श्री परम गुरवे नम: ॥
ॐ स्वात्माराम पंजर क्लिीन तेजसे श्री परमेष्ठि (अमुकं) गुरवे नम: ॥
आवाहनं समर्पयामि पूजयानि ॥ (हाथ में गंगा जल, दूध, कुंकुम, अक्षत, पुष्प लेकर संकल्प करें)

संकल्प

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णु. . . अमुकं मासे, अमुक पक्षे, अमुक तिथौ, अमुकवासरे. . .

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

.अमुक गोत्रोत्पन्नोहं....अमुकशर्माऽहं... ममात्मनः श्रुतिस्मृति पुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थम् निरन्तर ऐश्वर्याभिवृद्धयर्थम् अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थम्, प्राप्तलक्ष्म्याच्चिरकाल संरक्षणार्थम्, सकलमन ईप्सितकालमना सिद्धयर्थम, लोकेसभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोलाभादि प्राप्त्यर्थम्, इहजन्मनि जन्मान्तरे वा सकल दुरितोंपशमनार्थम् मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिल कुटुम्बसहिस्य सपशोः समस्तभय व्याधि जरापीड़ा मृत्यु परिहार द्वारा आयुष्य आरोग्यै श्वर्याभिवृद्धमर्थम्. . . आधिदैविकाऽऽधिभौतिकाऽध्यात्मकत्रिविध तापदोषशमनार्थम् धर्मार्थकाममोक्षफलावाप्त्यर्थम् यथाज्ञानेय यथामिलितोपचार द्रव्यै श्रीसतगुरुदेव पूजनं, महं करिष्ये ॥

(इतना कहकर शुद्ध जल भूमि पर त्याग दें)

गंध—

श्री गुरुदेव के ललाट पर चंदन लगावें। कुंकुम से तिलक करें।

श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं गुरुश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्॥

"हे गुरुश्रेष्ठ! यह दिव्य श्रीखण्ड-चंदन, सुगंध से परिपूर्ण एवं मनोहर है। विलेपन-स्वरूप यह चंदन स्वीकार करें।"

ॐ त्वां गन्धर्वाऽअखनंस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः। त्वायोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत॥ (यजुर्वेद 12/38)

ॐ तंयज्ञम्बर्हि ॐ सर्वशक्तिसहिताय श्री गुरुवे नमः चन्दनं समर्पयामि॥

अक्षत—

अक्षताश्च गुरु श्रेष्ठ कंकुममाक्ता सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण गुरवेश्वर॥

"हे गुरु श्रेष्ठ! ये कुंकुम में रंगे हुए सुंदर अक्षत मैंने भक्तिभाव से इन्हें आपकी सेवा में अर्पित किया है। आप इन्हें ग्रहण करें।

ॐ सर्वशक्तिसहिताय श्री गुरुवे नमः अक्षतान् समर्पयामि।

इसके बाद श्री गुरुदेव को पुष्पाहार पहनावें एवं श्रीचरणों में छंटे पुष्प समर्पित करें।

पुष्पमाला—

माल्यादिनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयाहृतानि पुष्पाणि गृहाण गुरुवेश्वर॥

" हे श्री गुरुदेव! मालती इत्यादि सुगंधित मालाएं और विभिन्न प्रकार के सुगंधित पुष्प मेरे द्वारा लाए गये हैं, आप इन्हें स्वीकार करें।"

ॐ सर्वशक्तिसहिताय श्री गुरुवे नमः पुष्पमालां समर्पयामि।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दीप दर्शन— साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम्॥

"हे श्री गुरुदेव ! घी में डुबोई रूई की बत्ती को अग्नि से प्रज्जवलित करके यह दीप आपकी सेवा में अर्पित किया गया है। यह दीप त्रिभुवन के अंधकार को नष्ट करने में समर्थ है। आप भी हमारे हृदय के कलुष को नष्ट कर, इस दीप को स्वीकार करें।

1. दशांग धूप—

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्॥

"वनस्पति के रस से प्रकट, सुगंधित, उत्तम गन्धरूप और समस्त देवताओं के सूंघने योग्य यह धूप आपकी सेवा में अर्पित है। हे गुरुदेव ! आप इसे ग्रहण कर, हमारे जीवन को भी सुगंध युक्त करावें।"

इतना कहकर दीपक एवं धूप श्री गुरुदेव के सम्मुख अर्पित करें। तत्पश्चात् श्री गुरुदेव के पहनने योग्य पांचों पवित्र वस्त्रों को हाथ में लेकर निम्न मंत्र पढ़ें:

शीतवातोष्ण संत्राणं सजाया रक्षणं परम्।
देहांतकरणं वस्त्रयतः शान्ति प्रयच्छ मे॥

2. वस्त्र—

"हे प्रभो ! यह वस्त्र आपकी सेवा में समर्पित है। यह सर्दी, हवा और गर्मी से बचाने वाला, लज्जा का उत्तम रक्षक तथा शरीर का अलंकार रूप है। आप इसे स्वीकार कर हमारी लज्जा को बचावें, हमें शांति प्रदान करें।"

उपवस्त्र— उत्तरीयं यथा देव नानाचित्रितमुत्तमम्।
गृहाणेदं मया भक्त्या दत्तं तत् सफलीकुरु॥

"हे गुरुदेव ! नाना प्रकार के चित्रों (बेल-बूटों-अलंकरणों) से सुशोभित यह उत्तर उत्तरीय वस्त्र (अथवा अन्य कोई उत्तम उपहार) मैंने भक्तिपूर्वक आपको अर्पित किया है। आप इसे स्वीकार करें और हमारे समर्पण को सफल बनावें।"

ॐ तस्मात्यज्ञात्सर्व. (ऋग्वेद3/8/4) ॐ सर्वशक्ति सहिताय श्री गुरवे नमः वस्त्रं उपवस्त्रं यज्ञोपवीतं विविध अलंकरणं समर्पयामि। तत्पश्चात् हाथ में दूध की मिठाई एवं परिपक्व मीठे फल लेकर निम्न मंत्र पढ़ें।

3 नैवेद्य—

नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्रं च परां गतिम्।
शर्कराखण्ड खाद्यानि दधिक्षीर घृतानि च।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।

"हे गुरुदेव ! आप यह नैवेद्य स्वीकार करें और अपने प्रति मेरी भक्ति को अविचल कीजिए। हमें मनोवांछित वर दीजिए और परलोक में परमगति हेतु उपदेश दीजिए। दही-दूध घी, तथा शक्कर से निर्मित उत्तम भक्ष्यभोज्य यह नैवेद्य आपकी सेवा में प्रस्तुत है। इसे स्वीकार कर अनुगृहित कीजिए और हमारे जीवन को मिठास से पूर्ण कर दीजिए।" अब श्रीफल एवं दक्षिणा (दीक्षा क्रम व योग्यतानुसार) हाथ में लेकर निम्न मंत्र पढ़ें।

4. श्रीफल (नारिकेलफल) अर्पण—

इदं फलं मया देव स्थापितं पुरस्तव।
तेन में सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि।

"हे गुरुदेव ! यह नारियल का पूर्णफल मैंने आपके सामने रखा है इसके कारण मुझे मेरे कार्य में पूर्ण सफलता मिले एवं जन्मजन्मांतर यह सफलता मुझे मिलती रहे।"

दक्षिणा—

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेम बीजं विभवसोः।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्ति प्रयच्छ ये॥

"सुवर्ण हिरण्यगर्भ ब्रह्मा के गर्भ में स्थित अग्नि का बीज है। वह अनंत पुण्य-फल प्रदान करने वाला है। हे गुरुदेव ! यह सुवर्ण-रजत (प्रचलित-मुद्रा) आपकी सेवा में समर्पित है। इसे स्वीकार कर मुझे शांति प्रदान करावें।"

केवल सुवर्ण प्रदान करने वाले यजमान इस मंत्र को पढ़ें अन्य नहीं।

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्यजातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवी द्यामुतेमां कस्यै देवाय हविषा विधेम॥

ॐ सर्वशक्ति सहिताय श्री गुरुवेनमः साद्गुण्यार्थ द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि।

5. गुरु पादुका पूजनं (पूर्ण समर्पण) —

हाथ में पुष्प-चंदन -अक्षत इत्यादि लेकर निम्न मंत्रों से वंदना करें

कोटि-मन्त्रजपात् कोटि-पुण्यतीर्थावगाहनात्।
कोटि-देवार्चनाद्परा श्रीपादुका-स्मृतिः॥
महारोगे। महोत्पाते महादुखे महाभये।
महापदि महापापे स्मृता रक्षति पादुका॥
तेनाधीनं श्रुतं ज्ञानं. दत्तमिष्टं च पूजितम्।
जिह्वाग्रे वर्तते यस्य यदा श्रीपादुका प्रिये॥
न पादुकापरो मन्त्रो न देवः श्रीगुरोः परः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहि शाक्तात् परोमार्गो न पुण्यं गुरु पूजनात्॥
यथा ददाति सन्तुष्टः प्रसन्नो वरदो मनुम्।
तथा भक्त्या धनैः प्राणैर्गुरुं यत्नेन तोषयेत्॥

इसके साथ ही अंजलि में रखे हुये पुष्प-चंदन-अक्षत गुरु-पादुका पर चढ़ावें। पादुका के अभाव में गुरु-चरणों में चढ़ावें और साष्टांग प्रणाम करते हुए निम्न मंत्र पढ़ें:

गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्दैव गुरुर्गतिः।
शिवरुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन्॥
ब्रह्म-विष्णु-महेशान-देवता-मुनि-योगिनां।
कुर्वन्त्यनुग्रहंतुष्टा गुरौ तुष्टे न संशयः॥

इसके बाद—ॐ गुरुभ्यो नमः।
ॐ पर-गुरुभ्यो नमः॥
ॐ परापर गुरुभ्यो नमः।
ॐ सर्व गुरुभ्यो नमः॥

इन बीज मंत्रों का 18 बार उच्चारण कर पंक्तिबद्ध नमस्कार करें। श्रीमद् श्री शंकराचार्य निर्मित निम्न गुरु स्तोत्र का पाठ करें एवं भावगीत-भजन वगैरह गावें:

श्री गुरुस्तोत्रम

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्।
द्वन्द्वातीतं गगन सदृशं तत्वमस्यादि लक्ष्यम्।
एक नित्यं विमल मचलं सर्व क्षीः साक्षीभूतम्।
भावातीतं त्रिगुण रहितं सद्गुरुं तं नमामि॥ १॥
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥ २॥

श्री गुरु ब्रह्मानंद रूप होने से परमसुख को देते हैं तथा श्रीगुरु केवल ज्ञान की मूर्ति (स्वरूप) हैं। गुरु का स्वरूप द्वंद्वों से अतीत है तथा वह गगन (आकाश) के सदृश निर्लेप हैं। 'तत् त्वम् असि' इत्यादि महावाक्यों के लक्ष्य अर्थरूप हैं। गुरु का स्वरूप सब में एक रूप नित्य, विमल एवं अचल है अर्थात् एक समय में एक गुरु की पूजा करने पर समस्त गुरुओं की एक साथ पूजा हो जाती है। गुरु सब बुद्धियों का साक्षी है। चित्त् के भावों से अतीत (अर्थात् गुरु के मन के भावों को नहीं जाना जा सकता) अथवा वह सत्व, रज और तम इन तीनों गुणों से रहित है, ऐसे सद्गुरु को मैं नमस्कार करता हूं।

जो पद (परमात्मा) अखण्ड है और मण्डल (आनन्द धन)स्वरूप है, जिस का प्रभाव समस्त चराचर में व्याप्त है। ऐसे ब्रह्मपद को जिसने दर्शा दिया है। जिसने हमारे मन की प्रवृत्तियों को ईश्वर के प्रति, सद्गुणों के प्रति मोड़ दिया है, ऐसे उस श्री गुरु रूपी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परम तेज पुंज को नमस्कार है ।

श्री गर्गसंहिता में गुरु की महिमा

1. राजन् ! जिसने पूर्वजन्म में अक्षय तप किया है, इस लोक में उसी को गुरु के प्रति भक्ति होती है ।
2. जो समर्थ होकर भी गुरु की सेवा नहीं करता, अपने गुरु को नहीं मानता, वह सदा 'कुम्भीपाक' नरक में गिरता है ।
3. जो अपने गुरु के प्रति भक्ति न रखने वाले पर-पुरुष को अपने सामने आया हुआ देख लेता है, उसे आदर देता है, उसे गौहत्या का पाप लगता है । वह गंगा और यमुना में स्नान करके उस पाप से शुद्ध होता है ।
4. शिष्य को जहां-जहां जितना द्रव्य उपलब्ध होता है, उसका दशांश भाग गुरु का हिस्सा समझना चाहिए । हमारे घर के द्रव्य में भी इसी तरह दशांश भाग गुरु का है । जो शिष्य बलपूर्वक उसे भोगता है, गुरु को अलग से निकालकर नहीं देता है, वह 'महारौरव' नरक में जाता है और सब सुखों से वंचित हो जाता है ।

—श्रीगर्ग संहिता, अध्याय 62/पृष्ठ 546

गुरु से बढ़कर कोई नहीं

सर्वतीर्थाश्रमश्चैव, सर्वदेवाश्रयो गुरुः ।
सर्व वेदस्वरूपश्च, गुरुरूपी हरिः स्वयम् ॥
अभीष्टदेवे रुष्टे च, गुरु शक्तो हि रक्षितम् ।
गुरौ रुष्टेभीष्टदेवो, न हि शक्तश्च रक्षितुम् ॥

x x x

नास्ति वेदात् परं शास्त्रं, नहि कृष्णात् परः सुरः ।
नास्ति गङ्गासमं तीर्थं, न पुष्प तुलसी परम् ॥
नास्ति क्षमावती भूमे, पुत्रान्नास्ति परः प्रियम् ।
न देवातपराशक्तिः व्रतं नैकादशी विनाः ॥
शालिग्रामात्परो यन्त्रो, न क्षेत्रं भारतात् परम् ।
परं पुण्यस्थलानाश्च, पुण्यं वृन्दावनं यथा ॥
मोक्षदानां यथा काशी, वैष्णवानां यथा शिवः ।
न पार्वती परा साध्वी, न गणेशानु परो वशी ।
न विद्या समो बन्धुः नास्ति कश्चिदगुरोः परः ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुरु को भी परखें—

यदि गुरु को शिष्य की परीक्षा लेने का, उसको जांचने-परखने का अधिकार है, तो शिष्य को भी अधिकार है कि वह गुरु बनाने से पहले उस व्यक्ति को भली-प्रकार से जांच ले, यह अनुभव कर ले कि जिसको मैं गुरु बना रहा हूं वह योग्य है या नहीं ? गुरु बनने के लिए तेजस्विता, उच्चता, श्रेष्ठता होनी पहली अनिवार्य शर्त है । क्योंकि जो स्वयं प्रकाशित है, वही दूसरों को प्रकाश दे सकता है । आप भली भली-भांति परख लें, जिसे आप गुरु बना रहे हैं व उच्चकुल का है या नहीं ? उसके आचरण उच्च हैं या नहीं ? उसके व्यवहार में श्रेष्ठता है या नहीं ? उत्तमता है या नहीं ? वह व्यसनी तो नहीं है ? वह शूद्र तो नहीं ? पाखण्डी तो नहीं है ? हीनभावना से ग्रसित तो नहीं ? अपूज्य होकर पूजनीय बनने की चेष्टा तो नहीं कर रहा है ? शास्त्रकार कहते हैं—

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते, पूज्यन्ते च व्यतिक्रमात् ।
त्रिणि तत्र प्रर्वतन्ते, दुर्भिक्षं मरणं भयम् ।।

मुझे उससे ज्ञान प्राप्त हो सकेगा या नहीं ? जब आप उसे गुरु बना लें, उसी क्षण से आप अपनी बुद्धि को पीछे धकेल लें और शुद्ध श्रद्धा से धरातल पर गुरु और शिष्य के संबंध स्थापित करें, क्योंकि तभी दोनों एक दूसरे से जुड़ सकेंगे । आत्मीयता स्थापित कर सकेंगे, मधुरता आ सकेगी और पूर्णता प्राप्त हो सकेगी ।

गुरु कुम्हार शिष्य कुंभ है

कबीदास ने गुरु को कुम्हार की संज्ञा दी है, और शिष्य को कच्ची मिट्टी से निर्मित घड़ा बताया है । उनके अनुसार शिष्य कच्ची मिट्टी के समान होता है और गुरु रूपी कुम्हार उसे बराबर चोट करके, उसे तपाकर सुंदर पात्रता प्रदान करता है ।

यही घड़ा तीव्र आंच में तपकर लोगों की प्यास बुझाने के योग्य हो जाता है । शिष्य पूर्णघट तभी बन पाता है जब वह गुरु के ज्यादा नज़दीक होता है ।

स्त्री-पुरुष का भेद

यहां पर मैं एक और तथ्य स्पष्ट कर दूं कि शिष्य के रूप में पुरुष या स्त्री में तात्विक दृष्टि से कोई अंतर नहीं होता । समाज की दृष्टि से पुरुष और स्त्री में भेद होता है, कुछ-कुछ छुपाव होता है, कुछ पर्दा होता है, परंतु जहां साधना की भाव भूमि पर साधक खड़ा होता है, पुरुष और स्त्री का भेद मिट जाता है । गुरु के सामने इन दोनों में कोई अंतर नहीं रहता । जब तक नारी यदि वह साधिका है, और उसके मन में यह अहसास है कि वह नारी है तब तक वह साधिका हो ही नहीं सकती, क्योंकि पूर्णता के लिए, पूर्ण साधना के लिए इस अहं को मिटाना ही पड़ेगा, कि मैं पुरुष हूं या स्त्री हूं । गुरु के लिए दोनों समान

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं, गुरु की नजर में न तो किसी प्रकार का छल होता है, और न किसी प्रकार का व्यवधान, उसकी नज़र में दोनों समान होते हैं, और समान रूप से ही वह ज्ञान प्रदान करता है ।

हम कई बार देखते हैं कि कई वर्षों तक साधना करने के बाद भी सफलता नहीं मिल पाती, इसका मूल कारण वह अपने मन में छिपे स्त्री या पुरुष के भाव को मिटा पाने में सक्षम नहीं हो पाता, उसे यह एहसास होता है, कि मैं सुंदर हूं या मैं बलिष्ठ हूं, या मेरा शरीर कांतियुक्त है, या मैं बहुत अधिक बुद्धिमान हूं या मैं बहुत अच्छा जानकार हूं, और ये सभी भावनाएं पूर्णतः तथा गुरु-शिष्य के एकाकार होने में पूर्ण रूप से बाधक रहती हैं ।

मैत्रेयी ने अपने पति याज्ञवल्क्य से ब्रह्मत्व प्राप्ति के लिए दीक्षा लेने के बाद पूछा कि शिष्य की पहचान क्या है, तो याज्ञवल्क्य ने जवाब दिया कि शिष्य तो नदी की तरह होता है, जो उछलती है, उफनती है, तोड़-फोड़ करती है, मार्ग के पेड़-पौधों को ध्वंस करती है, गांवों को उजाड़ देती है, और प्रचण्ड दुर्घर्ष वेग के साथ समुद्र से मिलने के लिए आतुर व्याकुल भागती है, और जब वह अपने गुरु से मिलती है, तो वह उसमें विलीन हो जाती है, एकाकार हो जाती है, उसका अपना स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं रह पाता, वह समुद्र के साथ मिलकर एकाकार हो जाती है, और यही उसकी पूर्णता है, क्योंकि जो बिंदु नदी का बिंदु कहलाता था, वही बिंदु एकाकार होने पर समुद्र बन जाता है । ठीक इसी प्रकार शिष्य को गुरु से मिलने के लिए आतुर, आकुल, रहकर उसमें लीन हो जाना चाहिए, स्वयं का कोई अस्तित्व नहीं होना चाहिए । इस बात का अहसास ही नहीं होना चाहिए कि मैं पुरुष हूं या स्त्री हूं, समाज क्या कहेगा ? अथवा लोग क्या विचार करेंगे ? यह तर्क ही पूर्णता के रास्ते में बाधक है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महाशक्ति गायत्री और उसकी साधना

गायत्री महाशक्ति है। हमारे पूर्वज पूज्य गौतम, वशिष्ठ, कणाद, अङ्गिरा आदि ऋषि-महर्षियों ने गायत्री मंत्र की उपासना द्वारा ही अपने में अद्‌भुत और अलौकिक शक्ति प्राप्त की थी। गायत्री मंत्र के प्रभाव से महर्षि वशिष्ठ ने विश्वामित्र के समस्त शास्त्रास्त्रों को नष्ट कर विजय प्राप्त की थी। गायत्री के प्रभाव से ही दुर्वासा आदि ऋषियों ने अद्‌भुत पराक्रम प्राप्त किया था। गायत्री की उपासना से मनुष्य में सद्‌बुद्धि, सद्‌विचार और सद्‌धर्म का उदय होता है।

गायत्री की उपासना से मनुष्य की ज्ञान शक्ति और जीवन शक्ति बढ़ती है तथा उसके समस्त पापों का उच्छेद हो जाता है। गायत्री का उपासक स्वतः ही रोग,शोक, चिंता, अधिव्याधि और दीनता से मुक्त हो जाता है। गायत्री के उपासक पर दैत्य, दानव, भूत, प्रेत, पिशाच, यक्ष और राक्षसों का ज़ोर(वश) नहीं चलता। गायत्री की उपासना क्रूर ग्रहों की बाधा भी दूर करती है। गायत्री का उपासक दीर्घायु, विपुल लक्ष्मी, सत्पुत्र, सत्कीर्ति, ऐश्वर्य एवं सत्प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष — इन पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि इसके उपासक को स्वतः ही मिल जाती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नित्य, नैमित्तिक और काम्य-कर्म की सिद्धि के लिए गायत्री मंत्र से बढ़कर कोई मंत्र नहीं है। वैदिक मंत्रों में गायत्री मंत्र की सबसे अधिक महिमा और प्रतिष्ठा है। गायत्री मंत्र को 'महामंत्र' कहा गया है। यह महामंत्र सर्वसिद्धिप्रद है। इस महामंत्र के प्रभाव से मनुष्य जो चाहे वह वस्तु प्राप्त कर सकता है। गायत्री मंत्र के निरंतर जप से व्यक्ति को वरदान, आशीर्वाद व श्राप देने की शक्ति स्वतः ही प्राप्त हो जाती है।

गायत्री मंत्र के जप में उस भगवत्ता को प्रकट करने की रहस्यमयी क्षमता है, जिससे हृदय की सभी ग्रंथियों का भेदन हो जाता है। सम्पूर्ण संदेह-भ्रम छिन्न-भिन्न हो जाते हैं और अवशिष्ट कर्म बंधन भी विनष्ट हो जाते हैं। उपनिषद् कहता है—

भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यंते सर्वसंशयाः।

इस स्थिति में पहुंचते ही अनिर्वचनीय आध्यात्मिक प्रकाश की प्राप्ति होती है। वह आनंदानुभूति ऐसी गहन होती है कि उसके चिंतन से अत्यधिक उल्लास की प्राप्ति होती है। उसकी स्मृति मात्र से रोम-रोम सिहर उठता है तथा उसकी पुनः पुनः अनुभूति होने से हृदय आनंद-विह्वल हो जाता है।

गायत्री-छंद

छंदों में सबसे उत्तम है गायत्री छंद,
वह गात्र की रक्षा तो करती ही है,
तेज कर देता है मनुष्य की बुद्धि, वह हो कैसी भी मंद।
यह गायत्री क्या है? यह तो साक्षात सत्-धर्म है,
जीवन को सुधारने वाला, इसका यह मर्म है—

हे ज्योति-स्वरूप परमात्मा।
सूरज जैसे अत्यंत प्रकाशमान हे परम देव।
मै आपका ध्यान करता हूं,
आपका स्मरण करता हूं,
आप मेरी बुद्धि को प्रकाशित कर दें,
आप मुझे सुबुद्धि प्रदान करें॥

मंत्र शास्त्र में एवं सम्पूर्ण संसार में गायत्री से श्रेष्ठतर **'गायत्र्या नापरो मंत्रः'** कोई मंत्र नहीं है। इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि गायत्री का अर्थ, उसके महत्व, आवश्यकता, महिमा एवं साधना से पाठकों को सही ढंग से शास्त्रीय परिचय कराया

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाए ।

गायत्री का अर्थ एवं महत्त्व— 'गै शब्दे' इस धातु में 'शतृ ' प्रत्यय लगने पर 'गायत्' शब्द बनता है । पश्चात् **'त्रैङ पालने'** धातु से सम्बद्ध होने पर स्त्री-प्रत्ययांत 'गायत्री' शब्द निष्पन्न होता है । वेदों में इसका अर्थ इस प्रकार किया है—

'गयांस्तत्रे तस्माद् गायत्री नाम ।'

—शतपथ ब्राह्मण 14/8/15/7

अर्थात् गायत्री ने प्राणों की रक्षा की थी । प्राण 'गय' कहे गये हैं । गायत्री ने उन प्राणों (गयों) की रक्षा की इसलिए इसका नाम गायत्री पड़ा ।

नित्य प्राणायाम के माध्यम से गायत्री मंत्र मनुष्य को कम से कम स्वस्थ सौ वर्ष की आयु तो देता ही है । प्राचीन भारत में ऐसे अनेक दृष्टांत मिलते हैं जिसमें ऋषियों ने हज़ारों-हज़ारों वर्ष की स्वस्थ आयु को भोगा है ।

गायन्त त्रायते यस्माद गायत्रीति स्मृता बुधैः ।

—भारद्वाज स्मृति 6/146

व्युत्पत्ति-शास्त्र की दृष्टि से यह गायन (जप) करने वाले का त्राण (रक्षण) करती है, अतः विद्वान मनीषियों ने इसे गायत्री कहा है ।

गायत्री, सावित्री, ब्रह्म गायत्री, गुरुमंत्र, वेदमाता इत्यादि गायत्री के ही पर्यायवाची नाम हैं । यह परमपवित्र मंत्र सर्वोच्च दैवीशक्ति का सजीव प्रतीक है जिसे औपनिषदिक युग के आत्मज्ञानी ऋषियों ने अंतःकरण में गहन समाधि की स्थिति में प्राप्त किया था । ब्रह्मर्षि विश्वामित्र गायत्री के मंत्रदृष्टा ऋषि हैं ।

गायत्री-मंत्र का 'गायत्री छंद' है, इसलिए इसको गायत्री मंत्र कहते हैं । सविता (सूर्य) से सम्बंध होने के कारण इसको सावित्री कहते हैं । ब्रह्म (वेद) से सम्बंध रखने तथा ब्राह्मणों की उपास्या होने के कारण इसको ब्रह्मगायत्री कहते हैं । उपनयन के समय द्विज बालक को गुरु के द्वारा गायत्री मंत्र का उपदेश होने के कारण इसको 'वेदमाता' भी कहते हैं ।

शास्त्रोक्त सभी उपासनाओं में संध्योपासन मानवकृत पापों का परिमार्जन तथा आध्यात्मिक आनंद का विधान करने वाला श्रेष्ठ प्रभावशाली साधन है । इस उपासना की अधिष्ठात्री देवी गायत्री है ।

गायत्री 'वैदिक मंत्र' है जिसके तीन पाद हैं, प्रत्येक पाद में आठ अक्षर हैं । इस प्रकार इसमें कुल चौबीस अक्षर होते हैं । उपनयन संस्कार के पश्चात् ही किसी को गायत्री मंत्र करना चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'उपनयन' का अर्थ है गुरु के पास जाना— चूंकि यह दिव्य मंत्र जिस बालक (व्यक्ति) को दिया जाता है, उसे एक नवीन दृष्टि-नयन की प्राप्ति होती है, उसे बौद्धिक प्रकाश मिलता है। इसलिए इसे उपनयन कहते हैं। हिंदू सनातन धर्म में उपनयन संस्कार-यज्ञोपवीत का बड़ा भारी महत्त्व है। क्योंकि इस संस्कार से मनुष्य को द्विजत्व की प्राप्ति होती है और इस संस्कार के बाद गायत्री उस व्यक्ति की दूसरी माता होती है।

'गायत्री मंत्र' की दीक्षा प्राप्त कर व्यक्ति 'द्विज' कहलाने का अधिकारी हो जाता है। गायत्री की उपासना द्विज मात्र के लिए आवश्यक है। कहा गया है—

गायत्री रहितो विप्रः शूद्रादप्यशुचिर्भवेत्।

—पाराशर स्मृति 8/32

जो विप्र नित्य गायत्री की उपासना नहीं करता, वह ब्राह्मणत्व से च्युत हो जाता है। गायत्री के बिना अन्य सभी देवताओं की उपासना निष्फल है। इसलिए द्विजमात्र को प्रतिदिन गायत्री की उपासना करनी चाहिए। गायत्री-संध्या द्विज मात्र हेतु नित्यकर्म है।

शास्त्रों में स्पष्ट कहा है— द्विजमात्र केवल गायत्री की उपासना से ही मोक्ष प्राप्त कर सकता है, उसे अन्य कोई उपासना करने की आवश्यकता ही नहीं है।

गायत्री मंत्र, शूद्र और स्त्री—

वैदिक वाङ्मय के अनुसार केवल यज्ञोपवीत-संस्कार वाला व्यक्ति ही गायत्री की उपासना व जाप कर सकता है। प्राचीन शास्त्रों स्मृतियों, व पुराणों में शूद्र व स्त्रियों को यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार नहीं दिया गया है। इस विषय में बहुत शास्त्रार्थ एवं विवाद हुए। उपनयन संस्कारविहीन मनुष्यों को कतिपय संत, महात्मा,विद्वान,उपदेशक और कथावाचक लोभवश गायत्री-जप करने का उपदेश करते हैं।

इस धार्मिक कट्टरता के कारण हिंदू-धर्म विखण्डित होने लगा। भेद-भाव की इस कट्टरता से कई हिंदू बौद्ध, जैन एवं ईसाई बन गये। फलतः स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं उनके द्वारा संस्थापित आर्यसमाज ने एक आंदोलन जैसा चलाकर शूद्र व स्त्रियों को शुद्धिकरण संस्कार के तहत यज्ञोपवीत देना प्रारम्भ किया। श्रीराम शर्मा ने 'युगनिर्माण योजना' के माध्यम से अधिकाधिक संख्या में स्त्रियों व शूद्रों को यज्ञोपवीत पहनने, गायत्री जप करने एवं हवन करने के लिए आकर्षित किया। आज लाखों की संख्या में स्त्री-पुरुष स्वांग रचकर हवन कर रहे हैं तथा अपने आपको सबसे श्रेष्ठ मान रहे हैं।

मेरे निजी जीवन में भी ऐसी एक घटना घटी। हम लोग नौ पीढ़ियों से कर्मकाण्डी श्रीमाली ब्राह्मणों के कुलगुरु के रूप में प्रतिष्ठित 'वेदिया परिवार' से हैं एवं कट्टर सनातन धर्मी ब्राह्मणों में सर्वश्रेष्ठ संस्कारी ब्राह्मण कहलाते हैं। श्रीमाली ब्राह्मणों को ज्योतिष सिखाना, वेद पढ़ाना एवं उन्हें षोडश-संस्कारों के द्वारा संस्कारित करना हमारी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आजीविका का मुख्य स्रोत रहा है। एक सभ्य व शिष्ट शूद्र ने ज्योतिष विद्या में प्रवीणता प्राप्त की। उससे धीरे-धीरे घनिष्ठता बढ़ती गई। एक दिन वह चरणों में अवनत होकर पूरी श्रद्धा के साथ बोला—'मुझे आपके द्वारा यज्ञोपवीत- संस्कार एवं गायत्री मंत्र की दीक्षा चाहिए।' मैंने उसको शास्त्रों का उद्धरण देते हुये समझाया कि यह शूद्रोचित कर्म नहीं है और तुमको यज्ञोपवीत देना मेरे लिए भी ब्राह्मणोचित धर्म नहीं है। शास्त्रीय तर्क के आगे निरुत्तर होकर वह आंखों में अश्रुधारा बहाते हुए चला गया। पर उसने पीछा नहीं छोड़ा। बार-बार मुलाकात करना, भेंट लाना, अश्रुपूरित आंखों से बस एक ही निवेदन कि 'गुरुजी, आप मुझे एक बार गायत्री मंत्र दे दीजिए।'

उसकी हठधर्मिता एवं निरंतर दुराग्रह से मैं तंग हो गया। मैं उस पर बहुत क्रोधित हुआ, कई बार घर से बाहर भी निकाला और झल्लाकर कहा— 'आखिर तुम मेरे पीछे क्यों पड़े हो ? संसार में और भी बहुत से ब्राह्मण हैं, जो तुमसे मोटी दक्षिणा लेकर तुम्हें 'द्विज' बना देंगे। ऐसी बहुत सी संस्थाएं एवं दुकानें खुली हैं।' मैंने उसे दो-चार लोगों के पते भी दिये। पर जितना मैं उसे दुत्कारता,फटकारता, उतना ही वह आकुल-व्याकुल होकर मुझ से निकटता पाने की चेष्टा करता गया।

आखिरकार उसने कहा कि मैं तो एकलव्य की तरह सूर्य को साक्षी मानकर मन ही मन आपका स्मरण करके यज्ञोपवीत ले लूंगा। मैंने पूछा—'तुम आखिर चाहते क्या हो ?'

—'चौबीस हजार गायत्री मंत्रों का जाप करना चाहता हूं।'

—'वैसे ही कर लो, गुरु की क्या ज़रूरत है ?'

'मैं शास्त्र नियमों से आबद्ध होकर, आपकी शक्ति से प्रेरित होकर पुरश्चरण करना चाहता हूं। जैसे सूर्य- चंद्र का प्रकाश बिना भेदभाव के पृथ्वी के सभी चराचर जीवों को ऊष्मा व शीतलता देता है। ठीक उसी प्रकार से आपके ब्रह्म तेज को भी निर्बाध गति से सभी वर्णों की ओर बह जाने दीजिये। पृथ्वी, आकाश,वायु और जल बिना भेद-भाव के प्राणी -मात्र को तृप्त करते हैं। मैं आपके आचरण और व्यवहार में भेदरहित अविनाशी ईश्वर के अंश को देख रहा हूं। आपकी ज्ञान व सेवाएं मानव मात्र के लिए समर्पित हैं, फिर मैं इससे वंचित क्यों रहूं ?'

उसके तर्क ने मुझे प्रभावित किया। मैंने उसे समझाया कि यज्ञोपवीत लेने से तुम्हें कई प्रकार के नियम-उपनियम पालने पड़ेंगे। त्रिकाल संध्या करनी पड़ेगी, वगैरह-वगैरह।

उसने भीषण प्रतिज्ञा की कि आपका यह शिष्य हर कसौटी पर खरा उतरेगा। एकलव्य ने तो केवल द्रोणाचार्य की मूर्ति से प्रेरणा लेकर धनुर्विद्या सीखी और गुरुदक्षिणा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में अगूंठा काट कर दे दिया । आप प्रत्यक्ष गुरु हैं, अपना मस्तक भी काटकर आपके चरणों में चढ़ा सकता हूं ।

आपने सैकड़ों ब्राह्मणों को यज्ञोपवीत दिया है । यहां ब्रह्मपुरी में हज़ारों यज्ञोपवीत वाले ब्राह्मण रहते हैं । मैं निन्दा तो नहीं करता परन्तु अनेक ऐसे ब्राह्मणों व द्विजों को भली-भांति जानता, पहचानता हूं जो मद्य-मांस का सेवन खुले आम करते हैं । यद्यपि यज्ञोपवीत सदाचार का प्रतीक है तथापि इसको धारण करने के पश्चात जो सदाचार, सदव्यवहार व स्वधर्म का पालन नहीं करता, उसका आप क्या कर लेते हैं ? यज्ञोपवीत धारण करने पर भी जो गायत्री नहीं जपते, संध्या-वंदन नहीं करते, क्या वे वास्तव में शूद्र नहीं ?

मैं तो जीवन भर गायत्री जप, संध्या-वंदन एवं गुरु सेवा करने की प्रतिज्ञा लेता हूं ।

उस बालक की एकनिष्ठ भक्ति, दृढ़ता एवं अकाट्य तर्क के आगे मैं निरुत्तरित हो गया । मैंने उसे गायत्री-दीक्षा का वचन दिया । मुहूर्त निकाला । बड़े धूमधाम से इक्कीस वेदपाठी ब्राह्मणों के सान्निध्य में उसका उपनयन-संस्कार उसके गांव में किया ।

उस बालक का अणु-परमाणु बदल गया । गांव की गंदी खान के भीतर पड़ा कोयला, गुरु का सान्निध्य व संस्कार मिलने पर हीरा बनकर दमक उठा । आज बालक अपने गांव व कुल का विख्यात पंडित बना हुआ है तथा दूर-दूर तक उसकी विद्वत्ता की धाक है । उसके बाद 5 नवम्बर 1995 कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा का वह दिन भी याद है जब 108 कुण्डीय विष्णु महायज्ञ की पूर्णाहुति की पूर्व संध्या को 108 मुमुक्षु शूद्रों का सामूहिक शुद्धिकरण कर उन्हें गायत्री-दीक्षापूर्वक यज्ञोपवीत संस्कार दिया गया ।

मेरी निजी मान्यता यह है कि यदि कोई निष्ठापूर्वक पूर्ण श्रद्धा के साथ देवपूजन करना चाहता है तो उसे मार्गदर्शन देने में कोई बुराई नहीं है । क्या पता इनमें से कोई बाल्मीकि या ज्ञानदेव बनकर खिल उठे ।

गायत्री की महिमा—

गायत्री चैव वेदांश्च तुलया समतोलयत् ।
वेदा एकत्र साङ्गास्तु गायत्री चैकतः स्मृता ॥

—बृहद् योगी याज्ञवल्क्य संहिता 4/80

यही बात स्कंध पुराण के काशीखण्ड में भी कही गई है—

समस्त मंत्रों में प्रणव (ॐ) से युक्त गायत्री दुर्लभ है । तीनों वेदों में गायत्री से बढ़कर और कोई मंत्र नहीं है । एक बार ब्रह्माजी ने षडङ्गादिसहित चारों वेदों को एक ओर रखकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तराजू में तोला तो दोनों को तोलने में गायत्री का ही पलड़ा भारी हुआ। अग्निपुराण में कहा गया है—

'गायत्रास्तु परं नास्ति दिवि चेह च पावनम्।'

गायत्री से बढ़कर पवित्र करने वाला दूसरा कोई मंत्र न तो इस मृत्युलोक में है और न स्वर्ग लोक में है। पापकर्मों का नाश करने वाला गायत्री से बढ़कर कोई अन्य मंत्र नहीं है।

ज्योतिष की निंदा करने वाला गायत्री का उपासक नहीं हो सकता

15 अगस्त 95 की बात है, अहमदाबाद में अखिल भारतीय ज्योतिष सम्मेलन में मेरी अध्यक्षता थी। एक सज्जन को मंगलाचरण हेतु आमन्त्रित किया गया। उन्होंने अपने आपको बहुत बड़ा गायत्री प्रचारक बताया एवं मंगलाचरण के बहाने लेक्चर देने लग गए, गायत्री की प्रशंसा करने लगे एवं कुछ अनर्गल उदाहरण देकर ज्योतिष की निंदा करने लगे। लोगों में आक्रोश फैल गया। श्रोता लोग उस सज्जन को मारने के लिए उद्यत हो गए। मैंने बड़ी मुश्किल से उन्हें बचाया। वस्तुत: इस सज्जन में और उस मूर्ख कालीदास में कोई अन्तर नहीं था। वह उसी डाल को काट रहा था, जिस पर वह बैठा था। फलत: गिरना और चोट लगना एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी। जिसे उसी को भोगना था जो उस पर बैठा था।

भारतीय संस्कृति वेदों पर अवलंबित है। वेद को अपौरुषेय आदि-अंत से रहित परमपिता परमात्मा का ही स्वरूप माना गया है। गायत्री भी हमें इसीलिए प्रिय है क्योंकि वह वेदमाता है। वेद के छ: अङ्ग हैं। उसमें ज्योतिष को वेदभगवान का नेत्र कहा गया है। ज्योतिष को इन छ: अंगों में से सर्वोपरि स्थान पर प्रतिष्ठित किया गया है। जो ज्योतिष की निंदा करता है, वह वस्तुत: वेद की ही निंदा करता है। वह व्यक्ति परोक्ष रूप से वेदमाता गायत्री की ही आलोचना करता है। अपने चर्मचक्षुओं को फोड़कर अपने अंत:स्थल के दीप को बुझाकर कोई दिव्य ज्योति के दर्शन करना चाहेगा,तो यह कैसे संभव है। वस्तुत: ज्योतिष शास्त्र की निंदा करने वाले लोग या तो सत्य के प्रति आंखें मूंद कर बैठे हैं, या फिर वे मानसिक रूप से विकृत हैं। ज्योतिष शास्त्र की निंदा करने वाला कभी भी गायत्री का सच्चा उपासक एवं वेदनिष्ठ हो ही नहीं सकता।

गायत्री की साधना

गायत्री की साधना में सबसे पहली अनिवार्य शर्त है— जितने दिन साधना की जाए उतने दिनों तक ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। भूमि शयन, सात्विक भोजन (एक समय) मनसा, वाचा, कर्मणा,अहिंसा व्रत का पालन करना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिस स्थान व आसन पर बैठे, उसे बदलना नहीं चाहिए । साधना अनुष्ठान के वस्त्र भी एक ही होने चाहिएं, जो साधना के समय पहनकर बाद में धोकर रख देने चाहिएं और फिर साधना के समय धारण करने चाहिएं ।

ब्रह्ममुहूर्त में पूर्वाभिमुख होकर पवित्र आसन पर बैठकर आसन शुद्धि करें । आसन शुद्धि का मंत्र इस प्रकार है—

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ।।

इस प्रकार कहकर कुशा से जल-प्रोक्षण करें । पहले आचमन करें और मंत्रपूर्वक शिखा को ग्रंथी लगावें । रुद्राक्ष या तुलसी की माला धारण करें । शरीर के सभी अंगों पर तिलक लगावें । अङ्ग न्यास करें । तत्पश्चात् बाह्य शुद्धि के लिए निम्न मंत्र से शरीर एवं पूजन-सामग्री का मार्जन करें ।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपिवा ।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स ब्राह्याभ्यंतरः शुचिः ।।

आन्तरिक शुद्धि के लिए तीन बार अत्वमन करें—ॐ केशवाय नमः, ॐ नारायणाय नमः, ॐ माधवाय नमः ।

इसके बाद आचमनी में जल लेकर संध्या का संकल्प करके जल तिरबाणी में गिरावें ।

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्य....उपात्त दुरित क्षयपूर्वक श्रीपरमेश्वर प्रीत्यर्थं संध्योपासनं करिष्ये ।

इसके पश्चात आचमनी में जल लेकर प्राणायाम हेतु विनियोग करें ।

ॐ तत्सक्तिुरिति विश्वामित्र ऋषिः गायत्री छन्दः सविता देवता प्राणायामे विनियोगः । (जल छोड़ दें)

फिर आंखें बंद करके नीचे लिखे मंत्रों का प्रत्येक प्राणयाम में तीन-तीन बार पाठ करें ।

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात् ।

ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् ।

प्राणायाम की विधि—प्राणायाम के तीन भेद होते हैं— 1. पूरक, 2. कुंभक और 3. रेचक ।

1– अंगूठे से नाक के दाहिने छिद्र को दबाकर बाएं छिद्र से श्वास को धीरे-धीरे खींचने को 'पूरक प्राणायाम' कहते हैं । पूरक प्राणायाम करते समय उपर्युक्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

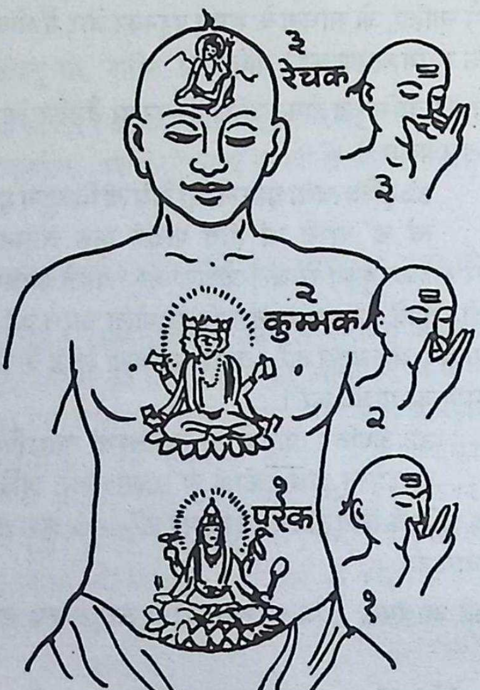

मंत्रों का मन से उच्चारण करते हुए नाभिदेश में नीलकमल के दल के समान नील वर्ण चतुर्भुज भगवान् विष्णु का ध्यान करें।

2– जब सांस खींचना रुक जाए, तब अनामिका और कनिष्ठिका अंगुली से नाक के बायें छिद्र को भी दबा दें। मंत्र जपता रहे। यह 'कुंभक प्राणायाम' हुआ। इस अवसर पर हृदय में कमल पर विराजमान लाल वर्ण वाले चतुर्मुख ब्रह्मा का ध्यान करें।

3– अंगूठे को हटाकर दाहिने छिद्र से श्वास को धीरे-धीरे छोड़ने को रेचक प्राणायाम कहते हैं। इस समय ललाट में श्वेत वर्ण शंकर का ध्यान करना चाहिए और साधक मन में जाप करता रहे।

इसके बाद मार्जन एवं अघमर्षण करें। अघमर्षण के बाद सूर्य भगवान को अर्घ्य दें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूर्यार्घ्य-विधि—

इसके बाद निम्नलिखित विनियोग को पढ़कर अञ्जलि से अंगूठे को अलग हटाकर गायत्री मंत्र से सूर्य भगवान को जल से अर्घ्य दें। अर्घ्य में चंदन और फूल मिला लें। सवेरे और दोपहर को एक एड़ी उठाए हुए खड़े होकर अर्घ्य देना चाहिए। सवेरे कुछ झुककर खड़ा होवें और दोपहर को सीधे खड़ा होकर और शाम को बैठकर। सवेरे और शाम को तीन-तीन अञ्जलि दें और दोपहर को एक अञ्जलि। सुबह और दोपहर को जल में अञ्जलि उछालें और शाम को धोकर स्वच्छ किए स्थल पर धीरे से अञ्जलि दें। ऐसा नदीतट पर करें। अन्य जगहों में पवित्र स्थल पर अर्घ्य दें, जहां पैर न लगें। अच्छा है कि बर्तन में अर्घ्य देकर उसे वृक्ष के मूल में डाल दिया जाए।

सूर्यार्घ्य का विनियोग—

सूर्य को अर्घ्य देने के पूर्व निम्नलिखित विनियोग पढ़ें—

(क) 'ॐकारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छंदः परमात्मा देवता अर्घ्यदाने विनियोगः।'

(ख) ॐ भूर्भुवः स्वरिति महाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्यादेवताः अर्घ्य दाने विनियोगः।

(ग) ॐ तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छंदः सविता देवता सूर्यार्घ्यदाने विनियोगः।

इस प्रकार विनियोग कर नीचे लिखा मंत्र पढ़कर अर्घ्य दें —

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात्। ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय नमः॥

यह मंत्र पढ़कर अर्घ्य दें। यदि प्रातः सूर्योदय से तीन घड़ी व्यतीत होने के बाद अर्घ्य देना पड़े तो प्रायश्चित स्वरूप चौथा अर्घ्य और दें। अर्घ्य के पश्चात् दोनों हाथ ऊपर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रातःकाल—हंस समारुढ़ा कुमारी ब्रह्माणी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उठाकर सूर्योपस्थान करें । इससे साधक को सौ वर्ष की स्वस्थ आयु का आशीर्वाद प्राप्त होता है । सूर्योपस्थान हेतु निम्न मंत्रों को पढ़ें ।

ॐ उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यंत उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥
ॐ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः ।
दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥2 ॥
ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आप्रा द्यावा पृथिवी अंतरिक्षँ सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥3 ॥
ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ श्रृणुयाम शरदः
शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं
भूयश्च शरदः शतात् ॥4 ॥

इसके बाद गायत्री माता का ध्यान करते हुए उनका आह्वान करें ।

प्रातःकालीन गायत्री का ध्यान—

त्रिकालं संध्या के अनुसार तीनों अवस्था में गायत्री के ध्यान अलग-अलग हैं क्योंकि गायत्री त्रिगुणात्मक शक्ति से परिपूरित है । प्रातःकाल ब्रह्मरूपा गायत्री माता का ध्यान निम्न मंत्र से होगा ।

ॐ बालां विद्यां तु गायत्री लोहितां चतुराननाम् ।
रक्ताम्बरद्वयोपेतां अक्षसूत्रकरां तथा ॥
कमण्डलुधरां देवीं हंसवाहन संस्थिताम् ।
ब्रह्माणी ब्रह्मदैवत्यां ब्रह्मलोकनिवासिनीम् ॥
मंत्रेणा वाहयेद्देवीमायान्ती सूर्यमण्डलात् ।

मैं उस परमशक्ति गायत्री का मंत्रों द्वारा सूर्यमण्डल से आह्वान करता हूं । वे बालावस्था में हैं और ज्ञान स्वरूपिणी हैं । वे रक्तवर्णा एवं चतुर्मुखी हैं । उनके उत्तरीय तथा मुख्य परिधान दोनों ही रक्तवर्ण के हैं । उनके एक हाथ में रुद्राक्ष की माला है, दूसरे हाथ में कमण्डलु धारण किए वे हंस पर विराजमान हैं । वे सरस्वती-स्वरूपा हैं, ब्रह्मलोक में निवास करती हैं और ब्रह्माजी उनके पतिदेवता हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मध्याह्न —गरुड़ा रूढ़ा युवती वैष्णवी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विष्णुरूपा गायत्री का ध्यान—

ॐ मध्याह्ने विष्णुरूपां च तार्क्ष्यस्थां पीतवाससाम्।
युवतीं च यजुर्वेदां सूर्यमण्डल संस्थिताम्॥

सूर्यमण्डल में स्थित युवावस्था वाली, पीतवस्त्र धारण की हुई, शंख, चक्र, गदा तथा पद्म धारण किये गरुड़ पर बैठी हुई, विष्णुरूप यजुर्वेद स्वरूपा गायत्री का ध्यान करता हूं।

शिव स्वरूपा गायत्री का ध्यान—

ॐ सायाह्ने शिवरूपां च वृद्धां वृषभवाहिनीम्।
सूर्यमण्डलमयध्यस्थां सामवेदसमायुताम्॥

सूर्यमण्डल में स्थित वृद्धरूपा त्रिशूल, डमरू, पाशा तथा पात्र (खप्पर) लिए हुए, वृषभ पर बैठी शिवरूप, सामवेद स्वरूपा गायत्री का ध्यान करता हूं।

गायत्री का आवाह्न—

इसके बाद गायत्री माता के आवाह्न के लिए निम्नलिखित विनियोग करें—

तेजोऽसीति धामनामासीत्यस्य च परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषि :
यजुस्त्रिष्टुबुष्णि हो छन्दसी आज्यं देवता गायत्र्यावाहने विनियोगः।
(जल दें एवं आवाह्न मुद्रा करके निम्न मंत्र पढ़ें।)

ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि। धामनामासि
प्रियं देवानामना धृष्टं देवयजनमसि॥

गायत्री देवी साधक के आवाह्न करने पर आ गई है, ऐसा मानकर निम्नलिखित विनियोग पढ़कर आगे के मंत्र से उन्हें प्रणाम करें —

गायत्र्यसीति विवस्वान् ऋषिः स्वराणमहापंडिक्तश्छंदः परमात्मा देवता गायत्र्युपस्थाने विनियोगः।

ॐ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपदसि।
न हि पद्य से नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसेऽसावदो मा
प्रापत्।

इसके पश्चात् गायत्री को ब्रह्म शपिविमोचन, वशिष्ठ-शापविमोचन, विश्वामित्र-शापविमोचन,शुक्र-शापविमोचन इत्यादि करने की परम्परा भी है। शापविमोचन के बाद चौबीस प्रकार की मुद्राओं का प्रदर्शन किया जाता है। इसके पश्चात् गायत्री-मंत्र जपने हेतु निम्न मंत्र से विनियोग करें। एक पुरश्चरण की साधना हेतु चौबीस लक्ष गायत्री मंत्र का जाप किया जाता है। चौबीस हज़ार भी करते हैं। नित्य नैमित्तिक कर्म में गायत्री मंत्र का 108 बार जाप किया जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

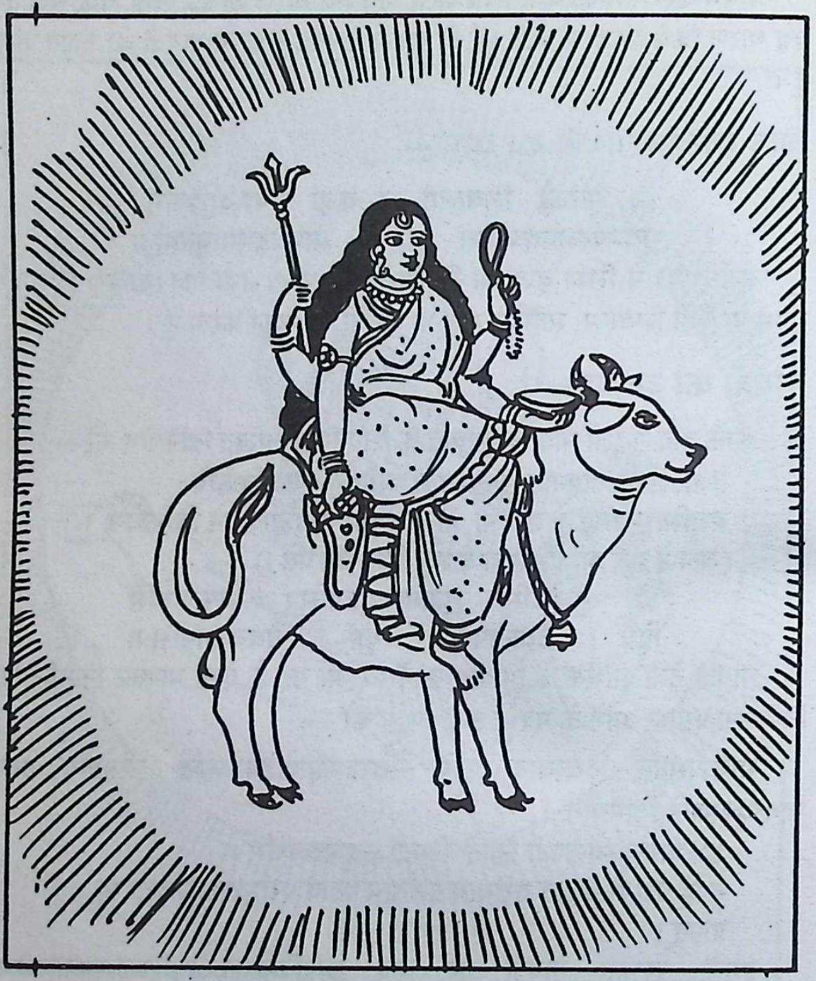

सांयाह्न —वृषभासन समा रूढ़ा वृद्धा रुद्राणी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गायत्री मंत्र का विनियोग—

ॐ कारस्य ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छंदः परमात्मा देवता,

ॐ भूर्भुवः स्वरिति महाव्याहृतीनां परमेष्ठी प्रजापतिः ऋषिः

गायत्र्युष्णिगनुष्टुभः छंदांसि अग्निवायुसूर्या देवताः ॐ तत्सवितुरित्यस्य विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छंद सविता देवता जपे विनियोगः ॥

गायत्री मंत्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात् ॥

सत् चित्त आनंद स्वरूप सृष्टिकर्ता प्रकाशमान परमात्मा के उस प्रसिद्ध वरणीय तेज का (हम) ध्यान करते हैं। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सत्कार्य की ओर प्रेरित करे।

भगवान् को जप का अर्पण—

अंत में निम्न वाक्य बोलते हुये जप निवेदित करें और अगले मंत्र से गायत्री देवी का विसर्जन करें।

अनेन गायत्री जपकर्मणा सर्वांतर्यामी भगवान् नारायणः प्रीयतां न मम ॥

गायत्री विसर्जन का मंत्र—

ॐ उत्तमे शिखरे देवी भूम्यां पर्वतमूर्धनि।
ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि ! यथासुखम ॥

अनेन संध्योपासनाख्येन कर्मणा श्रीपरमेश्वरः प्रीयतां न मम। ॐ तत्सत् श्री ब्रह्मार्पणमस्तु।

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥

कुछ सावधानियां—

गायत्री जप करते समय निम्न बातों का ध्यान विशेष सावधानीपूर्वक रखना चाहिए।

1. गायत्री के एक-एक पाद का अलग-अलग उच्चारण मन ही मन करना चाहिए। पदच्छेद करके उच्चारण की गई गायत्री ब्रह्महत्या को भी दूर करती है।
2. गायत्री का जप मन-ही-मन करना चाहिए, जिह्वा और होंठ न हिलाकर, सिर और ग्रीवा को न चलाकर, अपने दांतों को न दिखला कर, होंठ बंद रखकर, स्थिर चित्त से जप करना चाहिए।
3. गायत्री जप करते समय दाहिने हाथ को वस्त्र से ढककर जप करना चाहिए। इसके लिए 'गोमुखी' भी काम में ले सकते हैं। ढककर किया गया जप ही

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सफल होता है ।

4. माला फेरते समय तर्जनी अंगुली माला से दूर रखनी चाहिए ।
5. जप करते समय सिर पर वस्त्र तथा हाथ नहीं रखना चाहिए । जप करते समय हांफने से हानि , ऊंघने से दुःख, बोलने से रोग, माला हाथ से गिरना अशुभ एवं माला का सूत टूटने पर मृत्युदायक दारुण दुःख संभव है ।
6. माला फेरते समय सुमेरु का उल्लंघन न करें । दुबारा माला फेरते समय सुमेरु के पास से फिर माला को घुमा देना चाहिए ।
7. जप के समय वार्तालाप नहीं करना चाहिए तथा आलस्य,जंभाई, छींक, थूकना, अपवित्र अङ्गों का स्पर्श करना भी निषिद्ध है । कुछ अपवित्रता हो जाने पर आचमन तथा अङ्गन्यास करके ही माला फेरनी चाहिए ।
8. गायत्री जप की महिमा अपरम्पार है । गायत्री मंत्र के विधिविधान (उपरोक्त विधि) पूर्वक दस बार जप करने पर दिवारात्रि कृत लघु पाप नष्ट हो जाते हैं ।
9. 108 बार जपने से सर्वपाप नष्ट हो जाते हैं ।
10. सहस्र बार जपने पर महापातक दोष नष्ट हो जाते हैं ।
11. लक्ष बार जपने पर सप्तजन्मार्जित पाप नष्ट हो जाते हैं ।
12. कोटि बार जपने पर मनुष्य की सम्पूर्ण इच्छाएं पूर्ण हो जाती हैं ।
13. गायत्री के काम्य अनुष्ठान में दशांश का हवन करना चाहिए ।
14. विशेष अनुष्ठान में 'गायत्री कवच' एवं 'गायत्री हृदय' का पाठ करना चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिद्ध सरस्वती साधना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आज का युग बौद्धिक युग है । बौद्धिक विलास को लेकर चारों तरफ तरह-तरह के परीक्षण, कम्पिटीशन, परीक्षाएं एवं प्रतियोगिताएं संपन्न हो रही हैं । बुद्धिहीन व्यक्ति मूर्ख कहलाता है, उसकी कहीं कोई इज्जत नहीं । ऐसे में बुद्धिशाली व्यक्तियों की बुद्धि को कुशाग्र करने के लिए, मंदबुद्धि वालों की बौद्धिक क्षमता बढ़ाने के लिए एवं स्मरण-शक्ति की तीव्रता के लिए 'सिद्ध सरस्वती-साधना' एक मात्र अवलम्बन है, जिससे हम आज के इस बौद्धिक युग में सर्वाधिक सफल व्यक्ति हो सकते हैं ।

बौद्धिक विकास, प्रखर धारणा शक्ति बढ़ाने के लिए, सरस्वती कवच, नील सरस्वती साधना, सारस्वत व्रत एवं सिद्ध सरस्वती स्तोत्र ऐसे प्रयोग हैं जिसके माध्यम से हमें मां सरस्वती का वरदहस्त आशीर्वाद शीघ्र प्राप्त होता है ।

सारस्वत-व्रत की विधि और उसका महात्म्य

एक बार मत्स्यावतार भगवान् विष्णु से मनु ने पूछा— 'मधुसूदन ! किस व्रत का अनुष्ठान करने से मनुष्यों को मधुर वाणी, जनता में उत्कृष्ट सौभाग्य, उत्तम बुद्धि विद्याओं में निपुणता, पति-पत्नी में अभेद, बंधुजनों के साथ प्रेम और दीर्घायु की प्राप्ति हो सकती है ? माधव ! वह व्रत मुझे बतलाइए ।'

मत्स्यभगवान् ने कहा— 'राजन् ! तुमने तो बड़ा उत्तम प्रश्न किया है । अच्छा सुनो ! अब मैं उस सारस्वत-व्रत का वर्णन कर रहा हूं, जिसकी चर्चामात्र करने से इस लोक में सरस्वती देवी प्रसन्न हो जाती हैं । जो पुरुष मेरा भक्त हो उसे पंचमी के दिन इस श्रेष्ठ व्रत का अनुष्ठान प्रारंभ करना चाहिए । आरंभ काल में ब्राह्मणों के पूजन का विधान है । अथवा रविवार को, जब ग्रह-नक्षत्र आदि अनुकूल हों, ब्राह्मणों द्वारा स्वस्तिवाचन कराकर, उन ब्राह्मणों को खीर का भोजन करावें और अपनी शक्ति के अनुसार सुवर्णसहित श्वेत-वस्त्र का दान करें । फिर श्वेत पुष्पमाला और चंदन आदि उपकरणों द्वारा भक्तिपूर्वक गायत्री देवी की पूजा करके यों प्रार्थना करें— "देवी ! जैसे ब्रह्मलोक में भगवान् पितामह आपको छोड़कर कहीं अन्यत्र नहीं रुकते, उसी प्रकार का वर मुझे भी प्रदान करें । देवी ! जैसे वेद, संपूर्ण-शास्त्र तथा गीत-नृत्य आदि जितनी कलाएं हैं, वे सभी आपके बिना नहीं रह सकतीं, उसी प्रकार की सिद्धियां मुझे भी प्राप्त हों । सरस्वती ! आप अपनी लक्ष्मी, मेधा,धरा, पुष्टि, गौरी, तुष्टि, प्रभा और मति— इन आठ मूर्तियों द्वारा मेरी रक्षा करें ।" इस प्रकार धर्मज्ञ पुरुष वीणा, रुद्राक्ष-माला, कमंडल और पुस्तक धारण करने वाली गायत्री की श्वेत पुष्प, अक्षत आदि से भक्तिपूर्वक पूजा कर, प्रातः एवं सांयकाल मौन धारण करके भोजन करे तथा प्रत्येक पक्ष की पंचमी तिथि को ब्रह्मवासिनं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(वेद-विद्या की अधिष्ठात्री) का पूजन कर घृतपूर्ण पात्र सहित एक सेर चावल, दूध और सुवर्ण का दान करे और कहे—"गायत्री देवी मुझ पर प्रसन्न हो ।" यह कर्म सायंकाल में मौन धारण करके करना चाहिए । तेरह महीने तक प्रातः और सांयकाल के बीच भोजन न करने का विधान है । व्रत समाप्त हो जाने पर पहले ब्राह्मण को दो वस्त्रों सहित भोजन-पदार्थ का दान करके तत्पश्चात स्वयं श्वेत चावलों का भोजन करे । पुनः देवी के नियमित वितान (चंदोवा या चांदनी), घंटा, दो श्वेत (चांदी के बने हुए) नेत्र, दुधारु गौ, चंदन, दो वस्त्र और सिर का कोई आभूषण दान करना चाहिए । तदनंतर पढ़ उपदेश करने वाले अर्थात् कर्म करने वाले गुरु को भी कृपणंता-रहित होकर वस्त्र, पुष्पमाला, चंदन आदि से भली-भांति पूजन करे ।

जो मनुष्य इस (उपयुक्त) विधि के अनुसार सारस्वत-व्रत का अनुष्ठान करता है । वह विद्या-संपन्न, धनवान् और मधुरभाषी हो जाता है, साथ ही सरस्वती की कृपा से ब्रह्मलोक में प्रतिष्ठित होता है । अथवा राजन ! यदि कोई स्त्री इस व्रत का अनुष्ठान करती है तो वह भी उस फल को प्राप्त करती है और तीस कल्पों तक ब्रह्मलोक में निवास करती है । जो मनुष्य इस सारस्वत-व्रत का पाठ अथवा श्रवण करता है, वह भी विद्याधर-लोक में तीस कल्पों तक निवास करता है ।'

सरस्वती कवच

गुरुरुवाच

श्रृणु शिष्य प्रवच्यामि कवचं सर्वकामदम् ।
यद् धृत्वा सततं सर्वैः प्रपाठ्यो यं स्तवः शुभः ।।
श्री सरस्वत्ये नमः
अस्य श्रीसरस्वतीस्तोत्र कवचस्य प्रजापतिर्ऋषिः,
अनुष्टुपछन्दः, शारदादेवता, सर्वतत्त्वपरिज्ञाने
सर्वार्थसाधनेषु च ।
कवितासु च सर्वासु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।
इति पठित्वा विनियोगः कुर्यात् ।
ॐ श्रीं ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा शिरो मे पातु सर्वतः ।
ॐ श्रीं वाग्देवतायै स्वाहा भालं मे सर्वदा वतु ।
ॐ सरस्वत्यै स्वाहेति श्रोत्रे पातु निरन्तरम् ।
ॐ ह्रीं श्रीं भगवत्यै सरस्वत्यै स्वाहा नेत्रयुग्मं सदा वतु ।
ॐ ऐं ह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहा नासां में सर्वदा वतु ।
ॐ ह्रीं विद्या धिष्ठातृदेव्यै स्वाहा चौष्ठं सदा वतु ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ॐ श्रीं ह्रीं ब्राह्मयै स्वाहेति दन्तपंक्तिं सदा वतु।
ॐ ऐं इत्येकाक्षरो मन्त्रो मम कण्ठं सदा वतु।
ॐ श्रीं पातु मे ग्रीवां स्कन्धौ मे श्रीः सदा वतु।
ॐ ह्रीं विद्याधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा वक्षः सदा वतु।
ॐ ह्रीं विद्या धिस्वरूपायै स्वाहा मे पातु नाभिकाम्।
ॐ ह्रीं क्लीं वाण्यै स्वाहेति मम हस्तौ सदा वतु।
ॐ सर्ववर्णात्मिकायै पादयुग्मं सदा वतु।
ॐ वागधिष्ठातृदेव्य स्वाहा सर्व सदा वतु।

तत्पश्चादाशाबन्धं कुर्यात्

ॐ सर्वकण्ठवासिन्यै स्वाहा प्राच्यां सदा वतु।
ॐ सर्वजिह्वा ग्रवासिन्यै स्वाहाऽग्निदिशि रक्षतु॥
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सरस्वत्यै बुधजनन्यै स्वाहा।
ॐ सततं मन्त्रराजो यं दक्षिणे मां सदा वतु॥
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं त्र्यक्षरो मन्त्रो नैर्ऋत्ये सर्वदा वतु।
ॐ ऐं ह्रीं जिह्वा ग्रवासिन्यै स्वाहा प्रतीच्यां मां सर्व॥
ॐ ऐं सर्वशास्त्रवादिन्यै स्वाहैशान्ये सदा वतु॥
ॐ ह्रीं सर्वपूजितायै स्वाहा चोर्ध्वं सदा वतु।
ॐ ह्रीं पुस्तकवासिन्यै दा धो मां सदा वतु॥
ॐ ग्रन्थबीजस्वरूपायै स्वाहा मां सर्वतो वतु।
इति ते कथितं शिष्य ब्रह्ममन्त्रौघविग्रहम्।
इदं विश्वजयं नाम कवचं ब्रह्मरूपकम्।
इति श्रीसरस्वतीकवचं समाप्तम्।

सरस्वत्यष्टक

शतानीक उवाच–

महामते महाप्राज्ञ सर्वशास्त्र विशारद।
अक्षीणकर्मबन्धस्तु पुरुषो द्विजसत्तम॥
मरणे यज्जपेज्जाप्यं पंचभावमनुस्मरन्।
परम्पदमवा प्नोति तन्मे ब्रूहि महामुने॥

शौनक उवाच–

इदमेव महाराज पृष्टवांस्ते पितामहः।
भीष्मं धर्मविदां श्रेष्ठं धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

युधिष्ठिर उवाच—

पितामह महाप्राज्ञ सर्वशास्त्र विशारद ।
बृहस्पतिस्तुता देवी वागीशाय महात्मने ।
आत्मानं दर्शयामास सूर्यकोटिसमप्रभम् ।।

सरस्वत्युवाच—

वरं वृणीष्व भगवन् यत्ते मनसि वर्त्तते

बृहस्पतिरुवाच—

यदि मे वरदा देवि दिव्यज्ञानं प्रयच्छ नः ।।

देव्युवाच—

हन्त मे निर्मलं ज्ञानं कुमतिध्वंसकारकम् ।
स्तोत्रेणानेन ये भक्त्या मां स्तुवन्ति मनीषिणः ।।

बृहस्पतिरुवाच—

लभते परमं ज्ञानं यत् सुरैरपि दुर्लभम् ।
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामाप्रसादतः ।।

सरस्वत्युवाच—

त्रितन्ध्य प्रयतो नित्यं पठेदष्टकमुत्तमम् ।
तस्य कण्ठे सदा वासं करिध्यामि न संशयः ।।
इति श्रीपद्मपुराणे दिव्यज्ञानप्रदायकं
सरस्वत्यष्टकं सम्पूर्णम् ।

नील सरस्वती मंत्र

आज के युग में मानव जिन समस्याओं से ग्रस्त है, उनमें शिक्षा प्रमुख है । प्रत्येक व्यक्ति की इतनी सामर्थ्य नहीं है कि वह वर्तमान समय की व्ययसाध्य विद्यालयों की शिक्षा के अलावा अपने बच्चों के हेतु प्रत्येक विषय के अतिरिक्त प्रशिक्षण (ट्यूशन) करवा सके । विद्यालयों की स्थिति यह है कि अध्यापक या तो विद्यालय आते नहीं और आते भी हैं तो पढ़ाते नहीं । यदि कोई सच्चरित्र शिक्षा देना भी चाहे तो कुछ छात्र पढ़ना ही नहीं चाहते तथा अन्य छात्रों की शिक्षा में भी बाधा डालते हैं । कुछ भी हो परीक्षा में उत्तीर्ण न होने पर पश्चात्ताप सभी को होता है ।

बुद्धि-विद्या की देवी सरस्वती है, शिक्षा में मन लगे, आपकी बुद्धि प्रखर हो, परीक्षा में सफलता मिले, इस उद्देश्य से सरस्वती मंत्र का जप या अनुष्ठान हितकारी है ।

विनियोग (जल हाथ में लेकर निम्न अंश पढ़कर छोड़ दें)

अस्य नीलसरस्वती महामंत्रस्य देवाचार्य ऋषि; अनुष्टुप छन्द; श्री नील सरस्वती देवता, अप कृत्यादि विनाशने विद्याबुद्धिवर्चस्व सिद्धर्थ जपे विनियोगः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ध्यानः—

घंटा शिरः शूल मंसि कराग्रे,
संविभ्रति चंद्रकलावंतसाम्।
प्रमथ्यतीं पादतले पशुं तां,
भजेमुदा नीलसरस्वतीशाम् ॥

(देवी के निम्न स्वरूप का मन में ध्यान करें—चंद्रमा के समान कांतिवाली मां सरस्वती के चार हाथ हैं जिनमें घंटा, मुण्ड, शूरा तथा खड्ग धारण किए हैं, पैरों से अज्ञान रूपी पशु का मंथन कर रही हैं, ऐसी देवी नील सरस्वती को मेरा प्रणाम है ।)

तदनंतर निम्न मंत्र का जप करें । एक, दो, तीन या इससे अधिक माला जितना संभव हो नित्य प्रति जप कर सकते हैं । एक माला में 108 दाने होते हैं, लेकिन एक माला में गिनती 100 होगी । नित्य ही बराबर संख्या का जप हो, यह आवश्यक नहीं है लेकिन जप प्रारंभ करने के बाद बीच में किसी दिन क्रम न टूटे । इस प्रकार सवा लाख जप पूर्ण होने पर हवन, मार्जन, तर्पण करें ।

मंत्र—

ऐं श्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं
ऐं ब्लूं त्रीं नील सरस्वति,
बुद्धि वैकल्यदोषं हर हर,
विद्या बुद्धि वर्चस्वं मे देहि देहि
अपकृत्यादि भयं नाशय नाशय,
त्रीं ब्लूं ऐं क्लीं क्लीं,
ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं ऐं।

जप के हेतु अशोक के फूलों की माला बनायी जाए तो उत्तम है । जप स्वयं कर सकते हैं, उच्चारण शुद्ध हो, ध्यान दें ।

अथवा योग्य विद्वान् द्वारा अनुष्ठान करवा सकते हैं ।

शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करने हेतु विद्या एवं बुद्धिवर्द्धक अमोघ फलदायक स्तोत्र

अथ सिद्धसरस्वती स्तोत्रम्—

अस्य श्री सरस्वतीस्त्रोतमन्त्रस्य मार्कण्डेय-ऋषिः स्रग्धरानुष्टुप्छन्दः सरस्वती देवता, ऐं बीजं । वद वद शक्तिः, स्वाहा कीलकं । मम वाक् सिद्धयर्थ जपे विनियोगः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अथ न्यास:

ॐ ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम: । ॐ ऐं तर्जनीभ्यां नम: ।
ॐ धीं मध्यमाभ्यां नम: । क्लीं अनामिकाभ्यां नम: ।
ॐ सौं कनिष्ठिकाभ्यां नम: । ॐ श्री करतलकर पृष्ठाभ्यां नम: ।

ॐ अथ हृदयादिन्यास—

ॐ ह्रीं हृदयाय नम: । ॐ ऐं शिरसे स्वाहा ।
ॐ धीं शिखायै वषट् । ॐ क्लीं नेत्रत्रयाय वोषट् ।
ॐ सौं कवचाय हुं । ॐ श्रीं अस्त्राय फट् ॥

अथ ध्यानम् (सरस्वती माता का ध्यान) —

शुक्ला ब्रह्मविचार सार परमायाद्यां जगद्व्यापिनीं,
वीणा पुस्तक धारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ।
हस्ते स्फाटिक मालिकां विदधनौ पद्मासने संस्थितां,
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥ 1 ॥
दोर्भिर्युक्तैश्चतुर्भि: स्फटिक मणिमयीमक्षमालान्दधानां,
हस्तेनैकेन पद्मं सितमपि च शुकं पुस्तकं चापरेण ।
पाशं वीणां मुकुन्दस्फटिकमणिनिभां भासमाना समाना,
सा मे वादे च तथ्यं निवसतु वदने सर्वदा सुप्रसन्ना ॥ 2 ॥
या कुन्देदुतुषारहारधवला या श्वेतपद्मासना ।
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवै: सदावंदिता,
सा मां पातु सरस्वती भगवती नि:शेषजाड्यापहा ॥ 3 ॥

इस प्रकार से माता सरस्वती का हृदय में ध्यान धरें एवं सरस्वती का चित्र नेत्रों के सामने रखें एवं निम्न मंत्र का 108 बार जाप करें:—

ॐ ह्रीं ऐं धीं क्लीं सौं श्रीं सरस्वत्यै नम: ॥

जाप (मंत्र जप) के पश्चात् निम्न स्तोत्र पढ़ें—

ह्रीं ह्रीं ह्रीं हृद्यैकबीजे शशिरुचि कमले कल्पविस्पष्ट शोभे,
भव्ये भव्यानुकूले शुभमति वरदे विश्ववन्द्याङ्घ्रिपद्मे ।
पद्मे पद्मोपविष्टे प्रणतजनमनो मोदसम्पादयित्रि,
प्रोत्फुल्लज्ञानकूले हरिहरनमिते देवि ! संसार सारे ॥ 1 ॥
ऐं ऐं ऐं जाप्यतुष्टे हिमरुचिमुकुटे वल्लकीव्यग्रहस्ते,
मातर्मातर्नमस्ते दह दह जडतां देहि बुद्धिं प्रशस्ताम् ।
विद्ये वेदान्तवेद्ये श्रुतिपरिपठिते मोक्षैदे मुक्तिमार्गे,
मार्गातीत स्वरूपे भव मम वरदे शारदे शुभ्रहारे ॥ 2 ॥
धीं धीं धीं धारणाख्ये धृतिमतिनुतिभिर्नामभि: कीर्त्तनीये,
नित्ये नित्ये निमित्ते मुनिजननमिते नूतने वै पुराणे ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुण्ये पुण्य प्रभावे हरिहर नमिते पूर्णतत्त्वस्वरूपे,
मातर्मात्रार्थे तत्त्वे मति मति मति दे माधव प्रीति नादे ॥ 3 ॥
क्लीं क्लीं क्लीं सुस्वरूपे दह दह दुरितं पुस्तकव्यग्रहस्ते,
सन्तुष्टाकारचित्ते स्मितमुखि सुभगे जृम्भणि स्तम्भनीय ।
मोहेमुग्धप्रबोधे मम कुरु कुमतिध्वान्तविध्वंसमीड्ये,
गीर्गीर्गीर्वाऽभारतीत्वं कविधृतरसने सिद्धि दे सिद्धिसाध्ये ॥ 4 ॥
सौं सौं सौं शक्तिबीजे कमलभवमुखाम्भोजमूर्त्तिस्वरूपे ।
रूपे रूपप्रकाशे सकलगुणमये निर्गुणे निर्विकल्पे,
न स्थूले नैव सूक्ष्मेऽप्यविदित विभवे जाप्यविज्ञानतुष्टे,
विश्वे विश्वान्तराले सकलगुणमये निष्कले नित्यशुद्धे ॥ 5 ॥
श्रीं श्रीं श्रीं स्तौमि त्वाऽहं मम खलु रसनां मां कदाचित्त्यज त्वं,
मा मे बुद्धिर्विरुद्धा भवतु मम मनो पातु मां देविः पापात् ।
मा मे दुःखं कदाचित् क्वचिदपि विषये पुस्तके नाकुलहवं ।
शास्त्रे वादे कवित्वे प्रसरतु मम धीर्माऽस्तु कुण्ठा कदापि ॥ 6 ॥
इत्येतैः श्लोकमुख्यै प्रतिदिनमुषसि स्तौनि यो भक्तिनम्रो,
राणी वाचस्पतोरप्यविदितविभवो वाक्यतत्त्वार्थवेत्ता ।
सस्यादिष्टार्थलाभी सुतमिव सततं पातु तं सा च देवी,
सौभाग्यं तस्य लोके प्रसरतु कविता विघ्नमस्तं प्रयातु ॥ 7 ॥
निर्विघ्नं तस्य विद्या प्रभवति सततं चाशुग्रन्थ प्रबोध;
कीर्तिस्त्रैलोक्यामध्ये निवसति वदने शारदा तस्म साक्षात् ।
दीर्घायुर्लोकपूज्यः सकलगुणनिधिः सन्ततं राज्यमान्यो,
वाग्देव्याः सम्प्रसादात् त्रिजगतिविजयो जायते तस्य साक्षात ॥ 8 ॥
ब्रह्मचारी व्रती मौनी त्रयोदश्यामहर्निशम् ।
सारस्वतो जनः पाठाद् भवेदिष्टार्थ लाभवान् ॥ 9 ॥
पक्षद्वये त्रयोदश्यामेक विंशतिसंख्यया ।
अविच्छिन्नं पठेद्यस्तु सुभंगोलोकविश्रुतः ।
वांच्छितं फलमाप्नोति षण्मासैर्नात्र संशयः ।
ॐ ह्रीं ऐं धीं क्लीं सौं श्रीं वद वद वाग्वादिन्यै स्वाहा । (108 जप करें तथा)
निम्न मंत्र बोलकर माला सिर में धारण करें—
त्वं माले सर्वदेवानां सर्वकामप्रदा मता ।
ते सत्येन मे सिद्धिं देहि मातर्नयोऽस्तुते ॥
(इत्यर्पणम्)
॥ इति सनत्कुमारसंहितायां सिद्ध सरस्वतीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महालक्ष्मी और साधना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

धन की अधिष्ठात्री देवी, महालक्ष्मी की साधना हेतु महालक्ष्मी स्तोत्र से लेकर महालक्ष्मी कवच, लक्ष्मी स्तोत्र, इन्द्रकृत महालक्ष्म्यष्टक, लक्ष्मी नृसिंह स्तोत्र, श्रीसूक्त, लक्ष्मी सूक्त, कनकधारा स्तोत्र तक की पूरी सामग्री प्रबुद्ध पाठकों हेतु यहां दी जा रही है। जो अन्यत्र दुर्लभ है।

महालक्ष्मीस्तोत्रम्

।।श्री गणेशाय नमः ।।

जय पद्मपलाशाक्षि जय त्वं श्रीपतिप्रिये।
जय मातर्महालक्ष्मि संसारार्णवतारिणि ।। 1 ।।
महालक्ष्मि नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं सुरेश्वरि।
हरिप्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं दयानिधे ।। 2 ।।
पद्मालये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं च सर्वदे।
सर्वभूतहितार्थाय वसुवृष्टिं सदा कुरु ।। 3 ।।
जगन्मातर्नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं दयानिधे।
दयावति नतस्तुभ्यं विश्वेश्वरि नमोऽस्तुते ।। 4 ।।
नमः क्षीरार्णवसुते नमस्त्रैलोक्यधारिणि।
वसुवृष्टे नमस्तुभ्यं रक्षमां शरणागतम् ।। 5 ।।
रक्ष त्वं देवदेवेशि देवदेवस्य वल्लभे।
दारिद्र्यात्त्राहि मां लक्ष्मि कृपां कुरु ममोपरि ।। 6 ।।
नमस्त्रैलोक्यजननि नमस्त्रैलोक्यपावनि।
ब्रह्मादयो नमन्ति त्वां जगदानन्ददायिनि ।। 7 ।।
विष्णुप्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं जगद्धिते।
आर्तिहन्त्रि नमस्तुभ्यं समृद्धिं कुरु मे सदा ।। 8 ।।
अब्जवासे नमस्तुभ्यं चपलायै नमो नमः।
चञ्चलायै नमस्तुभ्यं ललितायै नमो नमः ।। 9 ।।
नमः प्रद्युम्नजननि मातस्तुभ्यं नमो नमः।
परिपालय मां मातर्देवि त्वं शरणागतम् ।। 10 ।।
शरण्ये त्वां प्रसन्नोस्मि कमले कमलालये।
त्राहि त्राहि महालक्ष्मि परित्राणपरायणे ।। 11 ।।
पाण्डित्यं शोभते नैव न शोभन्ते गुणा नरे।
शीलत्वं नैव शोभेत महालक्ष्मि त्वया विना ।।12 ।।
तावद्विराजते रूपं तावच्छीलं विराजते।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तावद्गुणा नराणां च यावल्लक्ष्मीः प्रसीदति ॥ 13 ॥
लक्ष्मि त्वयाऽलङ्कृतमानवाये, पापैर्विमुक्ता नृपलोकमान्याः ।
गुणैर्विहीनागुणिनो भवन्ति, दुःशीलिनः शीलवतां वरिष्ठाः ॥ 14 ॥
लक्ष्मीर्भूषयते रूपं लक्ष्मीर्भूषयते कुलम् ।
लक्ष्मीर्भूषयते विद्यां सर्वाल्लक्ष्मीर्विशिष्यते ॥ 15 ॥
लक्ष्मि त्वद्गुणकीर्तनेन सकलाभूर्यात्यलं जिह्नतां
रुद्राद्या रविचन्द्रदेवपतयो वक्तुं च नैव क्षमाः ।
अस्माभिस्तव रूपलक्षणगुणान्वक्तुं कथं शक्यते ।
मातर्मा परिपाहि विश्वजनके कृत्वा ममेष्टं ध्रुवम् ॥ 16 ॥
दीनार्तिभीतं भवतापपीडितं, धनैर्विहीनं तव पार्श्वमागतम् ।
कृपानिधित्वान्मम लक्ष्मि सत्वरं, धनप्रदानाद्धननायकं कुरु ॥ 17 ॥
मां विलोक्य सदये हरिप्रिये, निर्धनं तव समीपमागतम् ।
देहि मे झटिति लक्ष्मि कराग्रं, वस्त्रकाञ्चनवरान्नमद्भुतम् ॥ 18 ॥
त्वमेव जननी लक्ष्मि पिता लक्ष्मि त्वमेव च ।
भ्राता त्वं च सखा लक्ष्मि विद्या लक्ष्मि त्वमेव च ॥ 19 ॥
त्राहि त्राहि महालक्ष्मि त्राहि त्राहि सुरेश्वरि ।
त्राहि त्राहि जगन्मातर्दारिद्यात्रनानि वेगतः ॥ 20 ॥
नमस्तुभ्यं जगद्धात्रि नमस्तुभ्यं नमो नमः ।
धर्माधारे नमस्तुभ्यं नमः सम्पत्तिदायिनि ॥ 21 ॥
दारिद्र्यार्णवमग्नोऽहं निमग्नोऽहं रसातले ।
मज्जन्तं मां करे धृत्वा तूद्धर त्वं रमे द्रुतम् ॥ 22 ॥
किं लक्ष्मि बहुनोक्तेन जल्पितेन पुनः पुनः ।
अन्यन्मे शरणं नास्ति सत्यं सत्यं हरिप्रिये ॥ 23 ॥
एतच्छ्रुत्वाऽगस्तिवाक्यं हृष्यामाणा हरिप्रिया ।
उवाच मधुरां वाणीं तुष्टाऽहं तव सर्वदा ॥ 24 ॥

लक्ष्मी उवाच

यत्त्वयोक्तमिदं स्तोत्रं यः पठिष्यति मानवः ।
श्रृणोति च महाभागस्तस्याहं वशवर्तिनी ॥ 25 ॥
नित्यं पठति यो भक्तया त्वलक्ष्मीस्तस्य नश्यति ।
ऋणं च नश्यते तीव्रं वियोगं नैव पश्यति ॥ 26 ॥
यः पठेत्प्रातरुत्थाय श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
गृहे तस्य सदा तुष्टा नित्यं श्रीः पतिना सह ॥ 27 ॥
सुखसौभाग्यसम्पन्नो मनस्वी बुद्धिमान् भवेत् ।
पुत्रवान् गुणवान श्रेष्ठो भोगभोगा च मानवः ॥ 28 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इदं स्तोत्रं महापुण्यं लक्ष्म्याः प्रतिकरं वरम्।
विष्णुप्रसादजननं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ 29 ॥
राजद्वारे जयश्चैव शत्रोश्चैव पराजयः।
भूतप्रेतपिशाचानां व्याघ्राणां न भयं तथा ॥ 30 ॥
न शस्त्रानलतोयौधाद्भयं तस्य प्रजायते।
दुर्वृत्तानां च पापानां बहुहानिकरं परम् ॥ 31 ॥
मन्दुराकरिशालासु गवां गोष्ठे समाहितः।
पठेत्तद्दोषशान्त्यर्थे महापातकनाशनम् ॥ 32 ॥
सर्वसौख्यकरं नृणामायुरारोग्यदं तथा।
अगस्तिमुनिना प्रोक्तं प्रजानां हितकाम्यया ॥ 33 ॥
॥इत्यगस्तिविरचितं महालक्ष्मीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

महालक्ष्मीकवचम्

हाथ में जल लेकर विनियोग करें—

अस्य श्रीमहालक्ष्मीकवचमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः महालक्ष्मीर्देवता, महालक्ष्मीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

इन्द्र उवाच

समस्तकवचानां तुं तेजस्वी कवचोत्तमम्।
आत्मरक्षणमारोग्यं सत्वं त्वं ब्रुहि गीष्पते ॥ 1 ॥

श्रीगुरुरुवाच

महालक्ष्म्यास्तु कवचं प्रवक्ष्यामि समासतः।
चतुर्दशसु लोकेषु रहस्यं ब्रह्मणोदितम् ॥ 2 ॥

ब्रह्मोवाच

शिरो मे विष्णुपत्नी च ललाटममृतोद्भवा।
चक्षुषी सुविशालाक्षी श्रवणे सागराम्बुजा ॥ 3 ॥
घ्राणं पातु वरारोहा जिह्वामाम्नायरूपिणी।
मुखं पातु महालक्ष्मीः कण्ठं बैकुण्ठवासिनी ॥ 4 ॥
स्कन्धौ मे जानकी पातु भुजौ भार्गवनन्दिनी।
बाहू द्वौ द्रविणी पातु करौ हरिवराङ्गना ॥ 5 ॥
वक्षः पातु च श्रीर्देवी हृदयं हरिसुन्दरी।
कुक्षिं च वैष्णवी पातु नाभिं भुवनमातृका ॥ 6 ॥
कटिं च पातु वाराही सक्थिनी देवदेवता।
ऊरु नारायणी पातु जानुनी चन्द्रसोदरी ॥ 7 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन्दिरा पातु जङ्घे मे पादौ भक्तनमस्कृता ।
नखान् तेजस्विनी पातु सर्वाङ्ग करुणामयी ॥ 8 ॥
ब्रह्मणा लोकरक्षार्थ निर्मितं कवचं श्रियः ।
ये पठन्ति महात्मानस्ते च धन्या जगत्रये ॥ 9 ॥
कवचेनावृत्ताङ्गानां जनानां जयदा सदा ।
मातेव सर्वसुखदा भव त्वममरेश्वरी ॥ 10 ॥
भूयः सिद्धिमवाप्नोति पूर्वोक्तं ब्रह्मणा स्वयम् ।
लक्ष्मीर्हरिप्रिया पद्मा एतन्नामत्रयं स्मरन् ॥ 11 ॥
नामत्रयमिदं जप्त्वा स याति परमां श्रियम् ।
यः पठेत्स च धर्मात्मा सर्वान्कामानवानप्नुयात ॥ 12 ॥
॥इति श्री ब्रह्मपुराणे इन्द्रोपादिष्टं महालक्ष्मीकवचं सम्पूर्णम् ॥

लक्ष्मीस्तोत्रम्

क्षमस्व भगवत्यम्ब क्षमाशीले परात्परे ।
शुद्धसत्त्वस्वरूपे च कोपादिपरिवर्जिते ॥ 1 ॥
उपमे सर्वसाध्वीनां देवीनां देवपूजिते ।
त्वया बिना जगत्सर्व मृततुल्यं च निष्फलम् ॥ 2 ॥
सर्वसम्पत्स्वरूपा त्वं सर्वेषां सर्वरूपिणी ।
रासेश्वर्यधिदेवी त्वं त्वत्कलाः सर्वयोषित ॥ 3 ॥
कैलासे पार्वती त्वं च क्षीरोदे सिन्धुकन्यका ।
वर्गे च हि स्वर्गलक्ष्मीस्त्वं मर्त्यलक्ष्मीश्च भूतले ॥ 4 ॥
बैकुण्ठे च महालक्ष्मीर्देवदेवी सरस्वती ।
गङ्गा च तुलसी त्वं च सावित्री ब्रह्मलोकतः ॥ 5 ॥
कृष्णाप्राणाधिदेवी त्वं गोलोके राधिका स्वयम् ।
रासे रासेश्वरी त्वं च वृन्दावनवने वने ॥ 6 ॥
कृष्णाप्रिया त्वं भाण्डीरे चन्द्रा चन्दनकानने ।
विरजा चम्पकवने शतशृङ्गे च सुन्दरी ॥ 7 ॥
पद्मावती पद्मवने मालती मालतीवने ।
कुन्ददन्ती कुन्दवने सुशीला केतकीवने ॥ 8 ॥
कदम्बमाला त्वं देवी कदम्बकाननेऽपि च ।
राजलक्ष्मी राजगेहे गृहलक्ष्मीर्गृहे गृहे ॥ 9 ॥
इत्युक्त्वा देवताः सर्वो मुनयो मनवस्तथा ।
रुरुदुर्नम्रवदनाः शुष्ककण्ठोष्ठतालुकाः ॥ 10 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इति लक्ष्मीस्तवं पुण्यं सर्वदेवैः कृतं शुभम्।
यः पठेत्प्रातरुत्थाय स वै सर्व लभेद्ध्रुवम् ॥ 11 ॥
अभार्यो लभते भार्या विनीतां सुसुतां सतीम्।
सुशीलां सुन्दरीं रम्यामतिसुप्रियवादिनीम् ॥ 12 ॥
पुत्रपौत्रवतीं शुद्धां कुलजां कोमलां वराम्।
अपुत्रो लभते पुत्रं वैष्णवं चिरजीविनम् ॥ 13 ॥
परमैश्वर्ययुक्तं च विद्यावन्तं यशस्विनम्।
भ्रष्टाराज्यो लभेद्राज्यं भ्रष्टश्रीर्लभते श्रियम् ॥ 14 ॥
हतबन्धुर्लभेद्बन्धुं धनभ्रष्टो धनं लभेत्।
कीर्तिहीनोलभेत्कीर्ति प्रतिष्ठां च लभेद्ध्रुवम् ॥ 15 ॥
सर्वमङ्गलदं स्तोत्रं शोकसन्तापनाशनम्।
हर्षानन्दकरं शश्वद्धर्ममोक्षसुसहृत्पदम् ॥ 16 ॥

॥इति देवकृतं लक्ष्मीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन्द्रकृत—चमत्कारी महालक्ष्म्यष्टक

कथा प्रसिद्ध है एक बार महालक्ष्मी देवताओं से रुष्ट होकर स्वर्गलोक से निकल कर पुष्करतीर्थ के सरोवर में एक सुवर्ण कमल की नाल में जाकर छिप गईं। समस्त स्वर्ग लोक का ऐश्वर्य फीका पड़ गया। देवताओं के मुख म्लान (श्रीहीन) हो गए। तब देवराज इन्द्र ने महालक्ष्मी को ढूंढ़ा एवं निम्न लिखित आठ श्लोकों का अष्टक देवी के चरणों में भेंट किया। महालक्ष्मी प्रसन्न हो गईं। इस अष्टक को नित्य एक बार पढ़ने से पापों का नाश, दो बार पढ़ने से धन धान्य की प्राप्ति, तीन बार पढ़ने से महाबलशाली शत्रु का नाश होता है एवं व्यक्ति को, ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है।

महालक्ष्म्यष्ट कस्तवः

॥श्री गणेशाय नमः॥

इन्द्र उवाच

नमस्तेऽस्तु महामाये श्रीपीठे सुरपूजिते।
शंङ्खचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मि नमोऽस्तुते॥1॥
नमस्ते गरूडारूढें कोलासुरभयङ्करि।
सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तुते॥2॥
सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदुष्टभयंङ्करि।
सर्वदुःखहरे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तुते॥3॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनि।
मन्त्रपूते सदा देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तुते ॥ 4 ॥
आद्यन्तरहिते देवि आद्यशक्तिमहेश्वरि।
योगजे योगसम्भूते महालक्ष्मि नमोऽस्तुते ॥ 5 ॥
स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्तिमहोदरे।
महापापहरे देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तुते ॥ 6 ॥
पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणि।
परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मि नमोऽस्तुते ॥ 7 ॥
श्वेताम्बरधरे देवि नानालङ्कारभूषिते।
जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मि नमोऽस्तुते ॥ 8 ॥

फल स्तुति

महालक्ष्म्यष्टकं स्तोत्रं यः पटेद्भक्तिमान्नरः।
सर्वसिद्धिमवाप्नोति राज्यं प्राप्नोति सर्वदा ॥ 9 ॥
एककाले पठेन्नित्यं महापापविनाशनम्।
द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्यसमन्वितः ॥ 10 ॥
त्रिकालं यः पठेन्नित्यं महाशत्रुविनाशनम्।
महालक्ष्मीर्भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदा शुभा ॥ 11 ॥
॥ इतीन्द्रकृतं महालक्ष्म्यष्टकं सम्पूर्णम् ॥

संकट नाशक श्री लक्ष्मीनृसिंह स्तोत्र

लक्ष्मी प्राप्ति के जब अन्य सभी उपाय निरर्थक साबित हो जायें, तब आद्य शंकराचार्य निर्मित इस स्तोत्र का फल अमोघ माना गया है। हमने प्रयोग किया है, जो लोग दिवालिया हो गए, इस स्तोत्र के अनुष्ठान से पुनः करोड़पति हो गए। यह लक्ष्मी प्राप्ति का उग्र प्रयोग है।

संकटनाशनं श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम

॥श्री गणेशाय नमः ॥

श्रीमत्पयोनिधिनिकेतन चक्रपाणे
भोगीन्द्रभोगमणिरञ्जितपुण्यमूर्ते ।
योगीश शाश्वत शरण्य भवाब्धिपोत
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 1 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ब्रह्मेन्द्ररुद्रमरुदर्ककिरीटकोटि
संङ्घट्टिताङ्घ्रिकमलामलजान्तिकान्त ।
लक्ष्मीलसत्कुचसरोरुहराजहंस
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 2 ॥
संसारघोरगहने चरतो मुरारे
मारोग्रभीकरमृगप्रवरार्दितस्य ।
आर्तस्य मत्सरनिदाघनिपीड़ितस्य
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 3 ॥
संसारकूपमतिघोरमगाधमूलं
सम्प्राप्य दुःखशतसर्पसमाकुलस्य ।
दीनस्य देव कृपणापदमागतस्य
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 4 ॥
संसारसागरविशालकरालकाल
नक्रग्रहग्रसननिग्रहवग्रहस्य ।
व्यग्रस्य रागरसनोर्मिनिपीडितस्य
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 5 ॥
संसारवृक्षमघबीजमनन्तकर्म-
शखाशतं करणपत्रमनङ्गपुष्पम्
आरुह्य दुःखफलितं पततो दयालो
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 6 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संसारसर्पघनवक्त्रभयोग्रतीव्र-
दंष्ट्राकरालविषदग्धविनष्टमूर्तेः ।
नागारिवाहन सुधाब्धिनिवास शौरे
लक्ष्मीनृसिंह ममं देहि करावलम्बम् ॥ 7 ॥
संसारदावदहनातुरभीकरोरु-
ज्वालावलीभिरति दग्धतनूरुहस्य ।
त्वत्पादपद्मसरसीशरणागतस्य
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 8 ॥
संसारजालपतितस्य जगन्निवास
सर्वेन्द्रियार्तवडिशार्थझषोपमस्य ।
प्रोत्खण्डितप्रचुरतालुकमस्तकस्य
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 9 ॥
संसारभीकरकरीन्द्रकराभिघात-
निष्पिष्टमर्मवपुषः सकलार्तिनाश ।
प्राणप्रयाणभवभीतिसमाकुलस्य
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 10 ॥
अन्धस्य मे हृतविवेकमहाधनस्य
चौरैः प्रभो बलिभिरिन्द्रियनामधेयैः ।
मोहान्धकूपकुहरे विनिपातितस्य
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलम्बम् ॥ 11 ॥
लक्ष्मीपते कमलनाभ सुरेश विष्णो
बैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन पुष्कराक्ष ।
ब्रह्मण्य केशव जनार्दन वासुदेव
देवेश देहि कृपणस्य करावलम्बम् ॥ 12 ॥
यन्माययोर्जितवपुःप्रचुरप्रवाह-
मग्नार्थमत्र निवहोरुकरावलम्बम् ।
लक्ष्मीनृसिंहचरणाब्जमधुव्रतेन
स्तोत्रं कृतं सुखकरं भुवि शङ्करेण ॥ 13 ॥
॥इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं श्रीलक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिद्धिलक्ष्मीस्तुतिः

आकारब्रह्मरूपेण ॐकारं विष्णुमव्ययम्।
सिद्धिलक्ष्मिः ! परलक्ष्मिः ! लक्ष्यलक्ष्मि नमोऽस्तुते ॥ 1 ॥
याः श्रीः पद्मवने कदम्बशिखरे राजगृहे कुञ्जरे
श्वेते चाश्वयुते वृषे च युगले यज्ञे च यूपस्थिते।
शङ्खे देवकुले नरेन्द्रभवने गङ्गातटे गोकुले
या श्रीस्तिष्ठति सर्वदा मम गृहे भूयात् सदा निश्चला ॥ 2 ॥
या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी
गम्भीरावर्तनाभिः स्तनभरनमिता शुद्धवस्त्रोत्तरीया
लक्ष्मिर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणि-गण-खचितैः स्नापिता हेमकुम्भै
नित्यं-सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमाङ्गल्ययुक्ता ॥ 3 ॥

॥इति सिद्धिलक्ष्मीस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

वेदोक्त श्रीसूक्त

अनंत ऐश्वर्य एवं लक्ष्मी प्राप्ति के मुमुक्ष को चाहिए कि वेद्दोक्त इस श्रीसूक्त का प्राणप्रतिष्ठित 'श्रीयंत्र' के सामने दीपक जलाकर नित्य पाठ करे। सुगंधित अगरबत्ती, सुगंधित पुष्प या सुगंधित द्रव्य, मावा का प्रसाद या पंचमेवा देवी को भोग लगावे। श्रीगुरुवर की आज्ञा लेकर इसका नित्य पाठ करे, एवं चमत्कार स्वयं देखे।

अथ श्रीमहालक्ष्म्यै नमः। विनियोग हाथ में जल लें ॐ हिरण्यवर्णामिति पञ्चदशर्चस्य सूक्तस्य। आनन्दकर्दमचिक्लीतेन्दिरासुता ऋषयः। श्रीरग्निश्चेत्युभे देवते। आद्यास्तिस्रोऽनुष्टुभः। चतुर्थी बृहती। पञ्चमीषष्ठ्यौ त्रिष्टुभौ। ततोऽष्टावनुष्टुभः अन्त्याप्रस्तारपंक्तिः। जपे विनियोगः।

हरिः ॐ हिरण्यवर्णा हरिणीं सुवर्णरजतस्त्रजाम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मी जातवेदोम आवह ॥1 ॥
तांम आवह जातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विंदेयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥2 ॥
अश्वपूर्वा रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीमादेवीजुषताम् ॥3 ॥
कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्राज्वलतीं तृप्तां तर्पयंतीम्।
पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥4 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चन्द्रां प्रभासां यशसाज्वलंतीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।
तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां घृणे ॥5॥
आदित्यवर्णे तपसोधिजातोवनस्पतिस्तववृक्षोथबिल्वः।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तुमायांतरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ॥6॥
उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे ॥7॥
क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठालक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात ॥8॥
गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टांकरीषिणीम्।
ईश्वीरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥9॥
मनसः काममाकृतिं वाचः सत्यमशीमहि।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ॥10॥
कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभव कर्दम।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥11॥
आपः सृजन्तु स्निग्धा निचिक्लीतं वस मे गृहे।
निचदेवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥12॥
आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंङ्गला पद्ममालिनीम्।
चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदोम आवह ॥13॥
आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णं हेममालिनीम्।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदोम आवह ॥14॥
तांम आवह जातवेदोलक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यांहिरण्यं प्रभूतंगावोदास्योश्वान्विंदेयंपुरुषानहम् ॥15॥

समर्पण एवं फलस्तुति

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम्।
सूक्तं पञ्चदशर्चञ्च श्रीकामः सततञ्जपेत्।
पद्मानने पद्मऊरू पद्माक्षिं पद्मसंभवे।
तन्में भजसिपद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम्।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri
अश्वदायै गोदायै धनदायै महाधने ।
धनं मे लभतां देवि सर्वकामांश्च देहि मे ।
पद्मानने पद्मविपद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिये विष्णुमनोनुकूले त्वत्पादपद्मंमयिसंमिधस्व ।
पुत्रपौत्रं धनं धान्यं हस्त्यश्वादिगवेरथम् ।
प्रजानां भवसी माता आयुष्मंतं करोतु मे ।
धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्योधनंवसुः ।
धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणंधनमस्तु मे ।
वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा ।
सोमं धनस्यसोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः ।
न क्रोधो नच मात्सर्य न लोभो नाशुभामतिः ।
भवंति कृतपुण्यानां भक्तानां श्रीसूक्तं जपेत् ।
सरसिजनिलये सरोजहस्ते धवलतरांशुकगंधमाल्यशोभे ।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ।
विष्णुपत्नीं क्षमां देविं माधवीं माधवप्रियाम् ।
लक्ष्मीं प्रियसखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम् ।
महालक्ष्मी च विद्महे विष्णुपत्नी च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ।
श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधाच्छोभमानं महीयते ।
धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥
॥इति ऋग्वेदोक्तं श्रीसूक्तं समाप्तम् ॥

वेदोक्त लक्ष्मीसूक्तम्

पद्मानने पद्मविपद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि ।
विश्वप्रिये विश्वमनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व ॥ 1 ॥
पद्मानने पद्मऊरू पद्माक्षी पद्मसम्भवे ।
तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम् ॥ 2 ॥
अश्वदायि गोदायि धनदायि महाधने ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

धनं मे जुषतां देवि सर्वकामांश्च देहि मे ॥ 3 ॥
पुत्रपौत्रं धनं धान्यं हस्त्यश्वादिगवेरथम् ।
प्रजानां भवसि माता आयुष्मन्तं करोतु मे ॥ 4 ॥
धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्ये धनं वसुः ।
धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणो धनमस्तु मे ॥ 5 ॥
वैनतेय सोमं पिब सोम पिबतु वृत्रहा ।
सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः ॥ 6 ॥
न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभामतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां श्रीसूक्तं जपेत् ॥ 7 ॥
सरसिजनिलयें सरोजहस्ते धवलतरांशुकगन्धमाल्यशोभे ।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम् ॥ 8 ॥
विष्णुपत्नीं क्षमां देवीं माधवीं माधवप्रियाम् ।
लक्ष्मीं प्रियसखीं देवीं नमाम्यच्युतवल्लभाम् ॥ 9 ॥
महालक्ष्म्यै च विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि ।
तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ 10 ॥
आनन्दः कर्दमः श्रीदश्चिक्लीत इति विश्रुताः ।
ऋषयश्च श्रियः पुत्रा मयि श्रीर्देवि देवता ॥ 11 ॥
ऋणरोगादिदारिद्र्य पापञ्च अपमृत्यवः ।
भयशोकमनस्तापा नश्यन्तु मम सर्वदा ॥ 12 ॥
श्रीवर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधाच्छोभमानं महीयते ।
धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥ 13 ॥

॥इति ऋग्वेदोक्तं लक्ष्मीसूक्तं समाप्तम् ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लक्ष्मी-प्राप्ति का साधनः कनकधारा स्तोत्र

कनकधारा स्तोत्र अत्यन्त दुर्लभ परंतु लक्ष्मी प्राप्ति के लिए रामबाण प्रयोग है तथा अपने आप में अचूक, स्वयं सिद्ध ऐश्वर्य प्रदान करने में सर्वथा समर्थ है। इस स्तोत्र पाठ का प्रयोग दरिद्रता का नाश करता है। यह स्वर्ण वर्षा करने वाला स्तोत्र कहा गया है। रंक को राजा बनाने की सामर्थ्य है इसमें । निकम्मा व गरीब व्यक्ति एकाएक धनोपार्जन करने लगता है।

यह अद्‌भुत स्तोत्र तुरंत फलदायी है परंतु इस स्तोत्र पाठ के सामने 'कनकधारा यंत्र' ेगना चाहिए जिसकी प्राण-प्रतिष्ठा उतनी ही दुर्लभ व दुःसाध्य है। जटिल प्रक्रिया के कारण बहुत कम लोग इसे सिद्ध कर पाते हैं। सिद्ध होने पर यह कनकधारा यंत्र व्यापार वृद्धि, दारिद्रय नाश करने व ऐश्वर्य प्रदान करने में आश्चर्यजनक रूप से काम करता है।

प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रंथ **'शंकर दिग्वजय'** के चौथे सर्ग में इस घटना का उल्लेख है। एक बार भगवत्पाद आचार्य शंकर भिक्षाटन के लिए निकले तथा घूमते-घूमते एक सद्‌गृहस्थ के द्वार पर अचानक अलख जगाई **'भिक्षां देहि'**। संयोग से वह एक विद्वान् विनम्र किंतु अत्यंत निर्धन ब्राह्मण का घर था। अपने द्वार पर एक अत्यंत तेजस्वी अतिथि को देखकर, संकोच के मारे घर स्वामिनी लाज में गढ़ गई क्योंकि भिक्षा में देने के लिए घर में एक दाना तक नहीं था। संकल्प-विकल्प में उलझी अतिथि प्रिय, पतिव्रता स्त्री को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने दुर्दिन को देखकर रोना आ गया तथा अश्रुपूर्ण नेत्रों से घर के कोने में पड़े कुछ सूखें आंवलों को लेकर, अत्यंत संकोच के साथ दिव्य तपस्वी को भेंट करने लगी। साक्षात् शंकर के रूप में विचरण करने वाले, ओढ़रवरदानी, को अबला नारी की दीनावस्था पर तरस आ गया। करुणासागर आचार्यपाद का हृदय दया व करुणा से भर आया और तत्काल ऐश्वर्य व सुख की अधिष्ठात्री, करुणामयी वात्सल्यमयी, विष्णुपत्नी, मातेश्वीर महालक्ष्मी को संबोधित करते हुए, कोमलकांत व करुणापूर्ण पद्यावली से एक स्तोत्र की रचना की। कनकधारा नामक उस स्तोत्र की अनायास रचना से, भगवती लक्ष्मी अपने त्रिभुवन मोहन स्वरूप में आचार्य श्री के सम्मुख प्रकट हो गई तथा अत्यंत मधुर व कोमलवाणी में विस्मय से पूछा—'आचार्यप्रवर ! अकारण मेरा स्मरण किसलिए ?' आचार्यशंकर ने ब्राह्मण परिवार की दरिद्र अवस्था को लक्षित करते हुए, उसे संपन्न, सबल एवं धनवान बनाने की प्रार्थना की। भगवती लक्ष्मी ने प्रत्युत्तर दिया, 'इस गृहस्थ के पूर्व जन्म में अर्जित पाप के कारण, इस जन्म में इसका लक्ष्मी-संपन्न होना संभव नहीं है, इसके प्रारब्ध में धन ही नहीं है।' आचार्य शंकर ने करुणा विगलित कण्ठ से कहा—'क्या मुझ याचक के द्वारा इस स्तोत्र पाठ के बाद भी संभव नहीं ?' भगवती लक्ष्मी तत्काल अंतर्ध्यान हो गई। इतिहास साक्षी है कि उसी समय उस दरिद्र ब्राह्मण का दुर्दैव नष्ट हुआ, कनक की वर्षा होने के कारण इस स्तोत्र का नाम 'कनकधारा स्तोत्र' के नाम से कालान्तर में विश्व प्रसिद्ध हो गया।

कनकधारा स्तोत्र

वन्दे वन्दारु-मन्दार-मिन्दिरानन्द कन्दलम्।
अमन्दानन्द-सन्दोह बन्धुरं सिन्धुराननम्॥
अंगं हरै पुलकभूषणामाश्रयन्ती
भृगांगनेव मुकुलाभरणं तमालम्।
अंगीकृता-ऽखिल-विभूतिरपाङ्गलीला
मांगल्यदाऽस्तु मम मंगलदेवतायाः ॥ 1 ॥
मुग्धा मुहुर्विदधती वदन मुरारेः
प्रेमत्रपा-प्रणिहितानि गताऽऽगतानि।
माला-दृशो र्मधुकरीव महोत्पले या
सा मे श्रियं दिशतु सागर-सम्भवायाः ॥ 2 ॥
विश्वामरेन्द्र-पदविभ्रमदानदक्ष
मानन्द-हेतुरधिकं मुर-विद्विषोऽपि।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईषन्निषीदतु मयि क्षणमीक्षणार्ध-
मिन्दीवरोदर-सहोदर-मिन्दिरायाः ॥ 3 ॥
आमीलिताक्ष-मधिगम्य मुदा-मुकुन्द-
मानन्द कन्दमनिमेष मनङ्ग तन्त्रम्।
आकेकर स्थित कनीनिकपक्ष्मनेत्रं
भूत्यै भवेन्मम भुजंग शयागंनायाः ॥ 4 ॥
बाह्वन्तरे मुरजितः श्रितकौस्तुभे या
हारावलीव हरिनीलमयी विभाति।
कामप्रदा भगवतोऽपि कटाक्षमाला
कल्याणमावहतु मे कमलालयायाः ॥ 5 ॥
कालाम्बुदलि-ललितोरसि कैटभारे-
र्धाराधरे स्फुरति या तडिदङ्गनेव।
मातुः समस्तजगतां महनीयमूर्ति-
र्भद्राणि मे दिशतु भार्गव-नन्दनायाः ॥ 6 ॥
प्राप्तं पदं प्रथमतः किल यत् प्रभावात्
मांगल्य भाजि मधु-मा मन्मथेन ॥
मयापतेत् तदिह मन्थर-मीक्षणार्धम्।
मन्दालसं च मकरालय-कन्यकायाः ॥ 7 ॥
दद्याद् दयानुपवनो द्रविणाम्बुधारा-
मस्मीन्न किंचन विहंगशिशौ विषण्णे।
दुष्कर्म-धर्ममपनीय चिराय दूरं
नारायण-प्रणयिनी नयनाम्बुवाहः ॥ 8 ॥
इष्टा-विशिष्ट मतयोऽपि यया दयार्द्र-
दृष्ट्यां त्रिविष्टपपदं सुलभं भजन्ते।
दृष्टिः प्रहृष्ट-कमलोदर-दीप्तिरिष्टां
पुष्टिं कृषीष्ट मम पुष्कर-विष्टरायाः ॥ 9 ॥
गीर्देवतेति गरुड़ध्वज-सुन्दरीति।
शाकम्भरीति शशिशेखर-वल्लभेति।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सृष्टि स्थिति-प्रलय केलिषु संस्थिता ये
तस्यै नमस्त्रिभुवनैक गुरोस्तरुरूण्यै ॥ 10 ॥
श्रुत्यै नमोऽस्तु शुभकर्म फलप्रसूत्यै
रत्यै नमोऽस्तु रमणीय गुणाश्रयायै ।
शक्त्यै नमोऽस्तु शतपत्र निकेतनायै ।
पुष्टयै नमोऽस्तु पुरुषोत्तम वल्लभायै ॥ 11 ॥
नमोऽस्तु नालीक-निभाननायै
नमोऽस्तु दुग्धोदधि जन्मभूत्यै ।
नमोऽस्तु सोमामृत सोदरायै
नमोऽस्तु नारायण वल्लभायै ॥ 12 ॥
नमोऽस्तु हेमाम्बुज-पीठिकायै
नमोऽस्तु भूमण्डल नायिकायै
नमोऽस्तु देवादि-दयापरायै
नमोऽस्तु शांर्ङ्गायुध-वल्लभायै ॥ 13 ॥
नमोऽस्तु दैव्ये भृगुनन्दनायै
नमोऽस्तु विष्णुरुरसि संस्थितायै ।
नमोऽस्तु लक्ष्म्यै कमलालयायै
नमोऽस्तु दामोदरवल्लभायै ॥ 14 ॥
नमोऽस्तु कान्त्यै कमलेक्षणायै
नमोऽस्तु भूत्यै भूवनप्रसूत्यै
नमोऽस्तु देवादिभिरर्चितायै
नमोऽस्तु नन्दात्मज-वल्लभायै ॥ 15 ॥
सम्पत्कराणि सकलेन्द्रिय-नन्दनानि
साम्राज्य-दान-निरतानि सरोरुहाक्षि ।
त्वद् वन्दनानि दुरिताहरणोद्यतानि
मामेव मातरनिशं कलयन्तु मान्ये ॥ 16 ॥
यत्कटाक्ष-समुपासना विधिः
सेवकस्य सकलार्थसम्पदः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सन्तनोति वचनांगमानसैः
त्वां मुरारि हृदयेश्वरीं भजे ।। 17 ।।
सरसिजनयने ! सरोजहस्ते !
धवलतमांशुक-गन्ध माल्यशोभे !
भगवति हरिवल्लभे ! मनोज्ञे !
त्रिभुवन भूतिकरि ! प्रसीद मह्यम् ।। 18 ।।
दिग्धस्तिभिः कनक-कुम्भ-मुखावसृष्ट-
स्वर्वाहिनी विमल-चारुजल-प्लुताङ्गीम् ।
प्रातर्नमामि जगतां जननीमशेष-
लोकाधिनाथ-गृहणीममृताब्धि-पुत्रीम् ।। 19 ।।
कमले ! कमलाक्षवल्लभे !
त्वं करुणापूर तरंगितैरपांङ्गैः ।
अवलोकयं-अकिंचनानां
प्रथमं पात्रमकृत्रिमं दयायाः ।। 20 ।।
स्तुवन्ति ये स्तुतिभिरमूभिरन्वहं
त्रयीमयीं त्रिभुवन मातरं रमाम् ।
गुणाधिका गुरुतरभाग्यभाजिनो
भवन्ति ते भुवि बुधभाविताशयाः ।। 21 ।।
सुवर्णधारा स्तोत्रं यच्छंकराचार्य निर्मितम् ।
त्रिसंन्ध्यं यः पठेन्नित्यं स कुबेरसमो भवेत् ।। 22 ।।

(इति श्रीमच्छंकराचार्य विरचितं कनकधारास्तोत्रं समाप्तम्)

कनकधारा स्तोत्र—

जिस प्रकार भ्रमरी अर्धविकसित पुष्पों से अलंकृत तमालवृक्ष का आश्रय ग्रहण करती है, उसी प्रकार भगवान् श्रीहरि (विष्णु) के रोमांच से शोभायमान लक्ष्मी की कटाक्ष-लीला श्री-अंगों पर अनवरत पड़ती रहती है और जिसमें समस्त ऐश्वर्य-धन-संपत्ति का निवास है, वह समस्त मंगलों की अधिष्ठात्री देवी महालक्ष्मी की कटाक्षलीला मेरे लिए भी मंगलदायिनी हो ।। 1 ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिस प्रकार भ्रमरी कमलदल पर मंडराती (बार-बार आती-जाती) रहती है, उसी प्रकार भगवान् मुरारि के मुखकमल की ओर प्रेम सहित जाकर और लज्जा से वापस आकर समुद-कन्या लक्ष्मी की मनोहर मुग्ध दृष्टिमाला, मुझे अतुल श्री-ऐश्वर्य प्रदान करें ॥2॥

जो समस्त देवों के स्वामी इन्द्रापद का वैभव-विलास (सुखोपभाग) देने में समर्थ है तथा मुर नामक दैत्य के शत्रु भगवान् श्रीहरि को भी अत्यंत आनन्द करने वाली है, एवं नील कमल जिस लक्ष्मी का सहोदर भ्राता है,ऐसी लक्ष्मी के अधखुले नेत्रों की दृष्टि किंचित क्षण के लिए मुझ पर थोड़ी अवश्य पड़े ॥3॥

जिसकी पुतली एवं भौहें (बरौनियां) काम के वशीभूत हों अर्धविकसित एकटक नयनों से देखने वाले आनन्दकंद सच्चिदानन्द भगवान् मुकुंद को अपने सन्निकट पाकर किंचित तिरछी हो जाती है—ऐसे शेषशायी भगवान् विष्णु की अर्द्धांगिनी श्री लक्ष्मीजी के नेत्र हमें प्रभूत धन-संपात्ति-प्रदायक हों ॥4॥

जिस भगवान् मधुसूदन के कौस्तुभमणि से विभूषित वक्षस्थल में इन्द्रनीलमयी हारावली की तरह जो सुशोभित होती है तथा उन (भगवान्) के चित्त में काम (स्नेह) संचारिणी, कमल-कुंजनिवासिनी लक्ष्मीजी की कृपा कटाक्षमाला मेरा भी मंगल करें ॥5॥

जिस प्रकार मेघों की घनघोर घटा में बिजली चमकती है, उसी प्रकार कैटभ दैत्य के शत्रु श्रीविष्णु भगवान् के काल मेघपंक्ति की तरह मनोहर वक्षःस्थल पर आप विद्युत के समान दैदीप्यमान होती हैं तथा जो समस्त लोकों की माता, भार्गवपुत्रा भगवती श्रीलक्ष्मी की पूजनीय मूर्ति है वह मुझे कल्याण प्रदान करे ॥6॥

श्री विष्णु भगवान् की कान्ता, कमल-नेत्र वाली, त्रैलोक्य को उत्पन्न करने वाली, देवताओं द्वारा पूजित नन्दात्मज की वल्लभा ऐसी श्रीलक्ष्मी देवी को मेरा नमस्कार है। ॥15॥

हे कमलाक्षी ! आपके चरणों में की हुई स्तुति ऐश्वर्यदायिनी और समस्त इन्द्रियों को आनन्दकारिणी है तथा साम्राज्य (पूर्णाधिकार देने में सर्वथा समर्थ) एवं संपूर्ण पापों को नष्ट करने में उद्यत है। हे मापाः मुझे आपके चरण-कमलों की वंदना करने का सर्वदा शुभ अवसर मिलता रहे। ॥16॥

जिनके कृपा-कटाक्ष (तिरछी-चितवन) के लिए की गई उपासना (आराधना) सेवक (उपासक) के लिए समस्त मनोरथ और संपत्ति का विस्तार करती है, उस भगवान् मुरारी की हृदयेश्वरी लक्ष्मी का, मैं मन, वचन और शरीर से भजन करता हूं। ॥17॥

हे भगवती भगवान् हरि की प्रिय पत्नी ! आप कमल-कुंज में रहने वाली हैं, आपके

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चरण-कमलों में नीलकमल शोभायमान है। आप श्वेत वस्त्र तथा गंध, माला आदि से सुशोभित हैं। आपकी छवि सुंदर तथा अद्वितीय है। हे त्रिभुवन को वैभव प्रदान करने वाली! आप मेरे ऊपर भी प्रसन्न होइए। ॥18॥

दिग्गजजनों के द्वारा कनककुम्भ (सुवर्णकलश) के मुख से पतित, आकाश गङ्गा के स्वच्छ, मनोहर जल से जिस (भगवान्) के श्री अंग का अभिषेक (स्नान) होता है, उन समस्त लोकों के अधीश्वर भगवान् विष्णु पत्नी, क्षीरसागर की पुत्री,जगन्माता भगवती लक्ष्मी को मैं प्रातःकाल का नमस्कार करता हूं। ॥19॥

हे कमलनयन भगवान् विष्णुप्रिया लक्ष्मी! मैं दीनहीन मनुष्यों का अग्रगण्य हूं, इसलिए आपकी कृपा का स्वभावसिद्ध पात्र हूं। आप उमड़ती हुई करुणा की बाढ़ की तरल-तरंगों के सदृश कटाक्षों द्वारा मेरी दिशा में भी अवलोकन कीजिए। ॥20॥

जो मनुष्य इन स्तोत्रों के द्वारा नित्यप्रति वेदत्रयी स्वरूपा, तीनों लोकों की माता, भगवती रमा (लक्ष्मी) का स्तोत्र-पाठ करते हैं, वे लोग इस पृथ्वी पर महागुणी और सौभाग्यशाली होते हैं एवं विद्वदजन भी उनके मनोगत भाव को समझने के लिए विशेष इच्छुक रहते हैं। ॥21॥

श्री भगवान् आद्य शंकराचार्य विरचित इस सुवर्ण कनकधारा स्तोत्र का पाठ जो मनुष्य तीनों काल (प्रातः, माध्याह्न, सांय) में करते हैं, वे लोग कुबेर के समान धनी हो जाते हैं। ॥22॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आत्म-रक्षा हेतु देवी कवच

भूत प्रेत, पिशाच राक्षस, ब्रह्मराक्षस, अत्यधिक हठी आत्मा, खवीस अथवा जिन्न इत्यादि से बचने के लिए देवी-कवच का पाठ किया जाता है । यह पाठ अमोघ है, इसका फल शीघ्र मिलता है । साधक लोग इस पाठ द्वारा झाड़ा भी देते हैं । इससे बुरी आत्मायें तत्काल लक्षित प्राणी के शरीर को छोड़ देती हैं । कुछ विद्यावान इसको 'ब्रह्मकवच' भी कहते हैं क्योंकि यह कवच साक्षात ब्रह्मा जी के मुख द्वारा कहा गया है । प्रबुद्ध पाठकों की जानकारी हेतु यह दुर्लभ एवं परम गोपनीय कवच यहां संस्कृत हिन्दी दोनों भाषाओं में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

अथ देव्याः कवचम्

ॐ अस्य श्रीचंडीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, चामुंडा देवता, अङ्गन्यासोक्तमातरो बीजम, दिग्बंधदेवतास्तत्त्वम, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थं सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

ॐ नमश्चंडिकायै ॥

मार्कण्डेय उवाच

ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ।
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ 1 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम् ।
देव्यास्तु कवचं पण्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ 2 ॥
प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी ।
तृतीयं चंद्रघटेति कूष्मांडेति चतुर्थकम् ॥ 3 ॥
पञ्चमं स्कंदमातेति षष्ठं कात्यायनीति च ।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ॥ 4 ॥
नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः ।
उक्तांयेतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥5 ॥

ॐ चण्डिका देवी को नमस्कार है ।

मार्कण्डेयजीने कहा—पितामह ! जो इस संसार में परमगोपनीय तथा मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करनेवाला है और जो अबतक आपने दूसरे किसी के सामने प्रकट नहीं किया हो, ऐसा कोई साधन मुझे बताइए ॥ 1 ॥

ब्रह्माजी बोले—ब्रह्मन ! ऐसा साधन तो एक देवी का कवच ही है, जो गोपनीय से भी परम गोपनीय, पवित्र तथा सम्पूर्ण प्राणियों का उपकार करनेवाला है । महामुने ! उसे श्रवण करो ॥2 ॥ देवीकी नौ मूर्तियाँ हैं, जिन्हें 'नवदुर्गा' कहते हैं । उनके पृथक्-पृथक् नाम बतलाए जाते हैं । प्रथम नाम शैलपुत्री[1] है । दूसरी मूर्ति का नाम ब्रह्मचारिणी[2] है । तीसरा स्वरूप चन्द्रघण्टा[3] के नाम से प्रसिद्ध है । चौथी मूर्तिको कूष्माण्डा[4] कहते हैं । पाँचवीं दुर्गा का नाम स्कन्दमाता[5] है । देवी के छठे रूप को कात्यायनी[6] कहते हैं । सातवाँ कालरात्रि[7] और आठवाँ स्वरूप महागौरी[8] के नाम से प्रसिद्ध है ।

नवीं दुर्गा का नाम 'सिद्धिदात्री'[9] है । ये सब नाम सर्वज्ञ महात्मा वेद भगवान के द्वारा ही प्रतिपादित हुए हैं ॥ 3—5 ॥

---

1. गिरिराज हिमालय की पुत्री 'पार्वतीदेवी' यद्यपि सबकी अधीश्वरी हैं, तथापि हिमालय की तपस्या और प्रार्थना से प्रसन्न हो कृपापूर्वक उनकी पुत्री के रूप में प्रकट हुई । यह बात पुराणों में प्रसिद्ध है । 2. ब्रह्म चारयितुं शीलं यस्याः सा ब्रह्मचारिणी— सच्चिदानंदमय ब्रह्मस्वरूप की प्राप्ति कराना जिनका स्वभाव हो, वे 'ब्रह्मचारिणी' हैं । 3. चंद्रःघंटायां यस्याःसा—आह्लादकारी चंद्रमा जिसे घंटा में स्थित हों, उस देवी का नाम 'चंद्रघंटा' है । 4. कुत्सितः उष्मा कूष्मा त्रिविधतापयुतः संसारः स अंडे मांसपेश्यामुदररूपायां यस्याः सा कूष्मांडा । अर्थात त्रिविधतापयुक्त संसार जिनके उदर में स्थित है, वे भगवती 'कूष्मांडा' कहलाती हैं । 5. छांदोग्य श्रुति के अनुसार भगवती की शक्ति से उत्पन्न हुए सनत्कुमार का नाम स्कंद है । उनकी माता होने से वे 'स्कंदमाता' कहलाती हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे।
विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ॥ 6 ॥
न तेषां जायते किंचिदशुभं रणसंकटे।
नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं न हि ॥ 7 ॥
यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते।
ये त्वां स्मरन्ति देवेशि रक्षसे तांन संशयः ॥ ८ ॥
प्रेतसंस्था तु चामुंडा वाराही महिषासना।
ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरूडासना ॥ 9 ॥
माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना।
लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया ॥ 10 ॥
श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना।
ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरणभूषिता ॥ 11 ॥

जो मनुष्य अग्नि में जल रहे हों, रणभूमि में शत्रुओं से घिर गये हों, विषम संकट में फंस गये हों तथा इस प्रकार भय से आतुर होकर जो भगवती दुर्गा की शरण में प्राप्त हुए हों, उनका कभी कोई अमङ्गल नहीं होता। युद्ध के समय संकट में पड़ने पर भी उनके ऊपर कोई विपत्ति नहीं दिखाई देती। उन्हें शोक, दुःख और भय की प्राप्ति नहीं होती ॥ 6-7 ॥ जिन्होंने भक्तिपूर्वक देवी का स्मरण किया है, निश्चय ही अभ्युदय होता है। देवेश्वरि ! जो तुम्हारा चिंतन करते हैं, उनकी तुम निःसंदेह रक्षा करती हो ॥ ८ ॥ चामुंडादेवी प्रेत पर आरूढ़ होती हैं। वाराही भैंस पर सवारी करती हैं। ऐंद्री का वाहन ऐरावत हाथी है। वैष्णवी देवी गरुड़ पर ही आसन जमाती हैं ॥ 9 ॥ माहेश्वरी वृषभ पर आरूढ़ होती हैं। कौमारी का वाहन मयूर है। भगवान विष्णु की प्रियतमा लक्ष्मी देवी कमल के आसन पर विराजमान हैं और हाथों में कमल धारण किए हुए हैं ॥ 10 ॥ वृषभ पर आरूढ़ ईश्वरीदेवी ने श्वेत रूप धारण कर रखा है। ब्राह्मीदेवी हंस पर बैठी हुई हैं और सब प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं ॥ 11 ॥

---

6. देवताओं का कार्य सिद्ध करने के लिए देवी महर्षि कात्यायन के आश्रम पर प्रकट हुई और महर्षि ने उन्हें अपनी कन्या माना,इसलिए 'कात्यायनी' नामसे उनकी प्रसिद्धि हुई। 7. सबको मारनेवाले कालकी भी रात्रि (विनाशिका) होने से उनका नाम 'कालरात्रि' है। ८. इन्होंने तपस्या द्वारा महान गौरवर्ण प्राप्त किया था, अतः 'महागौरी' कहलाई। 9. सिद्धि अर्थात मोक्ष को देनेवाली होने से उनका नाम 'सिद्धिदात्री' है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः ।
नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः ॥ 12 ॥
दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः ।
शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ॥ 13 ॥
खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च ।
कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥ 14 ॥
दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च ।
धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ॥ 15 ॥
नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे ।
महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ॥ 16 ॥
त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनि ।
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ॥ 17 ॥
दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी ।
प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां मृगवाहिनी ॥ 18 ॥

इस प्रकार ये सभी माताएं सब प्रकार की योगशक्तियों से संपन्न हैं । इनके सिवा और भी बहुत-सी देवियां हैं, जो अनेक प्रकार के आभूषणों की शोभा से युक्त तथा नाना प्रकार के रत्नों से सुशोभित हैं ॥ 12 ॥

ये सम्पूर्ण देवियां क्रोध में भरी हुई हैं और भक्तों की रक्षा के लिए रथ पर बैठी दिखायी देती हैं । शङ्ख, चक्र, गदा, शक्ति, हल और मुसल, खेटक और तोमर, पशु तथा पाश, कुंत और त्रिशूल एवं उत्तम शार्ङ्गधनुष आदि अस्त्र-शस्त्र अपने हाथों में धारण करती हैं । दैत्यों के शरीर का नाश करना, भक्तों को अभय दान देना और देवताओं का कल्याण करना— यही उनके शस्त्र-धारण का उद्देश्य है ॥ 13-15 ॥

[कवच आरंभ करने के पहले इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिए—] महान् रौद्ररूप, अत्यंत घोर पराक्रम, महान बल और महान् उत्साह वाली देवी ! तुम महान् भय का नाश करने वाली हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ 16 ॥ तुम्हारी ओर देखना भी कठिन है । शत्रुओं का भय बढ़ाने वाली जगदम्बिके ! मेरी रक्षा करो ।

पूर्व दिशा में ऐंद्री (इंद्रशक्ति) मेरी रक्षा करे । अग्निकोण में अग्निशक्ति, दक्षिण दिशा में वाराही तथा नैर्ऋत्यकोण में खड्गधारिणी मेरी रक्षा करे । पश्चिम दिशा में वारुणी और वायव्यकोण में मृग पर सवारी करने वाली देवी मेरी रक्षा करे ॥ 17-18 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूलधारिणी।
ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद वैष्णवी तथा ॥ 19 ॥
एवं दश दिशो रक्षेच्चामुंडा शववाहना।
जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ॥ 20 ॥
अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता।
शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ॥ 21 ॥
मालाधरी ललाटे च भ्रुवो रक्षेद यशस्विनी।
त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघंटा च नासिके ॥ 22 ॥
शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी।
कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शाङ्करी ॥ 23 ॥
नासिकायां सुगंधा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका।
अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती ॥ 24 ॥
दन्तान रक्षतु कौमारी कंठदेशे तु चंडिका।
घंटिकं चित्रघंटा च महामाया च तालुके ॥ 25 ॥
कामाक्षी चिबुकं रक्षेद वाचं मे सर्वमङ्गला।
ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ॥ 26 ॥

उत्तर दिशा में कौमारी और ईशानकोण में शूलधारिणी देवी रक्षा करे। ब्रह्माणि ! तुम ऊपर की ओर से मेरी रक्षा करो और वैष्णवी देवी नीचे की ओर से मेरी रक्षा करे ॥19 ॥ इसी प्रकार शव को अपना वाहन बनाने वाली चामुंडा देवी दसों दिशाओं में मेरी रक्षा करे। जया आगे से और विजया पीछे की ओर से मेरी रक्षा करे ॥ 20 ॥

वाम भाग में अजिता और दक्षिण-भाग में अपराजिता रक्षा करे। उद्योतिनी शिखा की रक्षा करे। उमा मेरे मस्तक पर विराजमान होकर रक्षा करे ॥ 21 ॥ ललाट में मालाधरी रक्षा करे और यशस्विनीदेवी मेरी भौंहों का संरक्षण करे। भौंहों के मध्य भाग में त्रिनेत्रा और नथुनों की यमघंटादेवी रक्षा करे ॥ 22 ॥ दोनों नेत्रों के मध्य भाग में शङ्खिनी और कानों में द्वारवासिनी रक्षा करे कालिकादेवी कपोलों की तथा भगवती शांकरी कानों में मूल भाग की रक्षा करे ॥ 23 ॥ नासिका में सुगंधा और ऊपर के होंठ में चर्चिकादेवी रक्षा करे। नीचे के होंठ में अमृतकला तथा जिह्वा में सरस्वती रक्षा करे ॥ 24 ॥ कौमारी दांतों की और चंडिका कंठ प्रदेश की रक्षा करे। चित्रघंटा गले की घांटी की और महामाया तालू में रहकर रक्षा करे ॥ 25 ॥ कामाक्षी ठोढ़ी की और सर्वमङ्गला मेरी वाणी की रक्षा करे। भद्रकाली ग्रीवा में और धनुर्धरी पृष्ठवंश (मेरुदंड) में रहकर रक्षा करे ॥ 26 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नीलग्रीवा बहिःकंठे नलिकां नलकूबरी।
स्कंधयोः खड्गिनी रक्षेद बाहू मे वज्रधारिणी ॥ 27 ॥
हस्तयौर्दंडिनी रक्षेदंबिका चाङ्गुलीषु च।
नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत्कुक्षौ रक्षेत्कुलेश्वरी ॥ 28 ॥
स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनःशोकविनाशिनी।
हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी ॥ 29 ॥
नाभौ च कामिनी रक्षेद गुह्यं गुह्येश्वरी तथा।
पूतना कामिका मेढ्रं गुदे महिषवाहिनी ॥ 30 ॥
कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विंध्यवासिनी।
जङ्घे महाबला रक्षेत्सर्वकामप्रदायिनी ॥ 31 ॥
गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी।
पादाङ्गुलीषु श्री रक्षेत्पादाधस्तलवासिनी ॥ 32 ॥
नखान दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी।
रोमकूपेषु कौवेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ॥ 33 ॥
रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती।
अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ॥ 34 ॥

कंठ के बाहरी भाग में नील ग्रीवा और कंठ की नली में नलकूबरी रक्षा करे। दोनों कंधों में खड्गिनी और मेरी दोनों भुजाओं की वज्रधारिणी रक्षा करे ॥ 27 ॥दोनों हाथों में दंडिनी और अंगुलियों में अंबिका रक्षा करे। शूलेश्वरी नखों की रक्षा करे। कुलेश्वरी कुक्षि (पेट) में रहकर रक्षा करे ॥ 28 ॥ महादेवी दोनों स्तनों की और शोकविनाशिनी देवी मन की रक्षा करे। ललिता देवी हृदय में और शूलधारिणी उदर में रहकर रक्षा करे ॥29 ॥

नाभि में कामिनी और गुह्यभाग की गुह्येश्वरी रक्षा करे। पूतना और कामिका लिङ्ग की और महिषवाहिनी गुदा की रक्षा करे ॥ 30 ॥ भगवती कटिभाग में और विंध्यवासिनी घुटनों की रक्षा करे। सम्पूर्ण कामनाओं को देने वाली महाबला देवी दोनों पिंडलियों की रक्षा करे ॥ 31 ॥ नारसिंही दोनों घुट्टियों की और तैजसी देवी दोनों चरणों के पृष्ठभाग की रक्षा करे। श्रीदेवी पैरों की अङ्गुलियों में और तलवासिनी पैरों के तलुओं में रहकर रक्षा करे ॥ 32 ॥ अपनी दाढ़ों के कारण भयंकर दिखाई देने वाली दंष्ट्राकराली देवी नखों की और ऊर्ध्व केशिनी देवी केशों की रक्षा करे। रोमावलियों के छिद्रों में कौबेरी और त्वचा की वागीश्वरी देवी रक्षा करे ॥ 33 ॥ पार्वती देवी रक्त, मज्जा, वसा, मांस, हड्डी और मेद की रक्षा करे। आंतों की कालरात्रि और पित्त की मुकुटेश्वरी रक्षा करे ॥ 34 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा।
ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसन्धिषु ॥ 35 ॥
शुक्रं ब्रह्माणि मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा।
अहंकारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी ॥ 36 ॥
प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम्।
वज्रहस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ॥ 37 ॥
रसे रूपे च गंधे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी।
सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ॥ 38 ॥
आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी।
यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ॥ 39 ॥
गोत्रमिन्द्राणि मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके।
पुत्रान रक्षेन्महालक्ष्मीभार्यां रक्षतु भैरवी ॥ 40 ॥
पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा।
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता ॥ 41 ॥
रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु।
तत्सर्वं रक्ष में देवि जयंती पापनाशिनी ॥ 42 ॥

मूलाधार आदि कमल केशों में पद्मावती देवी और कफ में चूडामणि देवी स्थित होकर रक्षा करे। नख के तेज की ज्वालामुखी रक्षा करे। जिसका किसी भी अस्त्र से भेदन नहीं हो सकता, वह अभेद्या देवी शरीर की समस्त संधियों में रहकर रक्षा करे ॥35 ॥

ब्रह्माणि ! आप मेरे वीर्य की रक्षा करें। छत्रेश्वरी छाया की तथा धर्मधारिणी देवी मेरे अहंकार, मन और बुद्धि की रक्षा करे ॥ 36 ॥ हाथ में वज्र धारण करने वाली वज्रहस्ता देवी मेरे प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान वायु की रक्षा करे। कल्याण से शोभित होने वाली भगवती कल्याण शोभना मेरे प्राण की रक्षा करे ॥ 37 ॥

रस, रूप, गंध, शब्द और स्पर्श—इन विषयों का अनुभव करते समय योगिनी देवी रक्षा करे तथा सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण की रक्षा सदा नारायणी देवी करे ॥38 ॥ वाराही आयु की रक्षा करे। वैष्णवी धर्म की रक्षा करे तथा चक्रणी (चक्र धारण करने वाली) देवी यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन तथा विद्या की रक्षा करे ॥ 39 ॥ इन्द्राणि ! आप मेरे गोत्र की रक्षा करें। चंडिके ! तुम मेरे पशुओं की रक्षा करो। महालक्ष्मी पुत्रों की रक्षा करे और भैरवी पत्नी की रक्षा करे ॥ 40 ॥ मेरे पथ की सुपथा तथा मार्ग की क्षेमकरी रक्षा करे। राजा के दरबार में महालक्ष्मी रक्षा करे तथा सब ओर व्याप्त रहने वाली विजया देवी सम्पूर्ण भयों से मेरी रक्षा करे ॥ 41 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥ 43 ॥
तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः ।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ।
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान ॥ 44 ॥
निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः ।
त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥ 45 ॥
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ।
यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसंध्यं श्रद्धयान्वितः ॥ 46 ॥
दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः ।
जीवेद् वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ॥ 47 ॥
नश्यन्ति वयाधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः ।
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम ॥ 48 ॥

देवी ! जो स्थान कवच में नहीं कहा गया है, अतएव रक्षा से रहित है, वह सब तुम्हारे द्वारा सुरक्षित हो; क्योंकि तुम विजय शालिनी और पापनाशिनी हो ॥ 42 ॥ यदि अपने शरीर का भला चाहे तो मनुष्य बिना कवच के कहीं एक पग भी न जाए—कवच का पाठ करके ही यात्रा करें । कवच के द्वारा सब ओर से सुरक्षित मनुष्य जहां-जहां भी जाता है, वहां-वहां उसे धन लाभ होता है तथा सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि करने वाली विजय की प्राप्ति होती है । वह जिस-जिस अभीष्ट वस्तु का चिंतन करता है, उस-उसको निश्चय ही प्राप्त कर लेता है, वह पुरुष इस पृथ्वी पर तुलनारहित महान ऐश्वर्य का भागी होता है ॥ 43-44 ॥ कवच से सुरक्षित मनुष्य निर्भय हो जाता है । युद्ध मे उसकी पराजय नहीं होती तथा वह तीनों लोकों में पूजनीय होता है ॥ 45 ॥ देवी का यह कवच देवताओं के लिए भी दुर्लभ है । जो प्रतिदिन नियमपूर्वक तीनों संध्याओं के समय श्रद्धा के साथ इसका पाठ करता है, उसे देवीकला प्राप्त होती है तथा वह तीनों लोकों मे कहीं भी पराजित नहीं होता । इतना ही नहीं, वह अपमृत्यु[1] से रहित हो सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवित रहता है ॥ 46-47 ॥ मकरी, चेचक और कोढ़ आदि उसकी सम्पूर्ण व्याधियां नष्ट हो जाती हैं । कनेर, भांग, अफीम, धतूरे आदि का स्थावर विष, सांप और बिच्छू आदि के काटने से चढ़ा हुआ जङ्गम विष तथा अहिफेन और तेल के संयोग आदि से बनने वाला कृत्रिम विष—ये सभी प्रकार के विष दूर हो जाते हैं, उनका असर नहीं होता ॥ 48 ॥

---

1. अकालमृत्यु अथवा अग्नि, जल, बिजली एवं सर्प आदि से होनेवाली मृत्यु को अपमृत्यु कहते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले।
भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः ॥ 49 ॥
सहजा कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा।
अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः ॥ 50 ॥
ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगंधर्वराक्षसाः।
ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ॥ 51 ॥
नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते।
मानोन्नतिर्भवेद राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम् ॥ 52 ॥
यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले।
जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥ 53 ॥
यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम्।
तावत्तिष्ठाति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रिकी ॥ 54 ॥
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम्।
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः ॥ 55 ॥
लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते॥ ॐ ॥ 56 ॥
॥इति देव्याः कवचं संपूर्णम् ॥

इस पृथ्वी पर मारण-मोहन आदि जितने अभिचारिक प्रयोग होते है तथा इस प्रकार के जितने मंत्र, यंत्र होते हैं, वे सब इस कवच को हृदय में धारण कर लेने पर मनुष्य को देखते ही नष्ट हो जाते हैं। ये ही नहीं, पृथ्वी पर विचरने वाले ग्रामदेवता, आकाशचारी देवविशेष जल के संबंध से प्रकट होने वाले गण, उपेदशमात्र से सिद्ध होने वाले निम्नकोटि के देवता, अपने जन्म के साथ प्रकट होने वाले देवता, कुलदेवता, माला (कंठमाला आदि), डाकिनी, शाकिनी, अंतरिक्ष में विचरने वाली अत्यंत बलवती भयानक डाकिनियां, ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गंधर्व, राक्षस, ब्रह्मराक्षस, बैताल, कूष्मांड और भैरव आदि अनिष्टकारक देवता भी हृदय से कवच धारण किये रहने पर उस मनुष्य को देखते ही भाग जाते हैं। कवचधारी पुरुष को राजा से सम्मान-वृद्धि प्राप्त होती है। यह कवच मनुष्य के तेज की वृद्धि करने वाला और उत्तम है ॥ 49 – 52 ॥ कवच का पाठ करने वाला पुरुष अपनी कीर्ति से विभूषित भूतल पर अपने सुयश के साथ-साथ वृद्धि को प्राप्त होता है। जो पहले कवच का पाठ करके उसके बाद सप्तशती चंडी का पाठ करता है, उसका वन, पर्वत और काननों सहित यह पृथ्वी टिकी रहती है, तब तक यहां पुत्र-पौत्र आदि संतानपरंपरा बनी रहती है ॥ 53-54 ॥ फिर देह का अंत होने पर वह पुरुष भगवती महामाया के प्रसाद से उस नित्य परमपद को प्राप्त होता है, जो देवताओं के लिए दुर्लभ है ॥ 55 ॥ वह सुंदर दिव्य रूप धारण करता है और कल्याणमय शिव के साथ आनंद का भागी होता है ॥ 56 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्री दुर्गा चालीसा

जो साधकगण उपरोक्त देवी कवच अथवा ब्रह्म कवच का संस्कृत में पाठ नहीं कर सकते, उनके लिए श्री दुर्गा चालीसा का पठन पूर्ण फलदायी है। इसके नित्य पाठ से साधक को सब प्रकार के सुख, योग, ऐश्वर्य, पद, प्रतिष्ठा की प्राप्ति होती है। जो लोग शुद्धभावना से एकनिष्ठ होकर इस दुर्गा चालीसा का नित्य पाठ करते हैं, जगदम्बा की कृपा से वे लोग परमपद को प्राप्त हो जाते हैं।

नमो नमो दुर्गे सुख करनी।
नमो नमो अम्बे दुख हरनी ॥ 1 ॥
निरंकार है ज्योति तुम्हारी।
तिहं लोक फैली उजियारी ॥ 2 ॥
शशिलिलाट मुख महा विशाला।
नेत्र लाल भृकुटी विकराला ॥ 3 ॥
रूप मातु को अधिक सुहावै।
दरश करत जन अति सुख पावै ॥ 4 ॥
तुम संसार शक्ति लय कीना।
पालन हेतु अन्न धन दीना ॥ 5 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्नपूर्णा हुई जग पाला।
तुम ही आदि सुन्दरी बाला॥ 6 ॥
प्रलय काल सब नाशनहारी।
तुम गौरी शिव शंकर प्यारी॥ 7 ॥
शिव योगी तुम्हरे गुण गावैं।
ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित ध्यावैं॥ 8 ॥
रूप सरस्वती को तुम धारा।
दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन उबारा॥ 9 ॥
धरा रूप नरसिंह को अम्बा।
परगट भई फाड़ के खम्बा॥ 10 ॥
रक्षा करि प्रहलाद बचायो।
हिरणाकुश को स्वर्ग पठायो॥ 11 ॥
लक्ष्मी रूप धरो जग माहीं।
श्री नारायण अंग समाहीं॥ 12 ॥
क्षीरसिंधु में करत विलासा।
दयासिंधु दीजै मन आसा॥ 13 ॥
हिंगलाज में तुम्हीं भवानी।
महिमा अमित न जात बखानी॥ 14 ॥
मातंगी धूमावति माता।
भुवनैश्वरि बगुला सुख दाता॥ 15 ॥
श्री भैरव तारा जग तारिणि।
छिन्न भाल भव दुःख निवारिणि ॥ 16 ॥
केहरि वाहन सोहे भवानी।
लँगुर वीर चलत अगवानी॥ 17 ॥
कर में खप्पर खड्ग विराजे।
जाको देख काल डर भाजे॥ 18 ॥
सोहे अस्त्र और त्रिशूला।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाते उठत शत्रु हिय शूला ॥ 19 ॥
नगरकोटि में तुम्हीं विराजत।
तिहूं लोक में डंका बाजत ॥ 20 ॥
शुम्भ निशुम्भ दानव तुम मारे।
रक्त बीज शंखन संहारे ॥ 21 ॥
महिषासुर नृप अति अभिमानी।
जेहि अधभार अकुलानी ॥ 22 ॥
रूप कराल कालि को धारा।
सेन सहित तुम तेहि संहारा ॥ 23 ॥
परी भीर संतन पर जब-जब।
भई सहाय मातु तुम तब तब ॥ 24 ॥
अमर पुरी औरो सब लोका।
तब महिमा सब रहै अशोका ॥ 25 ॥
ज्वाला में है ज्योति तुम्हारी।
तुम्हें सदा पूजें नर-नारी ॥ 26 ॥
प्रेम भक्ति से जो जस गावैं।
दुख दारिद्र निकट नहिं आवैं ॥ 27 ॥
ध्यावे तुम्हें जो नर मन लाई।
जन्म मरण ताको छुटि जाई ॥ 28 ॥
जोगी सुर-मुनि कहत पुकारी।
योग न हो बिन शक्ति तुम्हारी ॥ 29 ॥
शंकर आचारज तप कीनो।
काम क्रोध जीति सब लीनो ॥ 30 ॥
निशदिन ध्यान धरो शंकर को।
काहु काल नहिं सुमिरो तुमको ॥ 31 ॥
शक्ति रूप को मरम न पायो।
शक्ति गई तब मन पछितायो ॥ 32 ॥
शरणागत हुई कीर्ति बखानी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जै जै जै जगदम्बा भवानी ॥ 33 ॥
भई प्रसन्न आदि जगदम्बा ।
दई शक्ति नहीं कीन विलम्बा ॥ 34 ॥
मोको मातु कष्ट अति घेरो ।
तुम बिन कौन हरे दुख मेरो ॥ 35 ॥
आशा तृष्णा निपट सतावे ।
मोह मदादिक सब बिलन शांवे ॥ 36 ॥
शत्रु नाश कीजै महारानी ।
सुमरौं इकचित तुम्हें भवानी ॥ 37 ॥
करो कृपा हे मातु दयाला ।
ऋद्धि-सिद्धि दे करहु निहाला ॥ 38 ॥
जब लगि जियौ दयां फल पाउं ।
तुम्हरो जस मैं सदा सुनाउँ ॥ 39 ॥
दुर्गा चालीसा जो कोई गावें ।
सब सुख भोग परमपद पावें ॥ 40 ॥
भक्त को शरण निज जानी ।
करहु कृपा जगदम्बा भवानी ॥ 41 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संतानगोपाल साधना

प्रयोग प्रसिद्ध है कि जिनके संतान नहीं होती है, वे अपने घरों में बालकृष्ण (बालमुकुन्द) की मूर्ति स्थापित करते हैं तथा उनके सामने संतानगोपाल स्तोत्र का पाठ करते हैं। संतानगोपाल स्तोत्र के 1008 या दस हजार आठ पाठ करके उनके दक्षांश का हवन किया जाता है। इसे कुछ लोग 'पुत्रेष्टि यज्ञ' भी कहते हैं। पुत्रेष्टि यज्ञ से निसंदेह पुत्र-संतान की प्राप्ति होती है। ऐसी मान्यता है कि साधक के पूर्व जन्मोपार्जित पाप कट जाते हैं और स्वयं भगवान का तत्तुल्य शुद्ध आत्मा साधक के घर-परिवार में जन्म लेती है।

संतानगोपाल स्तोत्रम्

श्रीशङ्कमलपत्राक्षं देवकीनन्दनं हरिम्।
सुतसम्प्राप्तये कृष्णं नमामि मधुसूदनम्॥ 1॥
नमाम्यहं वासुदेवं सुतसम्प्राप्तये हरिम्।
यशोदाङ्कगतं बालं गोपालं नन्दनन्दनम्॥ 2॥
अहन्तु पुत्रलाभाय गोविंदं मुनिवन्दितम्।
नमाम्यहं वासुदेवं देवकीनन्दनं सदा॥ 3॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गोपालं डिम्भकं वन्दे कमलापतिमच्युतम्।
पुत्रसम्प्राप्तये कृष्णं नमामि यदुपुङ्गवम्॥ 4॥
पुत्रकामेष्टिफलदं कञ्जाक्षं कमलापतिम्।
देवकीनन्दनं वन्दे सुतसम्प्राप्तये त्वहम्॥ 5॥
पद्मापते पद्मनेत्र पद्मनाभ जनार्दन।
देहि मे तनयं श्रीश वासुदेव जगत्पते॥ 6॥
यशोदाङ्कगतं बालं गोविन्दं मुनिवन्दितम्।
अहञ्च पुत्रलाभाय नमामि श्रीशमच्युतम्॥ 7॥
भूतकृद भूतभृद्भाव भूतात्मन् भूतभावन।
गोविन्द मे सुतं देहि नमामि त्वां जनार्दन॥ 8॥
भक्ताकामद गोविन्द भक्तं रक्ष शुभप्रद।
देहि मे तनयं कृष्ण रुक्मिणीवल्लभ प्रभो॥ 9॥
रुक्मिणीनाथ सर्वेश देहि मे तनयं सदा।
भक्तमन्दार पद्माक्ष त्वामहं शरणं गतः॥ 10॥
देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ 11॥
वासुदेव जगद्वन्द्य श्रीपते पुरुषोत्तम।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ 12॥
कञ्जाक्ष कमलानाथ परं कारुणिकोत्तम।
देहि मे तनयं कृष्ण शरणं गतः॥ 13॥
लक्ष्मीपते पद्मनाभ मुकुन्द मुनिवन्दित।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः॥ 14॥
कार्यकारणरूपाय वासुदेवाय ते सदा।
नमामि पुत्रलाभार्थं सुखदाय बुधाय ते॥ 15॥
राजीवनेत्र श्रीराम रावणारे हरे कवे।
तुभ्यं नमामि देवेश तनयं देहि मे हरे॥ 16॥
अहन्तु पुत्रलाभाय भजामि त्वां जगत्पतें।
देहि मे तनयं कृष्ण वासुदेव रमापते॥ 17॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रीमानिनीमानहारिन् गोपीवस्त्रापहारक।
देहि मे तनयं कृष्ण वासुदेव जगत्पते ॥ 18 ॥
अस्माकं पुत्रसम्प्राप्तिं कुरुष्व यदुनन्दन।
रमापते वासुदेव मुकुन्द मुनिवन्दित ॥ 19 ॥
वासुदेव सुतं देहि तनयं देहि माधव।
पुत्रं मे देहि श्रीकृष्ण वत्सं देहि महाप्रभो ॥ 20 ॥
डिम्भकं देहि श्रीकृष्ण आत्मजं देहि राघव।
भक्तमन्दार मे देहि तनयं नन्दनन्दन ॥ 21 ॥
नन्दनं देहि मे कृष्ण वासुदेव जगत्पते।
कमलानाथ गोविन्द मुकुन्द मुनिवन्दित ॥ 22 ॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
सुतं देहि श्रियं देहि श्रियं पुत्रं च देहि मे ॥ 23 ॥
यशोदास्तन्यपानज्ञं पिबन्तं युदुनन्दनम्।
वन्देऽहं पुत्रलाभार्थं कपिलाक्षं हरिं सदा ॥ 24 ॥
नन्दनन्दन देवेश नन्दनं देहि मे प्रभो।
रमापते वासुदेव श्रियं पुत्रं जगत्पते ॥ 25 ॥
पुत्रं श्रियं श्रियं पुत्रं पुत्रं मे देहि माधव।
अस्माकं दीनवाक्यञ्च अवधारय श्रीपते ॥ 26 ॥
गोपालडिम्भ गोविन्द वासुदेव रमापते।
अस्माकं डिम्बकं देहि श्रियं देहि जगत्पते ॥ 27 ॥
मद्वाञ्छितफलं देहि देवकीनन्दनाच्युत।
मान्तु पुत्रान्वितन्धन्यं कुरुष्व यदुनन्दन ॥ 28 ॥
याचेऽहं त्वां श्रियं पुत्रं देहि मे पुत्रसम्पदम्।
भक्तिचिन्तामणे राम कल्पवृक्ष महाप्रभो ॥ 29 ॥
आत्मजं नन्दनं पुत्र कुमारं डिम्भकं सुतम्।
अर्भकं तनयं देहि सदा मे रघुनन्दन ॥ 30 ॥
वन्दे सन्तानगोपालं माधवं भक्तकामदम्।
अस्माकं पुत्रसम्प्राप्त्यै सदा गोविन्दमच्युतम् ॥ 31 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ओंकारयुक्तं गोपालं श्रीयुक्तं यदुनन्दनम्।
क्लीयुक्तं देवकीपुत्रं नमामि यदुनायकम्॥ 32 ॥
वासुदेव मुकुन्देश गोविन्द माधवाच्युत।
देहि मे तनयं कृष्ण रमानाथ महाप्रभो॥ 33 ॥
राजीवनेत्र गोविन्द कपिलाक्ष हरे प्रभो।
समस्तकाम्यवरद देहि मे तनयं सदा॥ 34 ॥
पद्मनाभश्याम-पद्मवृन्दरूप जगत्पते।
सत्पुत्र देहि मे देव रमानायक माधव॥ 35 ॥
नन्दपाल धरापाल गोविन्द यदुनन्दन।
देहि मे तनयं कृष्ण रुक्मिणीवल्लभ प्रभो॥ 36 ॥
दासमन्दार गोविन्द मुकुन्दमाधवाच्युत।
गोपाल पुण्डरीकाक्ष देहि मे तनयं श्रियम्॥ 37 ॥
यदुनायक पद्मेश नन्दगोपवधूसुत।
देहि मे तनयं कृष्ण श्रीराधाप्राणनायक॥ 38 ॥
अस्माकं वाञ्छितं देहि देहि पुत्र रमापते।
स्तुवतां कृष्ण सर्वेश वासुदेव जगत्पते॥ 39 ॥
रामहृदयसम्भार सत्यभामामनःप्रियः।
देहि मे तनयं कृष्ण रुक्मिणीवल्लभप्रभो॥ 40 ॥
चन्द्रसूर्याक्ष गोविन्द पुण्डरीकाक्ष माधव।
अस्माकं भाग्यवत्पुत्रं देहि देव जगत्पते॥ 41 ॥
कारुण्यरूप पद्माक्ष पद्मनाभ समर्चित।
देहि मे तनयं कृष्ण देवकीनन्दनन्दन॥ 42 ॥
देवकीसुत श्रीनाथ वासुदेव जगत्पते।
समस्तकामफलद देहि मे तनयं सदा॥ 43 ॥
भक्तमन्दार गम्भीर शंङ्कराच्युत माधव।
देहि मे तनयं गोप-बालवत्स रमापते॥ 44 ॥
श्रीपते वासुदेवेश देवकीप्रियनन्दन।
भक्तमन्दार मे देहि तनयं जगतां प्रभो॥ 45 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जगन्नाथ रमानाथ भूमिनाथ दयानिधे।
वासुदेवेश सर्वेश देहि मे तनयं प्रभो ॥ 46 ॥
श्रीनाथ कमलपत्राक्ष वासुदेव जगत्पते।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ 47 ॥
दासमन्दार गोविन्द भक्तचिन्तामणे प्रभो।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ 48 ॥
गोविन्द पुण्डरीकाक्ष रमानाथ महाप्रभो।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ 49 ॥
श्रीनाथकमलपत्राक्ष गोविन्द मधुसूदन।
सत्पुत्रफलसिद्ध्यर्थं भजामि त्वां जनार्दन ॥ 50 ॥
स्तन्यं पिबन्तं जननीमुखाम्बुजं
विलोक्य मन्दस्मितमुज्ज्वलाङ्गम्।
स्पृशन्त मन्यस्तन मङ्गुलीभि
र्वन्दे यशोदाङ्कगतं मुकुन्दम् ॥ 51 ॥
याचेऽहं पुत्रसन्तानं भवन्तं पद्मलोचन।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ 52 ॥
अस्माकं पुत्रसम्पत्तेश्चिन्तयामि जगत्पते।
शीघ्रं मे देहि दातव्यं भवता मुनिवन्दित ॥ 53 ॥
वासुदेवजगन्नाथ श्रीपते पुरुषोत्तम।
कुरु मां पुत्रवन्तं च कृष्ण दवेन्द्रपूजितः ॥ 54 ॥
कुरु मां पुत्रवन्तं च यशोदाप्रियनन्दन।
मह्यं वै पुत्रसन्तानदातव्यं भवता हरे ॥ 55 ॥
वासुदेव जगन्नाथ गोविन्द देवकीसुत।
देहि मे तनयं राम कौशल्याप्रियनन्दन ॥ 56 ॥
पद्मपत्राक्ष गोविन्द विष्णो वामन माधव।
देहि मे तनयं सीताप्राणनायक राघव ॥ 57 ॥
कञ्जाक्ष कृष्ण देवेन्द्रमण्डित मुनिवन्दित।
लक्ष्मणाग्रज श्रीराम देहि मे तनयं सदा ॥ 58 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देहि मे तनयं राम दशरथप्रियनन्दन।
सीतानायक कञ्जाक्ष मुचुकुन्द वरप्रद ॥ 59 ॥
विभाषणाय या लङ्का भवताऽदीयत प्रभो।
अस्माकं तत्प्रकारेण तनयं देहि माधव ॥ 60 ॥
भवदीयपदाम्भोजे चिन्तायामि निरन्तम्।
देहि मे तनयं सीताप्राणवल्लभ राघव ॥ 61 ॥
राम मत्काम्यवरद पुत्रोत्पत्तिफलप्रद।
देहि मे तनयं श्राश कमलासनवन्दित ॥ 62 ॥
रामराघव सीतेश लक्ष्मणानुज देहि मे।
भाग्यवत्पुत्रसन्तानं दशरथात्मज श्रीपते ॥ 63 ॥
देवकीगर्भसञ्जात यशोदाप्रियनन्दन।
देहि मे तनयं राम कृष्ण गोपाल माधव ॥ 64 ॥
कृष्ण माधव गोविन्द वामनाच्युत शङ्कर।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 65 ॥
गोपवाल महाधन्य गोविन्दाच्युत माधव।
देहि मे तनयं कृष्ण वासुदेव जगत्पते ॥ 66 ॥
दिशतु दिशतु पुत्रं देवकीनन्दनोऽयं
दिशतु दिशतु शीघ्रं भाग्यवत्पुत्रलाभम्।
दिशतु दिशतु श्रीशो राघवो रामभद्रो-
दिशतु दिशतुपुत्रं वंशविस्तारहेतोः ॥ 67 ॥
ददातु वासुदेवो हि तनयं मत्प्रियं सुतम्।
कुमारं नन्दनं सीतानायकोऽपि सदा मम ॥ 68 ॥
राम राघव गोविन्द देवकीसुत माधव।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 69 ॥
वंशविस्तारकं पुत्रं देहि मे मधुसूदन।
सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः ॥ 70 ॥
ममाभीष्टसुतं देहि कंसारे माधवाच्युत।
सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः ॥ 71 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चन्द्रार्ककल्पपर्यन्त तनयं देहि माधव।
सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः ॥ 72 ॥
विद्यावन्तं बुद्धिमन्तं श्रीमन्तं तनयं सदा।
देहि मे तनयं कृष्ण देवकीनन्दनं सदा ॥ 73 ॥
नमामि त्वां पद्मनेत्र सुतलाभाय कामदम्।
मुकुन्दं पुण्डरीकाक्षं गोविदं मधुसूदनम् ॥ 74 ॥
भगवन् कृष्ण गोविन्द सर्वकामफलप्रद।
देहि मे तनयं स्वामिन् त्वामहं शरणं गतः ॥ 75 ॥
स्वमिंस्त्वं भगवान् राम कृष्ण माधव कामद।
देहि मे तनयं नित्यं त्वामहं शरणं गतः ॥ 76 ॥
तनयं देहि गोविन्द कञ्जाक्ष कमलापते।
सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः ॥ 77 ॥
पद्मापते पद्मनेत्र पद्मजनक माधव।
सुतं देहि सुतं देहि त्वामहं शरणं गतः ॥ 78 ॥
शङ्खचक्रगदाखड्गशार्ङ्गपाणे रमापते।
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ 79 ॥
नारायण रमानाथ राजीवपत्रलोचन।
सुतं मे देहि देवेश पद्मसद्मानुवन्दित ॥ 80 ॥
राम राघव गोविन्द देवकीवरनन्दन।
रुक्मिणीनाथ सर्वेश नारदादिसुरार्चित ॥ 81 ॥
देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 82 ॥
मुनिवन्दित गोविन्द रुक्मिणीवल्लभ प्रभो।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 83 ॥
गोपिकालूनपुष्पाणां मकरन्दरसप्रिय।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 84 ॥
रमाहृदयराजीव लोलमाधवकामद।
ममाभीष्टसुतं देहि त्वामहं शरणं गतः ॥ 85 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वासुदेव रमानाथ दासानां मङ्गलप्रद ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 86 ॥
कल्याणप्रद गोविन्द मुरारे मुनिवन्दित ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 87 ॥
पुत्रप्रद मुकुन्देश रुक्मिणीवल्लभ प्रभो ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 88 ॥
पुण्डरीकाक्ष गोविन्द वासुदेव जगत्पते ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 89 ॥
दयानिधे वासुदेव मुकुन्द मुनिवन्दित ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 90 ॥
पुत्रसम्पत्प्रदातारं गोविन्दं देवपूजितम् ।
वन्दामहे सदा कृष्णं पुत्रलाभप्रदायिनम् ॥ 91 ॥
कारुण्यनिधये गोपीवल्लभाय मुरारये ।
वन्दामि पुत्रलाभार्थं देहि मे तनयं विभो ॥ 92 ॥
नमस्तस्मै रमेशाय रुक्मिणीवल्लभाय ते ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 93 ॥
नमस्ते वासुदेवाय नित्यं श्रीकामुकाय च ।
पुत्रदायक शेषेन्द्र-शायिने रङ्गशायिने ॥ 94 ॥
रङ्गशायिन् रमानाथ मङ्गलप्रद माधव ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 95 ॥
दासस्य मे सुतं देहि दीनमन्दार राघवं ।
सुतं देहि सुतं देहि पुत्रं देहि रमापते ॥ 96 ॥
यशोदातनयाभीष्ट-पुत्रदानरतः सदा ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 97 ॥
मदिष्टदेव गोविन्द वासुदेव जनार्दन ।
देहि मे तनयं श्रीश गोपबालकनायक ॥ 98 ॥
नीतिमान्धनवान्पुत्रो विद्यावांश्च प्रजापते ।
भगवतस्त्वत्कृपायाश्च वासुदेवेन्द्रपूजित ॥ 99 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यः पठेत्पुत्रशतकं सोऽपि सत्पुत्रवान्भवेत्।
श्रीवासुदेवकथितं स्तोत्ररत्नं सुखाय च ॥ 100 ॥
जपकाले पठेन्नित्यं पुत्रलाभं धनं श्रियम्।
ऐश्वर्यं राजसंमानं यद्यो याति न संशयः ॥ 101 ॥

॥इति लक्ष्मीकेशवसंवादे संतानगोपालस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

॥ श्री ॥

श्रीकृष्णाष्टकम्

भजे व्रजैकमण्डनं समस्तपापखण्डनं
स्वभक्ताचित्तरञ्जनं सदैव नन्दनन्दनम्।
सुपिच्छगुच्छमस्तकं सुनादवेणुहस्तकं
अनङ्गरङ्गसागरं नमामि कृष्णनागरम् ॥ 1 ॥
मनोजगर्वमोचनं विशाललोललोचनम्
विधूतगोपशोचनं नमामि पद्मलोचनम्।
करारविन्दभूधरं स्मितावलोकसुन्दरं
महेन्द्रमानदारणं नमामि कृष्णवारणम् ॥ 2 ॥
कदम्बसूनकुण्डलं सुचारुगण्डमण्डलं
व्रजाङ्गनैकवल्लभं नमामि कृष्णदुर्लभम्।
यशोदया समोदया सगोपया सनन्दया
युतं सुखैकदायकंनमामि गोपनायकम् ॥ 3 ॥
सदैव पादपङ्कजं मदीयमानसे निजं
दधानमुक्तमालकं नमामि नन्दबालकम्।
समस्तदोषशोषणं समस्तलोकप. गं
समस्तगोपमानसं नमामि नन्दलालसम् ॥ 4 ॥
भुवो भरात्रतारकं भवाब्धिकर्णधारकं
यशोमतीकिशोरकं नमामि चित्तचोरकम्।
दृगन्तकान्तभङ्गिनं सदासदालसङ्गिनं
दिने दिने नवं नवं नमामि नन्दसम्भवम् ॥ 5 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुणाकरं सुखाकरं कृपाकरं कृपापरं
सुरद्विषन्निकन्दनं नमामि गोपनन्दनम् ।
नवीनगोपनागरं नवीनकेलिलम्पटं
नमामि मेघसुन्दरं तडित्प्रभालसत्पटम् ॥ 6 ॥
समस्तगोपनन्दनं हृदम्बुजैकमोदनं
नमामि कुञ्जमध्यगं प्रसन्नभानुशोभनम् ।
निकामकामदायकं दृगन्तचारुसायकं
रसालवेणुगायकं नमामि कुञ्जनायकम् ॥ 7 ॥
विदग्धगोपिकामनोमनोज्ञतल्पशायिनं
नमामि कुञ्जकानने प्रवृद्धवह्निपायिनम् ।
यदा तदा यथा तथा तथैव कृष्णसत्कथा
मया सदैव गीयतां तथा कृपा विधीयताम् ।
प्रमाणिकाष्टकद्वयं जपत्यधीत्य यः पुमान्
भवेत्स नन्दनन्दने भवे भवे सुभक्तिमान् ॥ 8 ॥
॥इति श्रीमच्छङ्कराचार्यकृतं श्रीकृष्णाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपराजिता स्तोत्रम्

अपराजिता स्तोत्र दुःस्वप्न नाश के लिए, श्राप एवं अशुभ की आशंका की निवृत्ति हेतु एक ऐसा प्रयोग है जो घर में इन सब बाधाओं द्वारा उत्पन्न अशुभ की शंका का शयन करता है और घर में सुख-शांति का वातावरण बनाता है।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

ॐ नमो पर‍रजितायै।
ॐ आस्या वैष्णव्याः पराया अजिताया महाविधायाः।
वामदेव-बृहस्पति-मार्कंडेया ऋषयः।
गायत्र्युष्णिगनुष्टप बृहती छंदांसि।
लक्ष्मीनृसिंहो देवता।
ॐ क्लीं श्रीं ह्रीं बीजम्॥
हुं शक्तिः।
सकलकामनासिद्ध्यर्थम् अपराजितविद्यामंत्रपाठे विनियोगः।

ॐ नीलोत्पलदलशयामां भुजंगाभरणांविताम्।
शुद्धस्फटिकसकांशां चंद्रकोटिनिभाननाम्॥
शंखचक्रधरां देवीं वैष्णवीमपराजिताम्।
बालेन्दुशेखरां देवीं वरदाभयदायिनीम्।
नमस्कृत्य पपाठैनां मार्कंडेयो महातपाः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मार्कंडेय उवाच

श्रुणुध्वं मुनयः सर्व सर्वकामार्थसिद्धिदाम्: ।
असिद्धसाधनीं देवीं वैष्णवीमपराजिताम ।।
ॐ नमो नारायणाय ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय, नमोस्त्वनंताय, सहस्त्रशीर्षाय, क्षीरोदार्णवशायिने, शेषभोगपर्य्यकांय, गरुड़वाहनाय, अमोघाय, अघाय, अजिताय, पीतवाससे, ॐ वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न ,अनिरुद्ध, हयग्रीव,मत्स्य, कूर्म्म, वराह, नृसिंह, अच्युत, वामन, त्रिविक्रम, श्रीधर, राम, राम, राम । वरद, वरदो, वरदों भव, नमोऽस्तु ते, नमोऽस्तु ते, नमोऽस्तु ते स्वाहा ।

ॐ असुर-दैत्य-दानव-यक्ष-राक्षस-भूत-प्रेत-पिशाच-कूष्माण्ड-सिद्ध-योगिनी-डाकिनी- शाकिनी-स्कन्दग्रहान् उपग्रहान्नक्षत्रग्रहांश्चा न्यान् हन हन पच पच मथ मथ विध्वंसय विध्वंसय विद्रावय विद्रावय चूर्णय चूर्णय शंखेन वज्रेण शूलेन गदया मुसलेन हलेन भस्मीन्म कुरू कुरू स्वाहा ।

ॐ सहस्त्रबाहो, सहस्त्रप्रहरणायुध, जय जय, विजय विजय, अजित, अमित, अपराजित, अप्रतिहत, सहस्त्रनेत्र, ज्वल ज्वल, प्रज्वल प्रज्वल, विश्वरूप, बहुरूप, मधुसूदन, महावराह, महापुरुष, बैकुण्ठ, नारायण, पदमनाभ, गोविंद दामोदर, हृषीकेश, केशव, सर्वासुरोत्सादन, सर्वभूतवशंकर, सर्वदु:स्वप्नप्रभेदन, सर्वयन्त्रभंजन, सर्वनागविमर्दन, सर्वदेवमहेश्वर, सर्वबंधविमोक्ष्ण, सर्वाहितप्रमर्दन, सर्वज्वरप्रणाशन, सर्वग्रहनिवारण, सर्वपापप्रशमन, जनार्दन, नमोऽस्तुते स्वाहा ।

विष्णोरियमनुप्रोक्ता सर्वकामफलप्रदा ।
सर्वसौभाग्यजननी सर्वभीतिविनाशिनी ।।
सर्वैश्च पठिता सिद्धैर्विष्णोः परमवल्लभा ।
ना नया सदृशं कि चिदं दुष्टानां नाशनं परम् ।।
विद्या रहस्या कथिता वैष्णव्येषा पराजिता ।
पठनीया प्रशस्ता वा साक्षात सत्यगुणाश्रया ।।
शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत सर्वविघ्नोपशांतये ।।
अथा तः सम्प्रवक्ष्यामि, हयभयापराजिताम् ।
या शक्तिर्मामकी वत्स! रजोगुणमयी मता ।।
सर्वसत्वमयी साक्षात सर्वमंत्रमयी च या ।
या स्मृता पूजिता जप्ता न्यस्ता कर्मणि योजिता ।।
सर्वकामदुधां वत्व! श्रृणुष्वैतां ब्रवीमि ते ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

य इमामपराजितां परमवैष्णवीमप्रतिहतां पठति सिद्धां स्मरति सिद्धां महाविद्यां जपति पठति श्रृणोति स्मरति धारयति कीर्तयति वा न तस्याग्निवायुवज्रोप लाशनिवर्षभयं, न समुद्रभयं, न ग्रहभयं, न चौरभयं, न शापभयं वा भवेत्। क्वचिद्रात्र्यंधकारस्त्रीराजकुल-विद्वेषि-गरद-विष-गर-वशी-करण-विद्धेष-णोच्चाटन-वध-बंधनभयं वा न भवेत ।

एतैमंत्रैरुदाहृतैसिद्धैः संसिद्धपूजितैः । ॐ नमोऽस्तु ते । अभये, अनघे, अजिते, अमिते, अमृते, अपरे अवराजिते, पठति सिद्धे जपति सिद्धे ।

स्मरति सिद्धे, एकोनाशीतितमे, एकाकिनी, निश्चेतसि, सुद्रुमे, सुगंधे । एकान्नंशे, उमे, ध्रुवे, अरूंधति, गायत्रि, सावित्रि, जातवेदसि, मानस्तोके, सरस्वति, धरणि, धारणि, सौदामनि, अदिति, दिति, विनते, गौरि, गांधारि, मातगिं, कृष्णे, यशोदे, सत्यवादिनि, ब्रह्मवादिनि, कालि, कपालिनि, करालनेत्रे, भद्रे, निद्रे, सत्योपयाचनकरि, स्यलगतं, जलगतम, अंतरिक्षगतं वा मां रक्ष सर्वोपद्रवेभ्यः स्वाहा ।

यस्याः प्रणश्यते पुष्पं गर्भो वा पतते यदि।
म्रियते बालको यस्याः काकबंघया च या भवेत्॥
धारयेद या इमां विधामेतैर्दोषैर्न लिप्यते।
गर्भिणी जीववत्सा स्यात पुत्रिणी स्यान्न संशयः॥
भूर्जपत्रे त्विमां विंद्यां लिखित्वा गंधचंदनैः।
एतैर्दोषैर्न लिप्येत सुभगा पुत्रिणी भवेत्॥
रणे राजकुले द्यूते नित्यं तस्या जयो भवेत्।
शस्त्रा वारयते हयेषा समरे कांडदारूणे॥
गुल्म-शूलाक्षि-रोगाणां क्षिप्रं नाशयति व्यथाम्।
शिरोरोग-ज्वराणां च नाशिनी सर्वदेहिनाम्॥
इत्येषा कथिता विद्या अभयाख्या पराजिता।
एतस्याः स्मृतिमात्रेण भयं क्वापि न जायते॥
नोपसर्गा न रोगाश्च न योधा ना पि तस्कराः।
न राजानो न सर्पाश्च न द्वेष्ठारों न शत्रवः।
यक्ष-राक्षस-वेताला न शाकिन्यो न च ग्रहाः।
अग्नेर्भयं न वाताच्च न समुद्रान्न वै विषात्॥
कार्मणं वा शत्रुकृतं वशीकरणमेव च।
उच्चाटनं स्तम्भनं च विद्वेषणमथापि ता॥
न किंचित् प्रभवेत्तत्र यत्रैषा वर्तते भया।
पठेद वा यदि वा चित्रे पुस्तके वा मुखे थवा॥
हृदि वा द्वादेशे वा वर्त्तते हयभयः पुमान्।
हृदये विन्यसेदेतां ध्यायेद देवीं चतुर्भुजाम्॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रक्तमाल्याम्बरधरां पद्मरागसमप्रभाम् ।
पाशा- ङ्कुशाभय- वरैरलङंकृत- सुविग्रहाम् ॥
साधकेभ्यः प्रयच्छंती मंत्रवर्णामृतान्यपि ।
ना तः परतरं किंचिंद वशीकरणमुत्तमम् ॥
रक्षणं पावनं चा पि ना त्र कार्या विचारणा ।
प्रातः कुमारिकाः पूज्याः खाद्यैराभरणैरपि ॥
तदिदं वाचनीयं स्यात् तत्प्रीत्या प्रीयते तु माम् ।
ॐ अथा तः सम्प्रवक्ष्यामि विद्यामपि महाबलाम् ॥
सर्वदुष्टप्रशमनीं सर्वशत्रुक्षयकंरीम् ॥
सर्वरिद्रय-दुःख-शमनीं दौर्भाग्य-व्याधि-नाशिनीम् ॥
भूत-प्रेत-पिशाचानां यक्ष-गंधर्व-रक्षसाम् ।
डाकिनी-शाकिनी-स्कंध-कूष्मांडानां च नाशिनीम् ॥
महारौंद्रीं महाशक्तिम् सद्यः प्रत्ययकारिणीम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन सर्वस्व पार्वतीपतेः ॥
तामहं ते प्रवक्ष्यामि सावधानमनाःशृणु ।
एकाहिनकं चातुर्थिकार्द्धमासिकम् ॥
द्वैमासिक त्रैमासिकं तथा चातुर्मासिकम् ।
पचंमासिकं षाण्मासिकं वातिक-पैत्तिकज्वरम् ॥
श्लैम्मिकं सान्निपातिकं तथैव सतत-ज्वरम् ।
मौहुर्तिकं पैत्तिकं शीतज्वरं विषमज्वरम् ॥
द्वयनिहकं त्र्यनिहकं चैव ज्वरमेकान्हिकं तथा ।
क्षिप्रं नाशयते नित्यं स्मरणादपरारजिता ॥

ॐ ह्रीं हन हन, कालि शर शर, गौरि धम धम विद्ये आले ताले माले गंधे बन्धे पच पच, विद्ये नाशय नाशय पापं हर हर संहारय वा दुःखस्वप्नविनाशिनि कमलस्थिते विनायकमातः रजनि संध्ये, दुंदुभिनादे, मानसवेगे, शखिनि, चक्रिणि, गदिनि, वज्रिणि शूलिनि अपमृत्यविनाशिनि विश्वेश्वरि द्रविडि द्राविड़ि द्रविणि द्राविणि केशवदयिते पशुपतिसहिते दुंदुभिदमनि दर्म्मददमनि । शबरि किराति मातगिं ॐ द्रं द्रं ज्त्रं ज्रं क्रं क्रं तुरू तुरू ॐ द्रं कुरु कुरु ।

ये मां द्विषंति प्रत्यक्षं परोक्षं वा तान सर्वान् दम दम मर्दय मर्दय तापय तापय गोपय पातय पातय शोषय शोषय उत्सादय उत्सादय ब्रह्ममाणि वैष्णवि माहेश्वरि कौमारि वाराहि नारसिंहि ऐंद्रि चामुंडे महालक्ष्मि वैनायिकि औपेन्द्रि आग्नेयि चंडि नैर्ऋति सौम्ये वायव्ये ऐशानि उर्ध्वमधो रक्ष प्रचंडविये इन्द्रोपेन्द्रभगिनि ।

ॐ नमो देवि जये विजये शांति-स्वस्ति-तुष्टि-पुष्टिविवर्धिनि ।
कामाङ्कुशे कामदुधे सर्वकामप्रवरप्रदे ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्वभूतेषू मां प्रियं कुरू कुरू स्वाहा । आकर्षणि आवेशनि ।

ज्वालामालिनि रमणि रामणि, धरणि, धारणि, तपनि, तापिनी, मदनि मादिनि, शोषणि सम्मोहनि नीलपताके महानीले महागौरि महाश्रिये ।

महाचांद्रि महासौरि महामायूरि आदित्यरश्मि जान्हेवि । यमघंटे किणि किणि चिंतामणि । सुगंधे सुरभे सुरा सुरात्पन्ने सर्वकामदुधे यद्यथा मनीषितं कार्य तन्मम सिद्धयतु स्वाहा '

ॐ स्वाहा । ॐ भू: स्वाहा । ॐ भुव: स्वाहा । ॐ स्व: स्वाहा । ॐ मह: स्वाहा । ॐ जन: स्वाहा । ॐ तप: स्वाहा । ॐ सत्यं स्वाहा । ॐ भूर्भुव: स्व: स्वाहा ।

यत एवागतं पापं तत्रैव प्रतिगच्छतु स्वाहेत्योम् ।
अमोघैषा महाविद्या वैष्णवी चा पराजिता ॥
स्वयं विष्णुप्रणीता च सिद्धेयं पाठत: सदा ।
एषा महाबला ना कथिता ते पराजिता ॥
ना नया सद्दशी रक्षा त्रिषु लोकेषु विद्यते ।
तमोगुणमयी साक्षाद्रौद्री शक्तिरियं मता ॥
कृतान्तो पि यतो भीत: पादमूले व्यवस्थित: ।
मूलाधारे न्यसेदेतां रात्रावेनां च संस्मरेत् ॥
नील-जीमूत- सकांशां तडित्कपिलकेशिकाम् ।
उद्यदादित्यशकांशां नेत्रत्रयविराजिताम् ॥
शक्ति त्रिशूलशखं च पानपात्रं च बिभ्रतीम् ।
व्याघ्रचर्मपराधानां किंकिणीजालमण्डिताम् ॥
धावन्ती गगनस्या न्त: पादुकाहितपादकात्म् ।
दंष्ट्राकरालवदनां व्यालकुण्डलभूषिताम् ॥
व्यात्तवक्त्रां ललज्जिवहां भृकुटी कुटिलालकाम् ।
स्वभक्तद्वेषिणां रक्तं पिबन्तीं पानपात्रत: ॥
सप्तधातून शोषयन्तीं क्रूरदृष्टया विलोकनात् ।
त्रिशूलेन च तज्जिव्हां कीलयन्तीं मुहुर्मुहु: ॥
पाशेन बदध्वा तं साध्यमानयन्तीं तदन्तिके ।
अर्द्धरात्रस्य समये देवीं ध्यायेन्महाबलाम् ॥
यस्य यस्य वदन्नाम जपेन्मंत्र निशांतके ।
तस्य तस्य तथा वस्थां कुरुते सा पि योगिनी ।

ॐ बले महाबले असिध्साधनी स्वाहेत्योम् अमोघां पद्धति सिद्धां श्रीवैष्णवीम् ।

श्रीमदपराजितविधां ध्यायेत् ।
दु:स्वप्ने च दुररिष्टे दुर्निमित्ते तथैव व ।
व्यवहारे भवेत् सिद्धि: पठेद विघनोपशान्तये ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदत्र पाठ जगदम्बिके ! मया, विसर्ग-बिंद्वक्षर-हीनमीडितम् ।
ततस्तु सम्पूर्णतमं प्रयान्तु मे, सकंल्पसिद्धिस्तु सदैव जायताम् ॥
तव तत्वं न जानामि कीदृशासि महेश्वरि ।
यादृशासि महादेवि ! तादशायै नमो नमः ॥
॥इत्यपराजितास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आदित्य-हृदय-स्तोत्र

जिनकी कुंडली में सूर्य नीच का, शत्रुक्षेत्री, पापपीड़ित हो, जिनका आत्मबल कमजोर हो, जो शत्रुओं से परेशान होकर निरुत्साहित हो गये हों, जो रोग एवं ईर्ष्यालु-द्वेषी लोगों से दुःखी होकर घबरा गये हों, जो सन्निकट मुसीबत से म्लान हो गया हो, उसके लिए आदित्य हृदय का पाठ अमोघ अमृत तुल्य औषध है।

कथा प्रसिद्ध है भगवान् श्रीराम रावण की अतुल शक्ति व पराक्रम को सुन समझकर हतप्रभ रह गये। जब श्रीराम ने यह सुना कि महाअसुर रावण ने तो अमृत चख रखा है, उसकी मृत्यु किसी भी अस्त्र-शस्त्र, देव-दानव व मानव द्वारा नहीं हो सकती। भगवान् राम कुछ क्षणों के लिए अपने देवत्व को भूलकर, निरुत्साहित होकर, म्लान मुख होकर, यह सोचकर घबरा उठे कि ऐसे दुर्गम्य, महाबलशाली राक्षसराज रावण का वध वे कैसे कर पाएंगे और किस प्रकार से सीता को उसके चंगुल से छुड़ा पाएंगे?

भगवान श्रीराम के उदास होने पर सारी वानर सेना हतोत्साहित व निराश हो गई। ऐसे में दक्षिण प्रदेश के एक पठार पर अचानक अगस्त्य ऋषि प्रकट हुए और भगवान् श्रीराम को 'आदित्य हृदय-स्तोत्र' पढ़ने को कहा। इस स्तोत्र के पाठ करते ही भगवान् श्रीराम को सूर्य की कृपा से अदम्य उत्साह, आत्मविश्वास एवं नवीन शक्ति का संचार हुआ। वे विशेष स्फूर्ति से शत्रुनाश हेतु उद्यत हो उठे। बाल्मीकि रामायण युद्धकांड

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में इस संपूर्ण प्रसंग का सटीक वर्णन मिलता है।

आदित्यहृदयस्तोत्रम्

विनियोग

ॐ अस्य आदित्यहृदयस्तोत्रस्यागस्त्यऋषिरनुष्टुप् छंदः, आदित्यहृदयभूतो भगवान् ब्रह्मा देवता निरस्ताशेषविघ्नतया ब्रह्मविद्यासिद्धौ सर्वत्र जयसिद्धौ च विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

ॐ अगस्त्यऋषये नमः, शिरसि। अनुष्टुपछंदसे नमः, मुखे। आदित्य-हृदयभूत-ब्रह्मदेवतायै नमः, हृदि। ॐ बीजाय नमः, गुह्ये। रश्मिमते शक्तये नमः, पादयोः। ॐ तत्सवितुरित्यादिगायत्रीकीलकाय नमः, नाभौ।

करन्यास

इस स्तोत्र के अंगन्यास और करन्यास तीन प्रकार से किए जाते हैं। केवल प्रणव से, गायत्रीमंत्र से अथवा 'रश्मियते नमः' इत्यादि छः नाम-मंत्रों से। यहां नाम-मंत्रों से किए जाने वाले न्यास का प्रकार बताया जाता है—

ॐ रश्मिमते अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ समुद्यते तर्जनीभ्यां नमः।
ॐ देवासुर नमस्कृताय मध्यमाभ्यां नमः।
ॐ विवस्वते अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ यास्कशय कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐभुवनेश्वराय करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादि अङ्गन्यास

ॐ रश्मिमते हृदयाय नमः। ॐ समुद्यते शिरसे स्वाहा। ॐ देवासुरनमस्कृताय शिखायै वषट्। ॐ विवस्वते कवचाय हुम्। ॐभास्कराय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ भुवनेश्वराय अस्त्राय फट्। इस प्रकार न्यास करके निम्नाङ्कित मंत्र से भगवान सूर्य का ध्यान एवं नमस्कार करना चाहिए—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। तत्पश्चात 'आदित्यहृदय' स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम्।
रावणं चाग्रतो दृष्टवा युद्धाय समुपस्थितम्॥ 1॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम्।
उपगम्याब्रवीद् राममगस्त्यो भगवांस्तदा॥2॥

उधर श्री रामचंद्रजी युद्ध से थककर चिंता करते हुए रणभूमि में खड़े थे। इतने में रावण भी युद्ध के लिए उनके सामने उपस्थित हो गया। यह देख भगवान् अगस्त्य मुनि जो देवताओं के साथ युद्ध देखने के लिए आये थे, श्रीराम के पास जाकर बोले ॥1-2॥

राम राम महाबाहो शृणु गुह्यं सनातनम्।
येन सर्वानरीन् वत्स समरे विजयिष्यसि॥3॥
आदित्यहृदयं पुण्यं सर्व शत्रुविनाशनम्।
जयावहं जपेन्नित्य-मक्षय्यं परम शिवम्॥4॥
सर्वमङ्गमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाक्षनम्॥
चिन्ताशोक -प्रशमन -मायुर्वर्धन -मुत्तमम्॥5॥

'सबके हृदय में रमण करने वाले महाबाहो राम ! यह सनातन गोपनीय स्तोत्र सुनो। वत्स ! इसके जप से तुम युद्ध में अपने समस्त शुत्रओं पर विजय पा जाओगे। इस गोपनीय स्तोत्र का नाम है 'आदित्यहृदय'। यह परम पवित्र और सम्पूर्ण शत्रुओं का नाश करने वाला है। इसके जप से सदा विजय की प्राप्ति होती है। यह नित्य अक्षय और परम कल्याणमय स्तोत्र है। सम्पूर्ण मंङ्गलों का भी मंङ्गल है। इससे सब पापों का नाश हो जाता है। यह चिंता और शोक को मिटाने तथा आयु को बढ़ाने वाला उत्तम साधन है' ॥3–5॥

रश्मिमन्तं समुद्यन्तं देवासुरनमस्कृतम्।
पूजयस्व विवस्वन्तं भास्करं भुवनेश्वरम्॥6॥
सर्वदेवात्मको ह्येष तेजस्वी रश्मिभावनः।
एष देवासुरगणांल्लोकान् पाति गभस्तिभिः॥7॥
एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कंदः प्रजापतिः।
महेन्द्रो धनदः कालो यमः सामोह्यपांपति॥8॥
पितरो वसवः साध्या ह्यश्विनौ मरुतो मनुः।
वायुर्वह्निः प्रजाः प्राण ऋतुकर्ता प्रभाकरः॥9॥
आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्।
सुवर्णसदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकरः॥10॥
हरिदश्वः सहस्रार्चिः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्।
तिमिरोन्मथनः शम्भुस्त्वष्टा मार्तण्डकोऽशुमान्॥11॥
हिरण्यगर्भः शिशिरस्तपनोऽहस्करो रविः।
अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शङ्खः शिशिरनाशनः॥12॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्योमनाथस्तमोभेदी ऋग्यजुः सामपारगः ।
धनवृष्टिरपां मित्रो विंध्यवीथी प्लवंगमः ॥ 13 ॥
आतपी मण्डली मृत्युः पिंगल सर्वतापनः ।
कविर्विश्वो महातेजा रक्तः सर्वभवोद्भवः ॥ 14 ॥
नक्षत्र ग्रहताराणामधियो विश्वभावनः ।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन् नमोऽस्तुते ॥ 15 ॥

भगवान् सूर्य अपनी अनंत किरणों से सुशोभित (रश्मिमान्) है । ये नित्य उदय होने वाले (समुद्यंन्) देवता और असुरों से नमस्कृत, विवस्वान्, नाम से प्रसिद्ध, प्रभा का विस्तार करने वाले (भास्कर) और संसार के स्वामी (भुवनेश्वर) हैं । तुम इनका [रश्मिमते नमः,समुद्यते नमः, देवासुरनमस्कृताय नमः विवस्वते नमः, भास्कराय नमः, भूवनेश्वराय नमः—इन नाम-मंत्रों के द्वारा] पूजन करो । सम्पूर्ण देवता इन्हीं के स्वरूप हैं । ये तेज की राशि तथा अपनी किरणों से जगत को सत्ता एवं स्फूर्ति प्रदान करने वाले हैं । ये ही अपनी रश्मियों का प्रसार करके देवता और असुरों सहित सम्पूर्ण लोकों का पालन करते हैं । ये ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव, स्कंद, प्रजापति, इंद्र, कुबेर, काल, यम, चंद्रमा, वरुण, पितर, वसु, साध्य अश्विनीकुमार, मरुद्गण, मनु, वायु, अग्नि, प्रजा, प्राण, ऋतुओं को प्रकट करने वाले तथा प्रभा के पुत्र हैं । इन्हीं के नाम आदित्य (अदितिपुत्र), सविता (जगत को उत्पन्न करने वाले), सूर्य (सर्वव्यापक), खग (आकाश में विचरने वाले), पूषा (पोषण करने वाले), गभस्तिमान (प्रकाशमान), सुवर्णसदृश, भानु (प्रकाशक), हिरण्यरेता (ब्रह्मांड की उत्पत्ति के बीज), दिवाकर (रात्रि का अंधकार दूर करके दिन का प्रकाश फैलाने वाले), हरिदश्व (दिशाओं में व्यापक अथवा हरे रंग के घोड़े वाले), सहस्रार्चि (हजारों किरणों से सुशोभित), सप्तसप्ति (सात घोड़ों वाले), मरीचिमान् (किरणों से सुशोभित), तिमिरोन्मथन (अंधकार का नाश करने वाले), शम्भु (कल्याण के उद्गम स्थान), त्वष्टा (भक्तों का दुःख दूर करने अथवा जगत का संहार करने वाले), मार्तंडक (ब्रह्मांड को जीवन प्रदान करने वाले), अंशुमान (किरण धारण करने वाले), हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा), शिशिर (स्वभाव से ही सुख देने वाले), तपन (गर्मी पैदा करने वाले), अहस्कर (दिनकर), रवि (सबकी स्तुति के पात्र), अग्निगर्भ (अग्नि को गर्भ में धारण करने वाले), अदिति पुत्र, शंख, शिशिरनाशन, व्योमनाथ, तमोभेदी, ऋग्, यजुः और सामवेद के पारगामी, घनवृष्टि, जल को उत्पन्न करने वाले आकाश में तीव्र वेग से चलने वाले आतपी (धाम उत्पन्न करने वाले), मंडली (किरण समूह को धारण करने वाले), मृत्यु (मौत के कारण), पिङ्गल (भूरे रंग वाले), सर्वतापन (सबको ताप देने वाले), कवि (त्रिकालदर्शी), विश्व (सर्वस्वरूप), महातेजस्वी, रक्त (लाल रंग वाले), सर्वभवोद्भव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(सबकी उत्पत्ति के कारण), नक्षत्र ग्रह और तारों के स्वामी, विश्वभावन (जगत की रक्षा करने वाले), तेजस्वियों में भी अति तेजस्वी तथा द्वादशात्मा (बारह स्वरूपों में अभिव्यक्त) हैं। [इन सभी नामों से प्रसिद्ध सूर्यदेव !] आपको नमस्कार है' ॥ 6 – 15 ॥

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नम्।
ज्योतिर्गणानां पतये दिनाधिपतये नमः ॥ 16 ॥
जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः ॥ 17 ॥
नम उग्राय वीराय सारङ्गाय नमो नमः।
नमः पद्मप्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ॥ 18 ॥
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सूरायादित्यवर्चसे।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥ 19 ॥
तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषां पतये नमः ॥ 20 ॥
तप्तचामीकरामाय हरये विश्वकर्मणे।
नमस्तमोऽभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ॥ 21 ॥

पूर्वगिरि-उदयाचल तथा पश्चिमगिरि-अस्ताचल के रूप में आपको नमस्कार है। ज्योतिर्गणों (ग्रहों और तारों) के स्वामी तथा दिन के अधिपति आपको प्रणाम है। आप जयस्वरूप तथा विजय और कल्याण के दाता हैं। आपके रथ में हरे रंग के घोड़े जुते रहते हैं। आपको बारबार नमस्कार है। सहस्रों किरणों से सुशोभित भगवान् सूर्य ! आपको बारंबार प्रणाम है। आप अदिति के पुत्र होने के कारण आदित्य नाम से प्रसिद्ध हैं। आपको नमस्कार है। उग्र (अभक्तों के लिए भयंकर), वीर (शक्ति-सम्पन्न) और सारङ्ग (शीघ्रगामी) सूर्यदेव को नमस्कार है। कमलों को विकसित करने वाले प्रचंड तेजधारी मार्तंड को प्रणाम है। (परात्पर-रूप में) आप ब्रह्मा, शिव और विष्णु के भी स्वामी हैं। सूर आपकी संज्ञा है, सबको स्वाहा कर देने वाला अग्नि आपका ही स्वरूप है, आप रौद्ररूप धारण करने वाले हैं, आपको नमस्कार है। आप अज्ञान और अंधकार के नाशक, जड़ता एवं शीत के निवारक तथा शत्रु का नाश करने वाले हैं, आपका स्वरूप अप्रमेय है। आप कृतघ्नों का नाश करने वाले, संपूर्ण ज्योतियों के स्वामी और देवस्वरूप हैं; आपको नमस्कार है। आपकी प्रभा तपाए हुए सुवर्ण के समान हैं, आप हरि (अज्ञान का हरण करने वाले) और विश्वकर्मा (संसार की सृष्टि करने वाले) हैं, तम के नाशक, प्रकाशस्वरूप और जगत के साथी हैं, आपको नमस्कार है ॥ 16-21 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नाशयत्येष वै भूतं तमेष सृजति प्रभुः ।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गमस्तभिः ॥ 22 ॥
एष सुप्तेषु जागर्ति भूतेषु परिनिष्ठितः ।
एष चैवाग्निहोत्रं च फलं चैवाग्निहोत्रिणाम ॥ 23 ॥
देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनां फलमेव च ।
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परमप्रभुः ॥ 24 ॥
एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च ।
कीर्तयन् पुरुष कश्चिन्नवसीदति राघव ॥ 25 ॥
पूजयस्वैनमेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम् ।
एतत्त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यति ॥ 26 ॥
अस्मिन् क्षणे महाबाहो रावणं त्वं जहिष्यसि ।
एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥ 27 ॥

रघुनंदन ! ये भगवान सूर्य ही सम्पूर्ण भूतों का संहार, सृष्टि और पालन करते हैं। ये ही अपनी किरणों से गर्मी पहुंचाते और वर्षा करते हैं। ये सब भूतो में अंतर्यामी रूप से स्थित होकर उनके सो जाने पर भी जागते रहते हैं। ये ही अग्निहोत्र तथा अग्निहोत्री पुरुषों को मिलने वाले फल हैं। (यज्ञ में भाग ग्रहण करने वाले) देवता, यज्ञ और यज्ञों के फल भी ये ही हैं। सम्पूर्ण लोकों में जितनी क्रियाएं होती हैं, उन सबका फल देने में ये ही पूर्ण समर्थ हैं। राघव ! विपत्ति में, कष्ट में, दुर्गम मार्ग में तथा और किसी भय के अवसर पर जो कोई पुरुष इन सूर्यदेव का कीर्तन करता है, उसे दुःख नहीं भोगना पड़ता। इसलिए तुम एकग्राचित्त होकर इन देवाधिदेव जगदीश्वर की पूजा करो। इस आदित्यहृदय का तीन बार जप करने से कोई भी युद्ध (समस्या) पर विजय प्राप्त कर सकता है। महाबाहो ! 'तुम इसी क्षण रावण का वध कर सकोगे, यह कहकर अगस्त्यजी जैसे आये थे, उसी प्रकार चले गये ॥ 22-27 ॥

एतच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोभवत् तदा ।
धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान् ॥ 28 ॥
आदित्यं प्रेक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान् ।
त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ॥ 29 ॥
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागमत् ।
सर्वयत्नेन महता वृतस्तस्य वधेऽभवत् ॥ 30 ॥
अथ रविरवदन्निरीक्ष्य रामं मुदितमनाः परमं प्रहृष्यमाणः ।
निशिचरपतिसंक्षयं विदित्वा सुरगणमध्यगतो वचस्त्वरेति ॥ 31 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उनका उपदेश सुनकर महातेजस्वी श्रीरामचंद्रजी का शोक दूर हो गया। उन्होंने प्रसन्न होकर शुद्धचित्त से आदित्यहृदय कों धारण किया और तीन बार आचमन करके शुद्ध हो भगवान सूर्य की ओर देखते हुए इसका तीन बार जप किया। इससे उन्हें बड़ा हर्ष हुआ। फिर परम पराक्रमी रघुनाथजी ने धनुष उठाकर रावण की ओर देखा और उत्साहपूर्वक विजय पाने के लिए वे आगे बढ़े। उन्होंने पूरा प्रयत्न करके रावण के वध का निश्चय किया। उस समय देवताओं के मध्य में खड़े हुए भगवान सूर्य ने प्रसन्न होकर श्रीरामचंद्रजी की ओर देखा और निशाचरराज रावण के विनाश का समय निकट जानकर हर्षपूर्वक कहा— 'रघुनंदन ! अब जल्दी करो' ॥ 28–31 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

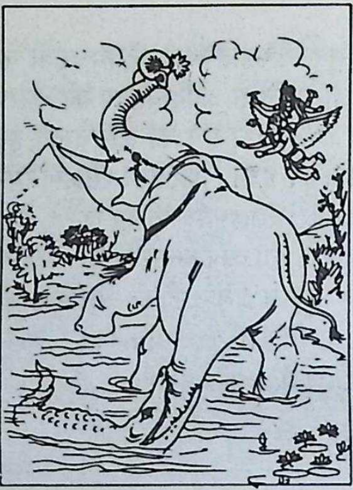

गजेन्द्र मोक्ष

श्रीमद्भागवत के अष्टम स्कंध में गजेंद्रमोक्ष की कथा आती है। गजेंद्रकृत श्रीभगवान के इस स्तवन से व्यक्ति कैसे भी संकट से मुक्त हो जाता है। विपत्ति में फंसे हुए व्यक्ति के लिए गजेंद्रमोक्ष का पाठ अमोघ फलदायी है।

श्रीमद्भागवत के अष्टम स्कंध के तृतीय अध्यायं में गजेंद्र कृत 'गजेंद्रमोक्ष' का प्रसंग मिलता है। इसी के चतुर्थ अध्याय में गजग्राह के पूर्वजन्म का वृतांत है। काशी नरेश इंद्रद्युम्न ही इस जन्म में गजेंद्र था । गजेंद्रमोक्ष का वृतांत जहां कलियुग में समस्त पापों का नाशक, दुःस्वप्न का नाशक है वहीं स्वर्गलोक में भी इस कथा का श्रवण विमल यश का फल देता है।

गजेंद्रकृत इस स्तवन का अतिभाव से पाठ करने पर मनुष्य लौकिक एवं पारलौकिक सभी प्रकार के संकट से मुक्त हो जाता है। निष्काम भाव से इसका पाठ करने पर मनुष्य अज्ञान के बंधन से छूटकर परमपुरुष के सान्निध्य को प्राप्त करता है। स्वयं भगवान का वचन है कि **'जो रात्रि शेष' (ब्रह्ममुहूर्त) में उठकर इस स्तोत्र द्वारा मेरा स्तवन करता है, उसे मैं मृत्यु के समय निर्मल मति (अपनी स्मृति) प्रदान करता हूं।'** फलतः **'अंते मतिः सा गतिः'** के अनुसार उसे निश्चय ही भगवदगति की प्राप्ति हो जाती है एवं मनुष्य जन्म-मरण के बंधन से छूट जाता है। संस्कृत न जानने वाले भाई-बहनों के लिए इस स्तोत्र के मंत्रों का हिंदी अनुवाद साथ दिया गया है, वे आर्तभाव से उसका पाठ कर सकते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं। ईश्वर सभी भाषाओं व भावों को जानता है। मैंने मेरे कुछ विदेशी भक्तों को इसका अंग्रेजी अनुवाद करके दिया। उन्होंने तन्मयता के साथ इसे पढ़ा, उनको भी लाभ हुआ एवं उनका विश्वास 'गजेंद्रमोक्ष' में दृढ़ हो गया। वे लोग बाइबल चाहे पढ़ें या न पढ़ें गजेंद्रमोक्ष का नित्य पाठ करते हैं।

गजेंद्र मोक्ष

श्रीशुकः उवाच—

एवं व्यवसितो बुद्ध्या समाधाय मनो हृदि।
जजाप परमं जाप्यं प्राग्जन्मनुशिक्षितम्॥ 1॥

बुद्धि के द्वारा पिछले अध्याय में वर्णित रीति से निश्चय करके तथा मन को हृदयदेश में स्थिर करके यह गजराज अपने पूर्वजन्म में कण्ठस्थ किए हुए, सर्वश्रेष्ठ एवं बार-बार दोहराने योग्य निम्नलिखित स्तोत्र का मन-ही-मन पाठ करने लगा।

ॐ नमो भगवते तस्मै यत एतच्चिदात्यकम्।
पुरुषायादिबीजाय परेशायाभिधीमहि॥ 2॥

जिनके सान्निध्य से ये जड़ शरीर और मन आदि भी चेतन बन जाते है। 'ॐ' शब्द के द्वारा लक्षित तथा सम्पूर्ण शरीरों में प्रकृति एवं पुरुष रूप से प्रविष्ट हुए, उन सर्वसमर्थ परमेश्वर को हम मन-ही-मन नमन करते हैं।

यस्मिन्निदं यतश्चेदं येनेदं यइदं स्वयम्।
योऽस्मात्परस्माच्च, परस्तं प्रमद्ये स्वयम्भुवम्॥ 3॥

जिनके सहारे यह विश्व टिका है, जिनसे यह विश्व निकला है, जिंहोंने इस विश्व की रचना की है और जो स्वयं ही इसके रूप में प्रकट है— फिर भी जो इस दृश्य-जगत में एवं उसकी कारणभूता प्रकृति से सर्वथा परे एवं श्रेष्ट है, उन अपने-आप बिना किसी कारण के बने हुए भगवान की मैं शरण लेता हूं।

यः स्वात्मनीदं निजमाययार्पितं
क्वचिद्विभातं क्व च तत्तिरोहितम्।
अविद्धदृक् साक्ष्युमयं तदीक्षते
स आत्ममूलोऽवतु "मां परात्परः॥ 4॥

अपनी संकल्प-शक्ति के द्वारा अपने ही स्वरूप में रचे हुए और इसीलिए सृष्टिकाल में प्रकट और प्रलयकाल में उसी प्रकार अप्रकट रहने वाले इस शास्त्रप्रसिद्ध कार्य-कारणरूप जगत को अकुंठित-दृष्टि होने के कारण साक्षी रूप से देखते रहते हैं-उनमें लिप्त नहीं होते, वे चक्षु आदि प्रकाशकों के भी परम प्रकाशक प्रभु मेरी रक्षा करें।

कालेन पञ्चत्वमितेषु कृत्स्नशो,
लोकेषु पालेषु च सर्वहेतुषु।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तमस्तदाऽऽसीद् गहनं गभीरं
यस्तस्य पारेऽभिविराजते विभुः ॥ 5 ॥

समय के प्रवाह से सम्पूर्ण लोकों के एवं ब्रह्मादि लोकपालों के पंचभूतों में प्रवेश कर जाने पर तथा पंचभूतों से लेकर महत्तत्वपर्यंत संपूर्ण कारणों के उनकी परमकारणरूपा प्रकृति में लीन हो जाने पर उस समय दर्ज्ञेय तथा अपार अंधकार रूप प्रकृति ही बच रही थी । उस अंधकार के परे अपने परमधाम में जो सर्वव्यापक भगवान सब ओर प्रकाशित रहते हैं, वे प्रभु मेरी रक्षा करें ।

न यस्य देवा ऋषयः पदं विदु-
र्जन्तुः पुनः कोऽर्हति गंतुमीरितुम् ।
यथा नटस्याकृतिभिर्विचेष्टतो
दुरत्ययानुक्रमणः स मावतु ॥ 6 ॥

भिन्न-भिन्न रूपों में नाट्य करने वाले अभिनेता के वास्तविक स्वरूप को जिस प्रकार साधारण दर्शक नहीं जान पाते, उसी प्रकार सत्त्व प्रधान देवता अथवा ऋषि भी जिनके स्वरूप को नहीं जानते, फिर दूसरा साधारण जीव तो कौन जान अथवा वर्णन कर सकता है— वे दुर्गम चरित्र वाले प्रभु मेरी रक्षा करें ।

दिदृक्षवो यस्य पदं सुमङ्गलं,
विमुक्तसङ्गा मुनयः सुसाधवः ।
चरन्त्यलोकव्रतमप्रणं वने,
भूतात्यभूताः सुहृदः स मे गतिः ॥ 7 ॥

आसक्ति से सर्वथा छूटे हुए, संपूर्ण प्राणियों में आत्मबुद्धि रखने वाले,सबके अकारण हित एवं अतिशय साधु स्वभाव मुनिगण जिनके परम मङ्गलमय स्वरूप का साक्षात्कार करने की इच्छा से वन में रहकर अखंड ब्रह्मचर्य आदि अलौकिक व्रतों का पालन करते हैं, वे प्रभु ही मेरी गति हैं ।

न विद्यते यस्य च जन्म कर्म वा,
न नामरूपे गुणदोष एव वा ।
तथापि लोकाप्ययसम्भावाय यः,
स्वमायया तान्यनुकालमृच्छति ॥ 8 ॥

जिनका हमारी तरह कर्मवश न तो जन्म होता है और जिनके द्वारा अहंकारप्रेरित कर्म ही होते हैं, जिनके निर्गुण स्वरूप का न तो कोई नाम है न रूप ही, फिर भी जो समयानुसार जगत की सृष्टि एवं प्रलय (संहार) के लिए स्वेच्छा से जन्म आदि को स्वीकार करते है ।

तस्मै नमः परेशाय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये ।
अरूपायोरुरूपाय नम आश्चर्यकर्मणे ॥ 9 ॥

उन अनंतशक्ति संपन्न पर ब्रह्म परमेश्वर को नमस्कार है । उन प्राकृत आकाररहित

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एवं अनेकों आकार वाले अद्‌भुतकर्मा भगवान को बार-बार नमस्कार है ।

नम आत्मप्रदीपाय साक्षिणे परमात्मने ।
नमो गिरां विदूराय मनसश्चेतसायणि ।। 10 ।।

स्वयंप्रकाश एवं सबके साक्षी परमात्मा को नमस्कार है । उन प्रभु को ,जो मन, वाणी एवं चित्तवृत्तियों से भी सर्वथा परे है, बार-बार नमस्कार है ।

सत्त्वेन प्रतिलभ्याय नैष्कर्म्येण विपश्चिता ।
नमः कैवल्यनाथाय निर्वाण सुखसंविदे ।। 11 ।।

विवेकी पुरुष के द्वारा सत्त्वगुणविशिष्ट निवृत्तिधर्म के आचरण से प्राप्त होने योग्य, मोक्षसुख के देने वाले तथा मोक्ष-सुख की अनुभूतिरूप प्रभु को नमस्कार है ।

नमः शांताय घोराय मूढाय गुणधर्मिणे ।
निर्विशेषाय साम्याय नमो ज्ञानघनाय च ।। 12 ।।

सत्त्वगुण को स्वीकार करके शांत, रजोगुण को स्वीकार करके घोर एवं तमोगुण को स्वीकार करके मूढ से प्रतीत होने वाले, भेदरहित, अतएव सदा समभाव से स्थित ज्ञानधन प्रभु को नमस्कार है ।

क्षेत्रज्ञाय नमस्तुभ्यं सर्वाध्यक्षाय साक्षिणे ।
पुरुषायात्ममूलाय मूलप्रकृतये नमः ।। 13 ।।

शरीर, इन्द्रिय आदि के समुदायरूप सम्पूर्ण पिंडों के ज्ञाता, सबके स्वामी एवं साक्षीरूप आपको नमस्कार है । सबके अंतर्यामी, प्रकृति के भी परम कारण, किंतु स्वयं कारणरहित प्रभु को नमस्कार है ।

सर्वेन्द्रियगुणद्रष्टे सर्वप्रत्ययहेतवे ।
असताच्छाययोक्ताय सदाभासाय ते नमः ।। 14 ।।

संपूर्ण इंद्रियों एवं उनके विषयों के ज्ञाता, समस्त प्रतीतियों के कारण रूप, संपूर्ण जड़-प्रपञ्च एवं सबकी मूलभूता अविद्या के द्वारा सूचित होने वाले तथा संपूर्ण विषयों में अविद्यारूप से भासने वाले आपको नमस्कार है ।

नमो नमस्तेऽखिलकारणाय,
निष्कारणायाद्‌भुतकारणाय ।
सर्वागमाम्नाय-मप्तर्णवाय,
नमोऽपवर्गाय परायणाय ।। 15 ।।

सबके कारण किंतु स्वयं कारणरहित तथा कारण होने पर भी परिणामरहित होने के कारण अन्य कारणों से विलक्षण कारण आपको बारबार नमस्कार है । सम्पूर्ण वेदों एवं शास्त्रों के परमतात्पर्य, मोक्षरूप एवं श्रेष्ठ पुरुषों की परमगति भगवान को नमस्कार है ।

गुणारणिच्छन्नचिद्ष्मपाय,
तत्क्षोभविस्फूर्जितमानसाय ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैष्कर्म्यभावेन विवर्जितागम-
स्वयम्प्रकाशाय नमस्करोमि ॥ 16 ॥

जो त्रिगुणरूप कोष्ठों में छिपे हुए ज्ञानमय अग्नि है, उक्त गुणों में हलचल होने पर जिनके मन में सृष्टि रचने की बाह्य-वृत्ति जाग्रत हो जाती है तथा आत्मतत्त्व की भावना के द्वारा विधि-निषेधरूप शास्त्र से ऊपर उठे हुए ज्ञानी महात्माओं में जो स्वयं प्रकाशित रहते हैं, उन प्रभु को मैं नमस्कार करता हूं।

मादृक्प्रपन्न पशुपाशविमोक्षणाय,
मुक्ताय भूरिकरुणाय नमोऽलयाय।
स्वांशेन सर्वतनुभृन्मनसि प्रतीत-
प्रत्यगदृशे भगवते बृहते नमस्ते ॥ 17 ॥

मुझ जैसे शरणागत पशुतुल्य (अविद्याग्रस्त) जीव की अविद्या रूपी फांसी को सदा के लिए पूर्णरूप से काट देने वाले अत्यधिक दयालु एवं दया करने में कभी आलस्य न करने वाले नित्ययुक्त प्रभु को नमस्कार है। अपने अंश से संपूर्ण जीवों के मन में अंर्तयामीरूप से प्रकट रहने वाले, सर्वनियंता अनंत परमात्मा आपको नमस्कार है।

आत्मात्म जाप्तगृहवित्तजनेषु सक्तै-
र्दुष्प्रपणाय गुणसङ्गविवर्जिताय।
मुक्तात्मभिः स्वहृदये परिभाविताय,
ज्ञानात्मने भगवते नम ईश्वराय ॥ 18 ॥

शरीर, पुत्र, मित्र, घर, संपत्ति एवं कुटुम्बियों में आसक्त लोगों के द्वारा कठिनता से प्राप्त होने वाले तथा मुक्त पुरुषों के द्वारा अपने हृदय में निरंतर चिंतित ज्ञानस्वरूप, सर्वसमर्थ भगवान को नमस्कार है।

यं धर्मकामार्थविमुक्तिकामा,
भजन्त इष्टां गतिमाप्नुवन्ति।
किं त्वाशिषो रात्यपि देहमव्ययं
करातु मेऽदभ्रदयो विमोक्षणम् ॥ 19 ॥

जिन्हें धर्म, अभिलषित भोग, धन एवं मोक्ष की कामना से भजने वाले लोग अपनी मनचाही गति पा लेते हैं, अपितु जो उन्हें अन्य प्रकार के अयाचित योग एवं अविनाशी पार्षद शरीर भी देते हैं, वे अतिशय दयालु प्रभु मुझे इस विपत्ति से सदा के लिए उबार लें।

एकान्तिनो यस्य न कंचनार्थं
वाञ्छन्ति ये वे भगवत्प्रपन्नाः।
अत्यदभुतं तच्चरित सुमङ्गलं,
गायन्त आनन्दसमुद्रमग्नाः ॥ 20 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिनके अनन्य भक्त—जो वस्तुत: एकमात्र उन भगवान ही शरण है—धर्म, अर्थ आदि किसी भी पदार्थ को नहीं चाहते, अपितु परम मङ्गलम एवं अत्यंत विलक्षण चरित्रों का ज्ञान करते हुए आनन्द के समुद्र में गोते लगाते रहते हैं ।

तमक्षरं ब्रह्म परं परेक्ष-
मव्यक्त -माध्यात्मिक -योगगभ्यम् ।
अतीन्द्रियं सूक्ष्मामिवातिदूर-
मनन्तमाद्यं परपूर्णमीडे ॥ 21 ॥

उन अविनाशी, सर्वव्यापक, सर्वश्रेष्ठ, ब्रह्मादि के भी नियाम अभक्तों के लिए अप्रकट होने पर भी भक्तियोग द्वारा प्राप्त करने योग्य, अत्यंत निकट होने पर भी माया के आवरण के कारण अत्यंत दूर प्रतीत होने वाले, इंद्रियों के द्वारा अगम्य तथा अत्यंत दुर्विशेय, अंतरहित किंतु सबके आदिकारण एवं सब ओर से परिपूर्ण उन भगवान की मैं स्तुति करता हूं ।

यस्य ब्रह्मादयो देवा वेदा लोकाश्चराचरा: ।
नामरूपविभेदेन फल्व्या च कलमा कृता: ।।22 ।।

ब्रह्मादि समस्त देवता, चारों वेद तथा सम्पूर्ण चराचर जीव नाम और आकृति के भेद से जिनके अत्यंत क्षुद्र अंश के द्वारा रचे गये हैं ।

यथार्चियोऽग्नेः सवितुर्गयस्तयो
निर्यात्ति संयान्त्यसकृत् स्वरोचिषः ।
तथा यतोऽयं गुणसम्प्रवाहो
बुद्धिर्मनः खानि शरीरसर्गा: ॥ 23 ॥

जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि से लपटें तथा सूर्य से किरणें बार-बार निकलती हैं और पुन: अपने कारण में लीन हो जाती हैं, उसी प्रकार बुद्धि, मन, इंद्रियां, और नाना योनियों के शरीर—यह गुणमय प्रपंच जिन स्वयं प्रकाश परमात्मा से प्रकट होता है और पुन: उन्हीं में लीन हो जाता है ।

स वै न देवासुरमर्त्यतिर्यङ्
न स्त्री न षष्ठो न पुमान् न जन्तुः ।
नायं गुणः कर्म न सन्न चासन्
निषेधशेषो जयतादशेषः ॥ 24 ॥

वे भगवान वास्तव में न देवता हैं न असुर, न मनुष्य हैं न तिर्यक् योनि के प्राणी हैं । न वे स्त्री हैं न पुरुष और न नपुंसक ही हैं । न वे ऐसे कोई जीव हैं, जिनका इन तीनों ही श्रेणियों में समावेश न हो सके । न वे गुण है न कर्म, न कार्य है न तो कारण ही । सबका निषेध हो जाने पर जो कुछ बचा रहता है, वही उनका स्वरूप है और वे ही सब कुछ हैं । ऐसे भगवान् मेरे उद्धार के लिए आविर्भूत हों ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिजीविषे नाहमिहामुया कि-
मन्तर्बहिश्चावृतयेभयोन्या: ।
इच्छामि कालेन न यस्य विप्लव:
स्तस्यात्म लोकावरणस्य मोक्षम् ॥ 25 ॥

मैं इस ग्राह के चंगुल से छूटकर जीवित रहना नहीं चाहता, क्योंकि भीतर और बाहर-सब ओर से अज्ञान के द्वारा ढके हुए इस हाथी के शरीर से मुझे क्या लेना है । मैं तो आत्मा के प्रकाश को ढक देने वाले उस अज्ञान की निवृत्ति चाहता हूं, जिसका कालक्रम से अपने-आप नाश नहीं होता, अपितु भगवान् की दया से अथवा ज्ञान के उदय से होता है ।

सोऽहं विश्वसृजं विश्वमविश्वं विश्ववेदसम् ।
विश्वात्मानमजं ब्रह्म प्रणतोऽस्मि परं पदम् ॥ 26 ॥

इस प्रकार मोक्ष का अभिलाषी मैं विश्व के रचयिता, स्वयं विश्व के रूप में प्रकट तथा विश्व से सर्वथा पूरे विश्व को खिलौना बनाकार खेलने वाले, विश्व में आत्मारूप से व्याप्त, अजन्मा, सर्वव्यापक एवं प्राप्तव्य वस्तुओं में सर्वश्रेष्ठ श्री भगवान को केवल प्रणाम ही करता हूं—उनकी शरण में हूं ।

योगरन्धितकर्माणो हृदि योगविभाविते ।
योगिनो यं प्रपश्यन्ति योगेशं तं नतोऽस्म्यहम् ॥ 27 ॥

जिन्होंने भगवदभक्तिरूप योग के द्वारा कर्मो को जला डाला हैं, वे योगी लोग उसी योग के द्वारा शुद्ध किए हुए अपने हृदय में जिन्हें प्रकट हुआ देखते हैं, उन योगेश्वर भगवान को मैं नमस्कार करता हूं ।

नमो नमस्तुभ्यमसह्यवेगं-
शक्तित्रयायाखिलधीगुणाय ।
प्रपन्न पालाय दुरन्तशक्तये
कदिन्द्रियाणा मनवाप्यवर्त्मने ॥ 28 ॥

जिनकी त्रिगुणात्मक (सत्त्व-रज-तमरूप) शक्तियों का रागरूप वेग असह्य है, जो संपूर्ण इंद्रियों के विषयरूप में प्रतीत हो रहे हैं, तथापि जिनकी इंद्रियां विषय में ही रची बसी रहती हैं- ऐसे लोगों को जिनका मार्ग भी मिलना असम्भव है उन शरणागतरक्षक एवं अपार शक्तिशाली आपको बार-बार नमस्कार है ।

नायं वेद स्वभात्मानं यच्छक्त्याहं धियाहतम् ।
तं दुरत्ययमाहात्म्यं भगवन्तमितो ऽस्म्यहम् ॥ 29 ॥

जिनकी अविद्यानायक शक्ति के कार्यरूप अहंकार से ढके हुए अपने स्वरूप को यह जीव जान नहीं पाता, उन अपार महिमा वाले भगवान की मैं शरण आया हूं ।

एवं गजेन्द्रमुपवर्णितनिर्विशेषं
ब्रह्मादयो विविधलिङ्गमिदानिमाना: ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नैते यदोपससृपुर्निखलात्मकत्वात्
तत्राखिलाभरमयो हरिराविरासीत् ॥ 30 ॥

जिसने पूर्वोक्त प्रकार से भगवान के भेदरहित निराकार स्वरूप का वर्णन किया था, उस गजराज के समीप जब ब्रह्मा आदि कोई भी देवता नहीं आये, जो भिन्न-भिन्न प्रकार के विशिष्ट विग्रहों को ही अपना स्वरूप मानते हैं, तब साक्षात श्रीहरि—जो सबके आत्मा होने के कारण सर्वदेवस्वरूप हैं- वहां प्रकट हो गए।

तं तद्वदार्त्तमुपलभ्य जगन्निवासः
स्तोत्रं निशम्य दिविजैः सहसंस्तुवद्भिः ।
छंदोमयेन गरूडेन समुह्यमान-
श्चक्रायुधोऽभ्यगमदाक्षु यतो गजेन्द्रः ॥ 31 ॥

उपर्युक्त गजराज को इस प्रकार दुखी देखकर तथा उसके द्वारा पढ़ी हुई स्तुति को सुनकर सुदर्शन-चक्रधारी जगदाधार -भगवान इच्छानुरूप वेग वाले गरुड़जी की पीठ पर सवार हो स्तवन करते हए, देवताओं के साथ तत्काल उस स्थान पर पहुंच गए, जहां वह हाथी था।

सोऽन्तस्सरस्युबलेन गृहीत आर्त्तो
दृष्ट्वा गरुत्यति हरिं एवं उपात्तचक्रम्।
उत्क्षिप्य साम्बुजकरं गिरमाह कृच्छ्रा-
न्नारायणाखिलगुरो भगवान् नमस्ते ॥ 32 ॥

सरोवर के भीतर महाबली ग्राह के द्वारा पकड़े जाकर दुखी हुए उस हाथी ने आकाश में गरुड़ की पीठ पर चक्र को उठाए हुए भगवान श्रीहरि को देखकर अपनी सूंड को—जिसमें उसने (पूजा के लिए) कमल का एक पुष्प ले रखा था- ऊपर उठाया और बड़ी कठिनता से "सर्वपूज्य भगवान नारायण ! आपको प्रणाम है" यह वाक्य कहा।

तं तीक्ष्य पीडितयजः सहसावतीर्थ
सग्राहमाशु सरसः कृपयोज्जहार।
ग्राहाद् विपाटितमुखादरिणा गजेन्द्रं
सम्पश्यतां हरिश्मूमुदस्त्रियाणाम् ॥ 33 ॥

उसे पीड़ित देखकर अजन्मे श्री हरि एकाएक गरुड़ को छोड़कर नीचे झील पर उतर आए। वे दया से प्रेरित हो ग्राह सहित उस गजराज को तत्काल झील से बाहर निकाल लाए और देवताओं के देखते-देखते चक्र से उस ग्राह का मुंह चीरकर उसके चंगुल से हाथी को उबार लिया।

हे परमदयालु प्रभु श्रीहरि, जिस प्रकार से संकटग्रस्त उस गजराज को विपत्ति रूपी समुद्र से छुड़ा दिया, उसी प्रकार मुझ भक्त को भी आप (अमुक) संकट से उबारें। अब मैं मात्र आपकी शरण में हूं। आप शरणागत रक्षक हैं, अतः मेरी रक्षा करें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महान् सिद्धिदायक शक्रादयः स्तुति

शक्रादयः स्तुति मंत्र जगत में एक ऐसी सिद्धिदायक अमोघ विद्या है जो कभी खाली नहीं जाती ! मेरा अनुभव है कि धन व ऐश्वर्य की इच्छा रखने वाला साधक पहले 'श्रीसूक्त' पढ़े । फिर शक्रादयः पढ़े, उसके बाद पुनः 'श्रीसूक्त' पढ़े तो इस सम्पुटित प्रयोग से लक्ष्मी उस साधक के घर में नित्य प्रति पूर्ण प्रसन्नता के साथ निवास करती है । शत्रु तथा रोगों का नाश करने में भी शक्रादयः स्तुति का हवानात्मक प्रयोग अनेक बार परिक्षित है जो कभी विफल नहीं जाता ।

इन्द्रादि देवताओं द्वारा देवी की स्तुति

ध्यानम्

ॐकालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्ती त्रिनेत्राम् ।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गांजयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥ 1 ॥

'ॐ' ऋषिरुवाच[1]

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये
तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या ।
तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ 2 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
निश्शेषदेवगण शक्तिसमूहमूर्त्या।
तामम्बिकामखिलदेव महर्षिपूज्यां
भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सानः ॥3॥
यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च।
सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
नाशाय चाशुभयस्य मतिं करोतु ॥4॥
या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥5॥

सिद्धि की इच्छा रखने वाले पुरुष जिनकी सेवा करते हैं तथा देवता जिन्हें सब ओर से घेरे रहते हैं, उन 'जया' नामवाली दुर्गादेवी का ध्यान करें। उनके श्रीअङ्गों की आभा काले मेघ के समान श्याम है। वे अपने कटाक्षों से शत्रुसमूह को भय प्रदान करती हैं, उनके मस्तक पर आबद्ध चंद्रमा की रेखा शोभा पाती है। वे अपने हाथ में शङ्ख, चक्र, कृपाण और त्रिशूल धारण करती हैं। उनके तीन नेत्र हैं। वे सिंह के कंधे पर चढ़ी हुई हैं और अपने तेज से तीनों लोकों को परिपूर्ण कर रही हैं।

ऋषि कहते हैं— ॥1॥ अत्यंत पराक्रमी दुरात्मा महिषासुर तथा उसकी दैत्य सेना के देवी के हाथ से मारे जाने पर इंद्र आदि देवता प्रणाम के लिए गर्दन तथा कंधे झुकाकर उन भगवती दुर्गा का उत्तम वचनों द्वारा स्तवन करने लगे। उस समय उनके सुन्दर अङ्गों में अत्यंत हर्ष के कारण रोमाञ्च हो आया था ॥2॥ देवता बोले—संपूर्ण देवताओं की शक्ति का समुदाय ही जिनका स्वरूप है तथा जिन देवी ने अपनी शक्ति से संपूर्ण जगत् को व्याप्त कर रखा है, समस्त देवताओं और महर्षियों की पूजनीय उन जगदम्बा को हम भक्तिपूर्वक नमस्कार करते हैं। वे हम लोगों का कल्याण करें ॥3॥ जिनके अनुपम प्रभाव और बल का वर्णन करने में भगवान शेषनाग, ब्रह्माजी तथा महादेवी जी भी समर्थ नहीं हैं, वे भगवती चंडिका सम्पूर्ण जगत का पालन एवं अशुभ भय का नाश करने का विचार करें ॥4॥

---

1. किसी-किसी प्रति में 'ऋषिरुवाच' के बाद 'ततःसुरगणाः सर्वे देव्या इन्द्र पुरोगमाः। स्तुतिमारेभिरे कर्तु निहते महिषासुरे ॥' इतना पाठ अधिक है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किं वर्णयाम तव रूपमन्चित्यमेतत्
किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि।
किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि
सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ 6 ॥
हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ 7 ॥
यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि।
स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
रुच्चार्य से त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥ 8 ॥
या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्वं-
मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः।
मोक्षार्थिभिर्मुनि भिरस्तसमस्तदोषै-
र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ॥ 9 ॥

जो पुण्यात्माओं के घरों में स्वयं ही लक्ष्मी रूप से, पापियों के यहां दरिद्रतारूप से, शुद्ध अंतःकरणो वाले पुरुषों के हृदय में बुद्धिरूप से, सत्पुरुषों में श्रद्धा रूप से तथा कुलीन मनुष्य में लज्जा रूप से निवास करती हैं, उन आप भगवती दुर्गा को हम नमस्कार करते हैं। देवी ! संपूर्ण विश्व का पालन कीजिए ॥ 5 ॥

देवी ! आपके इस अचिंत्यरूप का, असुरों का नाश करने वाले भारी पराक्रम का तथा समस्त देवताओं और दैत्यों के समक्ष युद्ध में प्रकट किए हुए आप के अद्भुत चरित्रों का हम किस प्रकार वर्णन करें ॥ 6 ॥ आप संपूर्ण जगत की उत्पत्ति में कारण हैं। आप में सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण—ये तीनों गुण मौजूद हैं, तो भी दोषों के साथ आपका संसर्ग नहीं जान पड़ता। भगवान विष्णु और महादेवजी आदि देवता भी आपका पार नहीं पाते। आप ही सबका आश्रय हैं। यह समस्त जगत आपका अंशभूत है; क्योंकि आप सबकी आदिभूत अव्याकृता पराप्रकृति हैं ॥ 7 ॥ देवि ! संपूर्ण यज्ञों में जिसके उच्चारण से सब देवता तृप्ति लाभ करते हैं, वह स्वाहा आप ही हैं। इसके अतिरिक्त आप पितरों की भी तृप्ति का कारण हैं, अतएव सब लोग आपको स्वधा भी कहते हैं ॥ 8 ॥ देवि ! जो मोक्ष की प्राप्ति का साधन है, अचिंत्य महाव्रतस्वरूपा है, समस्त दोषों से रहित, जितेंद्रिय, तत्त्व को ही सार वस्तु मानने वाले तथा मोक्ष की अभिलाषा रखने वाले मुनिजन जिसका अभ्यास करते हैं। वह भगवती परा विद्या आप ही हैं ॥ 9 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-
मुदिगथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम्।
देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
वार्त्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ॥ 10 ॥
मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा।
श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा
गौरी त्वमेव शशि मौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ 11 ॥
ईपत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र-
विम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम्।
अत्यद्भुतं प्रहतमात्तरुषा तथापि
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ 12 ॥
दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकराल-
मुद्यच्छशाङ्कसहृशच्छवि यन्न सद्यः।
प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥ 13 ॥

आप शब्दस्वरूपा हैं, अत्यंत निर्मल ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा उद्गीथ के मनोहर पदों के पाठ से युक्त सामवेद का भी आधार आप ही हैं। आप देवी, त्रयी (तीनों वेद) और भगवती (छःहों ऐश्वर्यो से युक्त) हैं। इस विश्व की उत्पत्ति एवं पालन के लिए आप ही वार्ता (खेती एवं आजीविका) के रूप में प्रकट हुई। आप संपूर्ण जगत की घोर पीड़ा का नाश करने वाली हैं ॥ 10 ॥

देवि ! जिससे समस्त शास्त्रों के सार का ज्ञान होता है, वह मेधा शक्ति आप ही हैं। दुर्गम भवसागर से पार उतारने वाली नौकारूप दुर्गा देवी भी आप ही हैं। आप की कहीं भी आसक्ति नहीं है। कैटभ के शत्रु भगवान विष्णु के वक्षःस्थल में एकमात्र निवास करने वाली भगवती लक्ष्मी तथा भगवान चंद्रशेखर द्वारा सम्मानित गौरीदेवी भी आप ही हैं ॥ 11 ॥ आपका मुख मंद मुस्कान से शोभित, निर्मल, पूर्ण चंद्रमा के बिंब का अनुकरण करने वाला और उत्तम सुवर्ण की मनोहर कांति से कमनीय है, तो भी उसे देखकर महिषासुर को क्रोध हुआ और सहसा उसने उस पर प्रहार कर दिया, यह बड़े आश्चर्य की बात है ॥ 12 ॥ देवि ! वही मुख जब क्रोध से युक्त होने पर उदयकाल के चंद्रमा की भांति लाल और तनी हुई भौंहों के कारण विकराल हो उठा, तब उसे देखकर जो महिषासुर के प्राण तुरंत नहीं निकल गए, यह उससे भी बढ़कर आश्चर्य की बात है; क्योंकि क्रोध में भरे हुए यमराज को देखकर भला कौन जीवित रह सकता है ॥ 13 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देवि प्रसीद परमा भवती भवाय
सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
न्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥ 14 ॥
ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः।
धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ 15 ॥
धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृति करोति।
स्वर्ग प्रयाति च ततो भवतीप्रसादा-
ल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥ 16 ॥
दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥ 17 ॥

देवि ! आप प्रसन्न हों। परमात्मस्वरूपा आप के प्रसन्न होने पर जगत का अभ्युदय होता है और क्रोध में भर जाने पर तत्काल ही कितने कुलों का सर्वनाश कर डालती हैं, यह बात अभी अनुभव में आयी है; क्योंकि महिषासुर की यह विशाल सेना क्षणभर में आप के कोप से नष्ट हो गयी है ॥ 14 ॥

सदा अभ्युदय प्रदान करने वाली आप जिन पर प्रसन्न रहती हैं, वे ही देश में सम्मानित हैं; उन्हीं को धन और यश की प्राप्ति होती है, उन्हीं का धर्म कभी शिथिल नहीं होता तथा वे ही अपने हृष्ट-पुष्ट स्त्री-पुत्र और भृत्यों के साथ धन्य माने जाते हैं ॥ 15 ॥ देवि ! आप की कृपा से पुण्यात्मा पुरुष प्रतिदिन अत्यंत श्रद्धापूर्वक सदा सब प्रकार के धर्मानुकूल कर्म करता है और उसके प्रभाव से स्वर्ग लोक में जाता है, इसलिए आप तीनों लोकों में निश्चय ही मनोवाञ्छित फल देने वाली हैं ॥ 16 ॥ मां दुर्गे ! आप स्मरण करने पर सब प्राणियों का भय हर लेती हैं और स्वस्थ पुरुषों द्वारा चिंतन करने पर उन्हें परम कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं। दुःख, दरिद्रता और भय हरने वाली देवि ! आपके सिवा दूसरी कौन है, जिसका चित्त सबका उपकार करने के लिए सदा ही दयार्द्र रहता हो ॥ 17 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिंराय पापम्।
संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि॥ 18 ॥
सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम्।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी॥ 19 ॥
खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः
शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशाऽसुराणाम्।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड-
योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत्॥ 20 ॥
दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं
रूपं तथैतदविन्चित्यमतुल्यमन्यैः।
वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम॥ 21 ॥

देवि ! इन राक्षसों के मारने से संसार को सुख मिले तथा ये राक्षस चिरकाल तक नरक में रहने के लिए भले ही पाप करते रहे हों, इस समय संग्राम में मृत्यु को प्राप्त होकर स्वर्ग लोक में जाएं— निश्चय ही यही सोचकर आप शत्रुओं का वध करती हैं ॥18 ॥ आप शत्रुओं पर शस्त्रों का प्रहार क्यों करती हैं ? समस्त असुरों को दृष्टिपात मात्र से ही भस्म क्यों नहीं कर देतीं ? इसमें एक रहस्य है । ये शत्रु भी हमारे शस्त्रों से पवित्र होकर उत्तम लोकः में जाएं—इस प्रकार उनके प्रति भी आपका विचार अत्यंत उत्तम रहता है ॥ 19 ॥ खड्गके तेजःपुञ्ज की भयंकर दीप्ति से तथा आपके त्रिशूल के अग्रभाग की घनीभूत प्रभा से चौंधिया कर जो असुरों की आंखें फूट नहीं गयीं, उसमें कारण यही था कि वे मनोहर रश्मियों से युक्त चंद्रमा के समान आनंद प्रदान करने वाले आपके इस सुंदर मुख का दर्शन करते थे ॥ 20 ॥ देवि ! आपका शील दुराचारियों के बुरे बर्ताव को दूर करने वाला है । साथ ही यह रूप ऐसा है, जो कभी चिंतन में भी नहीं आ सकता और जिसकी कभी दूसरों से तुलना भी नहीं हो सकती तथा आपका बल और पराक्रम तो उन दैत्यों का भी नाश करने वाला है; जो कभी देवताओं के पराक्रम को नष्ट कर चुके थे । इस प्रकार आपने शत्रुओं पर भी अपनी दया ही प्रकट की है ॥ 21 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र।
चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥ 22 ॥
त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा।
नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥ 23 ॥
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ 24 ॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ 25 ॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ 26 ॥
खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान रक्ष सर्वतः ॥ 27 ॥

वरदायिनी देवि ! आपके इस पराक्रम की किसके साथ तुलना हो सकती है तथा शत्रुओं को भय देने वाला एवं अत्यंत मनोहर ऐसा रूप भी आपके सिवा और कहां है ? हृदय में कृपा और युद्ध में निष्ठुरता—ये दोनों बातें तीनों लोकों के भीतर केवल आपमें ही देखी गयी हैं ॥ 22 ॥ मातः ! आपने शत्रुओं का नाश करके इस समस्त त्रिलोक की रक्षा की है । उन शत्रुओं को भी युद्ध भूमि में मारकर स्वर्ग लोक में पहुंचाया है तथा उन्मत्त दैत्यों से प्राप्त होने वाले हम लोगों के भय को भी दूर कर दिया है, आपको हमारा नमस्कार है ॥ 23 ॥

देवि ! आप शूल से हमारी रक्षा करें । अम्बिके ! खड्ग से भी हमारी रक्षा करें तथा घंटा की ध्वनि और धनुष की टंकार से भी आप हम लोगों की करें ॥ 24 ॥ चंडिके ! पूर्व, पश्चिम और दक्षिण दिशा में आप हमारी रक्षा करें तथा ईश्वरि ! अपने त्रिशूल को घुमाकर आप उत्तर दिशा में भी हमारी रक्षा करें ॥ 25 ॥ तीनों लोकों में आपके जो परम सुंदर एवं अत्यंत भयंकर रूप विचरते रहते हैं, उनके द्वारा भी आप हमारी तथा इस भूःलोक की रक्षा करें ॥ 26 ॥ अंबिके ! आपके करपल्लवों में शोभा पाने वाले खड्ग, शूल और गदा आदि जो-जो अस्त्र हों, उन सबके द्वारा आप सब ओर से हम लोगों की रक्षा करें ॥ 27 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऋषिरुवाच ॥28 ॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।
अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥ 29 ॥
भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता ।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥ 30 ॥

देव्युवाच ॥31 ॥

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥ 32 ॥

देवा ऊचुः ॥ 33 ॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किंचिदवशिष्यते ॥ 34 ॥
यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ।
यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि ॥ 35 ॥
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ।
यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥ 36 ॥
तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम् ।
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ 37 ॥

ऋषि कहते हैं— ॥ 28 ॥ इस प्रकार जब देवताओं ने जगन्माता दुर्गा की स्तुति की और नंदन वन के दिव्य पुष्पों एवं गंध-चंदन आदि के द्वारा उनका पूजन किया, फिर सबने मिलकर जब भक्तिपूर्वक दिव्य धूपों की सुगंध निवेदन की, तब देवी ने प्रसन्नवदन होकर प्रणाम करते हुए सब देवताओं से कहा— ॥ 29-30 ॥

देवी बोलीं— ॥ 31 ॥ देवताओ ! तुम सब लोग मुझसे जिस वस्तु की अभिलाषा रखते हो, उसे मांगो ॥ 32 ॥

देवता बोले— ॥ 33 ॥ भगवती ने हमारी इच्छा पूर्ण कर दी, अब कुछ भी बाकी नहीं है ॥ 34 ॥ क्योंकि हमारा यह शत्रु महिषासुर मारा गया । महेश्वरि ! इतने पर भी यदि आप हमें और वर देना चाहती हैं ॥ 35 ॥ तो हम जब-जब आपका स्मरण करें, तब-तब आप दर्शन देकर हम लोगों के महान संकट दूर कर दिया करें तथा प्रसन्न मुखी अम्बिके ! जो मनुष्य इन स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करे उसे वित्त, समृद्धि, और वैभव देने के साथ ही उसकी धन और स्त्री आदि सम्पत्ति को भी बढ़ाने के लिए आप सदा हम पर प्रसन्न रहें ॥ 36-37 ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऋषिरुवाच ॥38 ॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥ 39 ॥
इत्येतत्कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा ।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥ 40 ॥
पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भुता यथाभवत् ।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः ॥ 41 ॥
रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं यथावत्कथयामि ते ॥ह्रींॐ । 42 ।

।इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये ।
शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोध्यायः ॥ 4 ॥
उवाच 5, अर्धश्लोकौ 2, श्लोकाः35,
एवम् 42, एवमादितः259 ॥

ऋषि कहते हैं— ॥38 ॥ राजन ! देवताओं ने जब अपने तथा जगत के कल्याण के लिए भद्रकाली देवी को इस प्रकार प्रसन्न किया तब वे 'तथास्तु' कहकर वहीं अंतर्धान हो गयीं ॥39 ॥ भूपाल ! इस प्रकार पूर्वकाल में तीनों लोकों का हित चाहने वाली देवी जिस प्रकार देवताओं के शरीर से प्रकट हुई थी, वह सब कथा मैंने कह सुनायी ॥40 ॥ अब पुनः देवताओं का उपकार करने वाली वे देवी दुष्ट दैत्यों तथा शुम्भ-निशुम्भ का वध करने एवं सब लोकों की रक्षा करने के लिए गौरी देवी के शरीर से जिस प्रकार प्रकट हुई थीं, वह सब प्रसङ्ग मेरे मुंह से सुनो । मैं उसका तुम से यथावत वर्णन करता हूं ॥41-42 ॥

इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराण में सावर्णिक मंवंतर की कथा के अंतर्गत
देवीमाहात्म्य में 'शक्रादिस्तुति' नामक चौथा अध्याय
पूरा हुआ ॥4 ॥

---

1. पा०—पैः सुधूपिता । 2. मार्कंडेयपुराण की आधुनिक प्रतियों में— 'ददाम्यहमतिप्रीत्या स्तवैभिः सुपूजिता ।' इतना पाठ अधिक है। किसी-किसी प्रति में 'कर्तव्यमपरं यच्च दुष्करं तत्र विद्यहे ! इत्याकर्ण्य वचो दव्याः प्रत्यूचुस्ते दिवौकसः ॥ ' इतना और अधिक पाठ है ।

किसी-किसी प्रति में 'गौरीदेहा सा' इत्यादि पाठ भी उपलब्ध होते हैं ।

Ac. No

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पं. भोजराज द्विवेदी

50/-

डायमंड पाकेट बुक्स

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu